❑
सम्पादक मण्डल
डॉ. किरनचन्द नाहटा, एम.ए. (हिन्दी), पीएच.डी.
श्री उदय नागोरी, एम.ए. (दर्शन), जै.सि. प्रभाकर
श्री जानकीनारायण श्रीमाली, एम.ए.,एलएल.बी.,बी.एड.

❑
लोकार्पण
१ मई, १९९४

❑
प्रकाशक
स्वर्ण जयन्ती समारोह समिति,
श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर (बीकानेर)-३३४४०३

❑
आवरण
शनील आर्ट स्टूडियो, बीकानेर

❑
मुद्रक
सांखला प्रिन्टर्स, सुगन निवास, चन्दन सागर
बीकानेर-३३४००१

सम्पादकीय

भगवान महावीर को परिनिर्वाण प्राप्त किये आज २५०० वर्ष से भी अधिक समय व्यतीत हो गया है। तब से आज तक उनकी सर्वकल्याणी वाणी जन-जन का मार्गदर्शन कर रही है। इस दीर्घावधि में उनकी विचार-परम्परा को अनेक प्रभावी आचार्यों ने अपने तप, तेज, स्वाध्याय और साधना से सतत प्रवाहमान रखा है। 'हां', समय के प्रभाव से यह प्रवाह कहीं मंद-मंथर हुआ है तो कहीं किंचित् छिन्न-भिन्न भी; किन्तु यह सौभाग्य की बात है कि इस परम्परा में समय-समय पर ऐसे क्रान्ति-दर्शी आचार्य होते रहे हैं जिन्होंने अपनी विमल प्रज्ञा से इस विचार-प्रवाह को शिथिल करने वाली बातों को पहचाना और दृढ़ इच्छा-शक्ति से उनका परिहार किया। उन्हीं आचार्यों के सद्प्रयासों से यह पावन-प्रवाह पुनः पुनः अपने शुद्ध रूप में प्रतिष्ठित होता रहा है। ऐसे ही यशस्वी आचार्यों की परम्परा में एक प्रमुख आचार्य हुए हैं श्रीमद् जवाहराचार्य। वे प्रज्ञा-सम्पन्न एवं निर्मल विवेक वाले आचार्य थे। सकारात्मक चिन्तन और रचनात्मक दृष्टि के कारण वे अपने युग के अन्यान्य जैनाचार्यों से भिन्न दृष्टिगत होते हैं। अपनी क्रान्तिकारी स्थापनाओं के कारण उन्होंने अपनी एक विशिष्ट पहचान बनाई है। उनकी पावन-स्मृति को चिरस्थायी बनाने की दृष्टि से ही उनके स्वर्गारोहण के बाद जवाहर विद्यापीठ, भीनासर की स्थापना की गयी। यह संस्थान अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूर्ण कर स्वर्ण जयन्ती मना रहा है। इस स्मारिका का प्रकाशन इसी उपलक्ष्य में किया जा रहा है।

प्रस्तुत स्मारिका में उस महामनीषी के प्रेरक जीवन और स्पृहणीय व्यक्तित्व की एक झलक भर प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है। स्मारिका तीन खण्डों में विभाजित है। प्रथम खण्ड में जवाहराचार्य के व्यक्तित्व एवं कर्तृत्व पर प्रकाश डाला गया है। इस हेतु इस खण्ड को कई अध्यायों में विभाजित किया गया है। प्रथम अध्याय 'जीवन-गाथा' में आचार्य प्रवर के यशस्वी जीवन का संक्षिप्त इतिवृत्त प्रस्तुत किया गया है। 'सृजन' शीर्षक द्वितीय अध्याय में आचार्यश्री के उद्बोधक उपदेशों में से बानगी रूप में केवल तीन व्याख्यान लिये गये हैं। ये व्याख्यान उस युगचेता आचार्य के मौलिक चिन्तन, उदार सामाजिक सोच और प्रखर राष्ट्रभक्ति को रेखांकित करते हैं। साथ ही आचार्य श्री के विपुल साहित्य से चयनित कतिपय सूक्तियां भी प्रस्तुत की गई हैं। इसी अध्याय में आचार्य श्री की काव्य प्रतिभा का परिचय देने वाली कृति 'सती मदन रेहा' को भी सम्मिलित किया गया है। तृतीय अध्याय 'भावांजलि' में श्री जवाहराचार्य के सजल-करुण व्यक्तित्व के प्रति काव्यमय प्रणति निवेदित की गयी है। चतुर्थ अध्याय 'गवाक्ष' में बहुआयामी प्रतिभा के धनी आचार्य श्री जवाहरलालजी

के जीवन और दर्शन को समझने-समझाने का उपक्रम अनेक प्रबुद्ध लेखकों द्वारा विविध लेखों के माध्यम से किया गया है।

स्मारिका के द्वितीय खण्ड में 'श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर' के संस्थापक सदस्यों—स्व. भैरोंदानजी सेठिया एवं स्व. चम्पालालजी बांठिया—की रचनात्मक वृत्तियों तथा समाजोपयोगी प्रवृत्तियों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। इस परिचय के अनन्तर विगत ५० वर्षों की संस्था की गतिविधियों और उपलब्धियों की जानकारी भी दी गयी है। तृतीय खण्ड विज्ञापन-खण्ड है।

सम्पादक मण्डल स्मारिका हेतु आलेख एवं कविताएं भेजने वाले लेखकों/रचनाकारों के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता है साथ ही अर्थ सहयोगियों एवं विज्ञापनदाताओं के प्रति भी आभार प्रदर्शित करता है। इसी क्रम में सांखला प्रिण्टर्स, बीकानेर के व्यवस्थापक श्री दीपचन्द सांखला का उल्लेख विशेष रूप से करना चाहेंगे जिन्होंने अत्यन्त अल्प समय में कई प्रकार की प्रतिकूल स्थितियों के बावजूद भी बड़ी तत्परता से एवं बड़े आकर्षक रूप में इस स्मारिका को प्रकाशित किया है। एतदर्थ इनके आभारी हैं। यहां हिन्दी, राजस्थानी एवं जैन साहित्य के अनन्य विद्वान डॉ. नरेन्द्र भानावत के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करना भी अप्रासंगिक नहीं है, जिन्होंने स्मारिका की परिकल्पना की थी परन्तु असामयिक एवं आकस्मिक निधन हो जाने से इसे मूर्त रूप न दे सके।

पुनश्च आभार उन सभी ज्ञात-अज्ञात सहयोगियों के प्रति जो किसी भी रूप में इस नयनाभिराम प्रकाशन के सहयोगी बने हैं।

१ मई, १९९४

डॉ. किरनचन्द नाहटा
उदय नागोरी
जानकीनारायण श्रीमाली

अनुक्रम

संस्थापक परिचय

संस्था परिचय

अर्थ सहयोगी

विज्ञापन

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर के रजिस्ट्रेशन के प्रमाण-पत्र

GOVERNMENT OF RAJASTHAN

No. 58/1953-54

I hereby certify that SHREE JAWAHAR VIDYA PEETH, BHINASAR (RAJASTHAN) has this day been registered under the Societies Registration Act, 1860.

Given under my hand at Jaipur this Nineteenth day of December, One Thousand Nine Hundred Fifty Three.

REGISTRAR,
JOINT STOCK COMPANIES,
RAJASTHAN, JAIPUR.

It is hereby certified that the Public Trust described below has this day been duly registered under the Rajasthan Public Trust Act, 1959 (42 of 1959) at the Office of the Assistant Devasthan Commissioner, Jodhpur. Name of the Public Trust Shri Jawahar VidyaPeeth Bhinasar. Number in the register of Public Trust is 12. Certificate issued to Shri Champalal Banthia.

Given under my hand this 21st day of February, 1963.

Sd-
Assistant Commissioner,
Devasthan Department Rajasthan
Jodhpur & Bikaner Division, JODHPUR

आयकर अधिनियम, १९६१ की धारा ८० जी के अधीन छूट का प्रमाण-पत्र

क्रमांक/जे.सी.३/८०-जी/बीकानेर-१६३/६३-६४/२४८८

भारत सरकार
आयकर आयुक्त कार्यालय,
जोधपुर, दिनांक : १५/२/६४

सेवा में,

सचिव

श्री जवाहर विद्यापीठ

पो. भीनासर, बीकानेर (राज.)

महोदय,

विषय : आयकर अधिनियम, १९६१ की धारा ८०-जी के अधीन छूट १-४-६२ से ३१-३-६५

१. कृपया आप द्वारा आयकर आयुक्त, जोधपुर को सम्बोधित आवदेन-पत्र दिनांक ३१-१२-६२ का अवलोकन करें।

२. दानदाताओं द्वारा श्री जवाहर विद्यापीठ पो. भीनासर बीकानेर (राज.) को दिये गये दान आयकर अधिनियम १९६१ (की ४३) की धारा ८०-जी के अधीन उक्त धारा में विहित सीमाओं तथा शर्तों के साथ आयकर से छूट के योग्य होंगे।

३. यह छूट दिनांक १-४-६२ से ३१-३-६५ को समाप्त वर्ष के सम्बन्ध में कर निर्धारण वर्ष ६३-६४ से ६५-६६ तक के लिए मान्य होगी।

भवदीय

आयकर आयुक्त, जोधपुर

'जवाहर मार्ग' नामकरण की घोषणा का आज्ञा पत्र

कार्यालय नगर परिषद् बीकानेर (राजस्थान)

आज्ञा

बीकानेर नगर के भीनासर प्रवेश स्थल से जवाहर हाई स्कूल तक के मार्ग का नाम जवाहर मार्ग किए जाने के प्रस्ताव पर गंभीरता-पूर्वक विचार एवं जांच किए जाने के उपरांत राजस्थान नगरपालिका अधिनियम १९५९ की धारा १९७ के अन्तर्गत प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करते हुए भीनासर प्रवेश स्थल से जवाहर हाई स्कूल तक के मार्ग का नाम एतद् द्वारा जवाहर मार्ग घोषित किया जाता हैं।

भविष्य में भीनासर प्रवेश स्थल से जवाहर हाई स्कूल तक के मार्ग को जवाहर मार्ग के नाम से जाना पहचाना जावेगा।

आज्ञा से

आयुक्त, नगर परिषद्, बीकानेर

क्रमांक/निर्माण/६४/४५३५-४६

२७ अप्रेल, १९६४

सन्देश

श्री वलिराम भगत

एन. आर. भसीन
SECRETARY TO GOVERNOR
RAJASTHAN, JAIPUR

महामहिम राज्यपाल महोदय को यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर (बीकानेर) द्वारा त्रि-दिवसीय स्वर्ण जयंती महोत्सव मनाया जा रहा है तथा स्वर्ण जयंती स्मारिका एवं संस्था के संस्थापक सेठ चम्पालाल बांठिया की स्मृति में ग्रंथ का प्रकाशन किया जा रहा है।

विद्यापीठ समाज सेवा के कार्यों से जुड़ी हुई है। किसी भी संस्था की स्वर्ण जयंती उसकी सफलता की दास्तान स्वयं कह देती है।

महामहिम की ओर से आपके इस शुभ अवसर पर हार्दिक शुभकामनायें।

— एन. आर. भसीन

श्री भैरोंसिंह जी शेखावत

बी.पी. मंत्री
विशेषाधिकारी एवं पीपीएस., मुख्य मंत्री
मुख्य मंत्री कार्यालय, राजस्थान सरकार,
जयपुर (राजस्थान)

माननीय मुख्यमंत्री महोदय को सम्बोधित आपका पत्र दिनांक १६-२-६४ का प्राप्त हुआ। आपने माननीय मुख्य मंत्री महोदय को विद्यापीठ के स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर विशिष्ट अतिथि एवं जयन्ती के अवसर पर संस्थापक सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति ग्रंथ का विमोचन का अनुरोध किया है। धन्यवाद।

निदेशानुसार लेख है कि माननीय मुख्य मंत्री महोदय पूर्व निर्धारित कार्यक्रमों के कारण समारोह में सम्मिलित होने में असमर्थ रहेंगे। वे समारोह की सफलता की कामना करते हैं।

—बी. पी. मंत्री
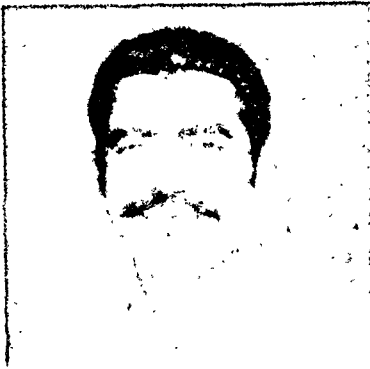
श्री देवीसिंह जी भाटी

विशिष्ट सहायक
मंत्री सिंचाई एवं इन्दिरा गांधी नहर
परियोजना विभाग, राजस्थान सरकार
जयपुर

आपके पत्र क्रमांक स्वर्ण १९९४/२१६ दिनांक १६-२-९४ के क्रम में निर्देशानुसार लेख है कि माननीय सिंचाई मंत्री श्री देवीसिंहजी भाटी ने आपकी संस्था के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव में दिनांक १-५-१९९४ को मुख्य अतिथि रूप में पधारने की स्वीकृति प्रदान कर दी। इस शुभ अवसर पर माननीय मंत्रीजी की ओर से हार्दिक शुभकामनाएँ स्वीकार करावें।

—विशिष्ट सहायक

डॉ. रामप्रताप
राज्यमंत्री, खाद्य एवं आपूर्ति आर्थिक एवं
सांख्यिकी विभाग
जयपुर (राजस्थान)

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि श्री जवाहर विद्यापीठ अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूर्ण कर चुकी है। इस सुअवसर पर स्वर्ण जयन्ती महोत्सव में मुझे आपने विशिष्ट अतिथि के रूप में आमन्त्रित किया, इसके लिये मैं आपका आभारी हूँ।

मैं आपकी संस्था के महोत्सव की सफलता हेतु अपनी शुभकामनाएं प्रेषित करता हूँ और कामना करता हूँ कि संस्था निरन्तर उन्नति की ओर अग्रसर हो।

—डॉ. रामप्रताप

गुमानमल चोरड़िया
पूर्व अध्यक्ष
श्री अ. भा. साधुमार्गी जैन संघ
जयपुर

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर अपने यशस्वी कार्यकाल के ५० वर्ष पूर्ण कर ५१ वें वर्ष में प्रवेश कर रही है। यह अत्यन्त ही प्रमोद का विषय है कि इस उपलक्ष्य में त्रिदिवसीय स्वर्ण जयंती महोत्सव भव्य समारोहपूर्वक मनाया जा रहा है एवं साथ ही स्वर्ण जयन्ती स्मारिका का प्रकाशन करने का निर्णय लिया गया है।

मैं इस संस्था की गतिविधियों से पिछले काफी वर्षों से परिचित हूँ। इस विद्यापीठ की स्थापना भीनासर के सेठ श्री चम्पालालजी सा. बांठिया के अथक प्रयासों एवं समाज के सहयोग से दिनांक २६-४-१६४४ को हुई थी। सीमित साधनों के होते हुए भी इस संस्था ने अपने ५० वर्षों के कार्यकाल में संस्कार निर्माण, ज्ञान प्रसार एवं स्वावलम्बी जीवन यापन की दिशाओं में महत्त्वपूर्ण योगदान देते हुए श्रद्धास्पद एवं प्रभावक पूज्य आचार्य श्री जवाहर की शाश्वतवाणी को जन-जन तक पहुँचाने हेतु कृत संकल्प होकर जवाहर किरणावलियों के माध्यम से कीर्तिमान योग्य व अनूठा कार्य किया है। इस संस्था द्वारा संचालित छात्रावास से अनेक मूर्धन्य विद्वान, समाज सेवी, प्रबुद्ध साहित्यकार आज विभिन्न क्षेत्रों में सेवा कार्य में संलग्न हैं इसी के साथ यह संस्था अपने साथ सामाजिक, धार्मिक कार्यों को पूर्ण करने का उद्देश्य लेकर अविरल गति से आगे बढ़ रही है।

मैं इस पुनीत अवसर पर जिनशासन देव से यह कामना करता हूँ कि यह संस्था अपनी प्रवृत्तियों का निर्बाध गति से संचालन करती हुई अपने निर्धारित लक्ष्यों से भी अधिक उपलब्धि प्राप्त करे। इन्हीं शुभकामनाओं सहित।

—गुमानमल चोरड़िया
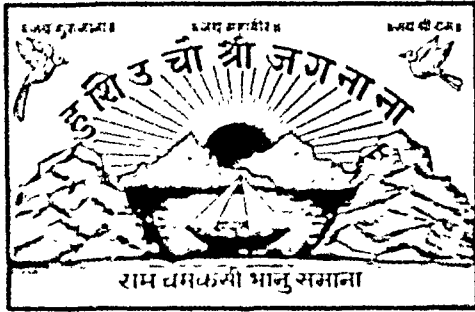
मोहनलाल भटेवरा
सचिव,
श्री साधुमार्गी जैन समिति,
समता भवन, कोटा-३२४००६

हमें अत्यन्त प्रसन्नता है कि श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर के अर्द्ध शताब्दी की पूर्णाहुति के अवसर पर युग प्रधान ज्योतिर्धर क्रान्तदर्शी सामाजिक, धार्मिक एवं राष्ट्रीय धाराओं से जुड़े आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. की ५० वीं स्वर्गारोहण तिथि पर स्वर्ण जयन्ती स्मारिका प्रकाशन होने जा रही है।

इस शुभ अवसर पर कोटा संघ की ओर से हार्दिक शुभकामना करते हैं।

—मोहनलाल भटेवरा

सोहनलाल कोचर
वरिष्ठ एडवोकेट
१८६ कैनिग स्ट्रीट
कलकत्ता-७०० ००१

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर के स्वर्ण जयन्ती महोत्सव पर मेरी शुभकामनायें।

स्थानकवासी परम्परा में आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब प्रख्यात विद्याप्रेमी थे एवं उन्हीं की प्रेरणा स्वरूप स्वनामधन्य श्री चम्पालाल जी साहब बांठिया ने पचास वर्ष पूर्व जैन धर्म की शिक्षा एवं दीक्षा के लिये इस विद्यापीठ की स्थापना की थी। उस समय भीनासर निस्सन्देह एंक छोटा-सा गांव रहा होगा अतः श्री बांठियाजी का प्रयास स्तुत्य है।. स्थानकवासी जैन समाज का अत्यन्त सराहनीय सहयोग मिला। लायब्रेरी एवं पुस्तक प्रकाशन का कार्य भली-भांति चल रहा है।

विद्यापीठ निरन्तर अपने कार्य में अग्रसर रहे, ऐसी कामना करता हूँ।

आप सबको इस अनुकरणीय प्रयास पर मेरा साधुवाद।

— सोहनलाल कोचर

चित्र-वीथी

प्रातःस्मरणीय परमप्रतापी जैनाचार्य पूज्यश्री १००८
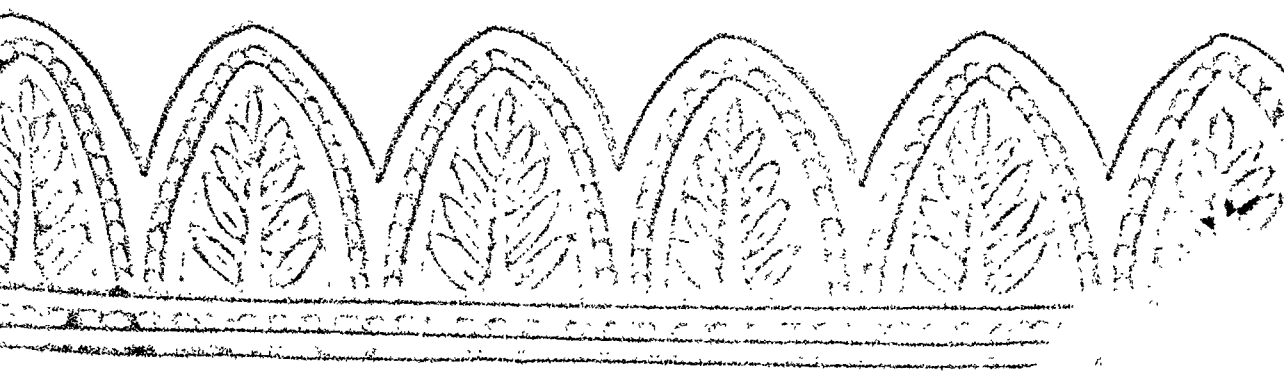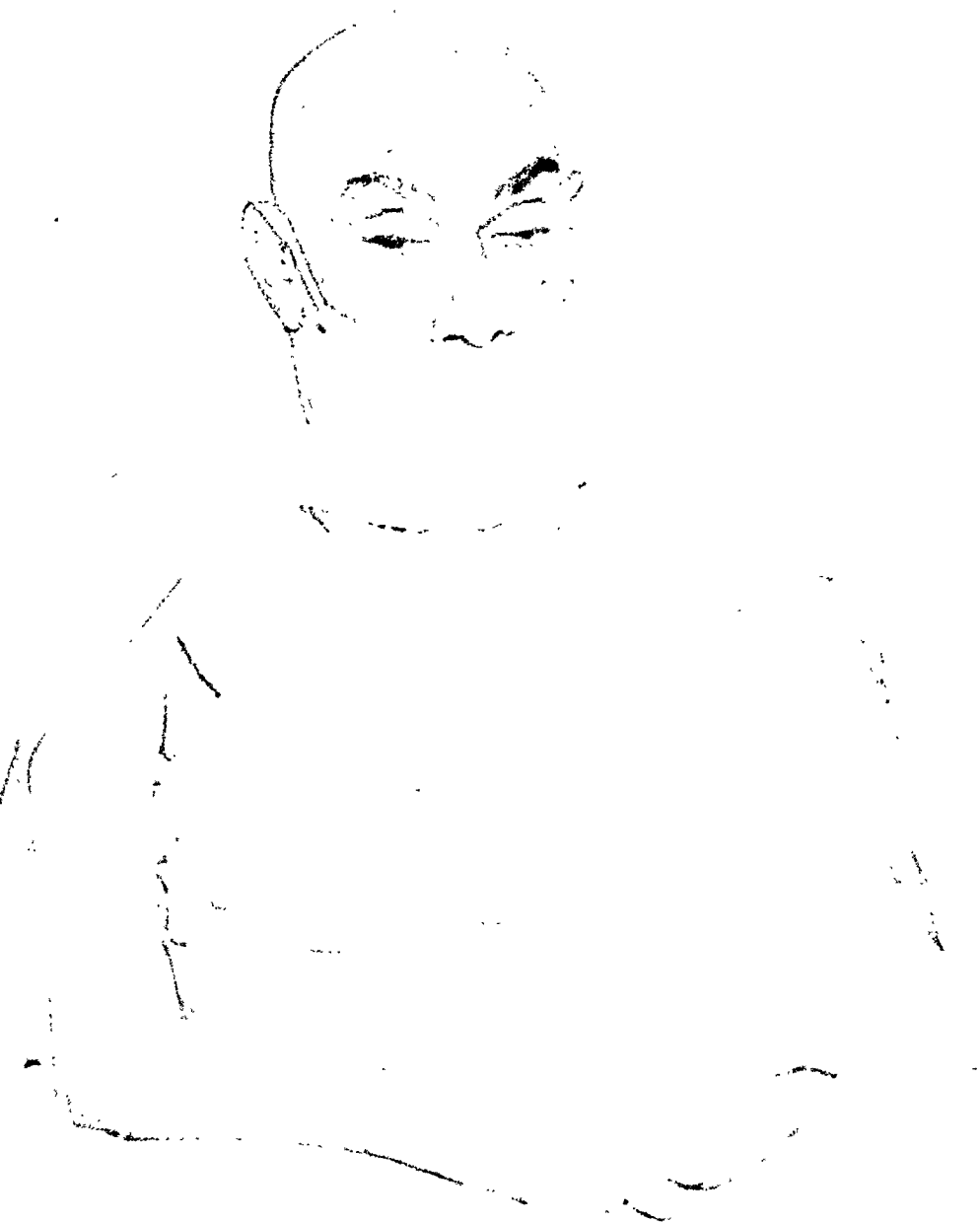
श्री जवाहर लालजी महाराज

संथारा सीझने के बाद
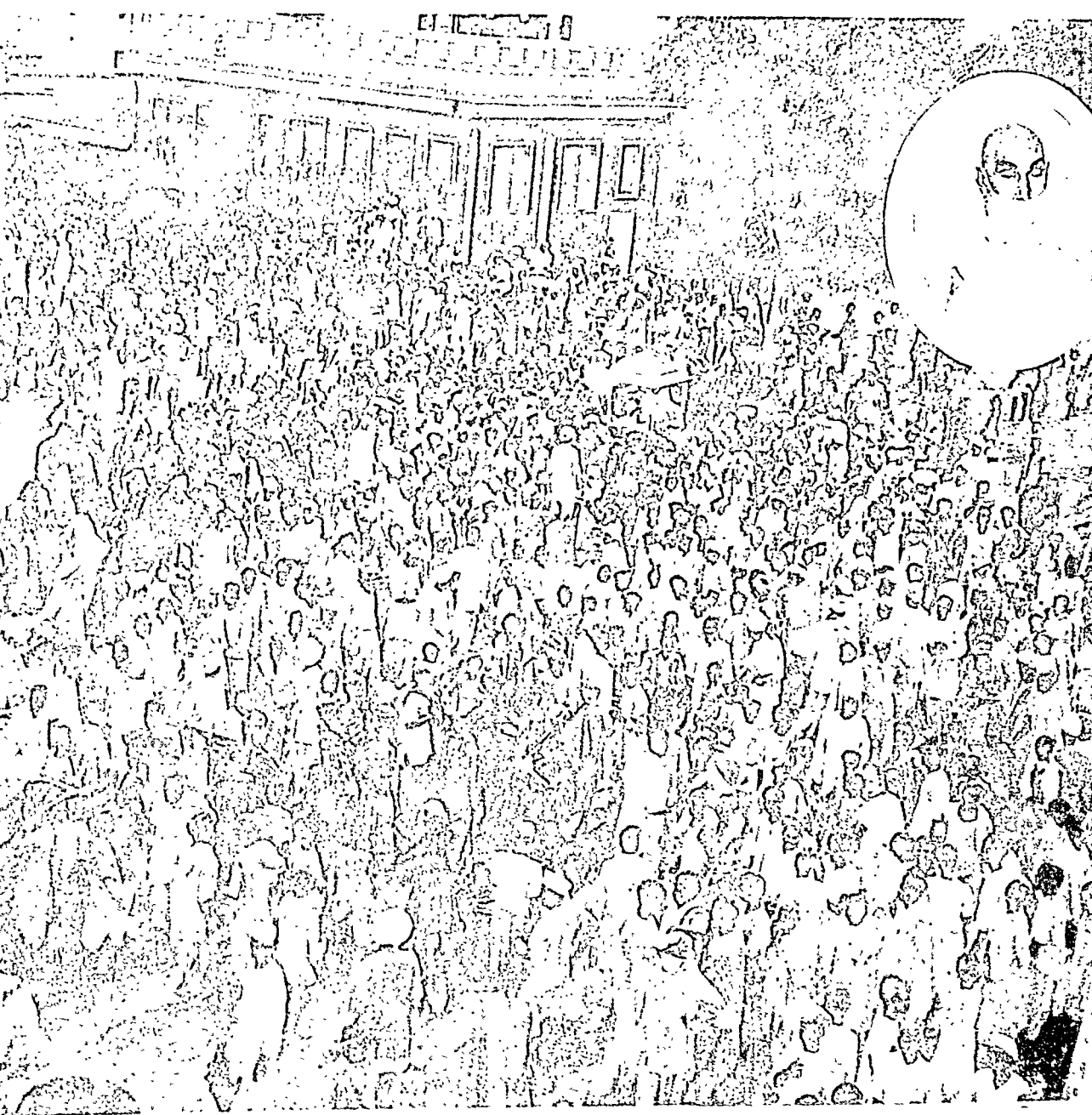
श्री जवाहर लालजी महाराज दाह क्रिया के लिए प्रस्थान

संस्थापक

स्वर्गीय सेठ श्रीमान् भैरूंदानजी सेठिया

संस्थापक
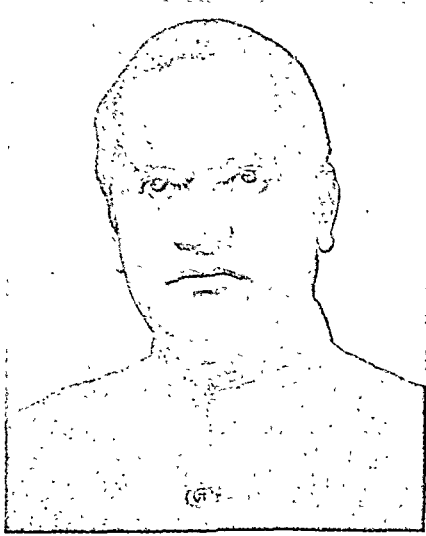
श्री रिखबचन्दजी बैद
संयोजक स्वर्ण जयन्ती समारोह समिति
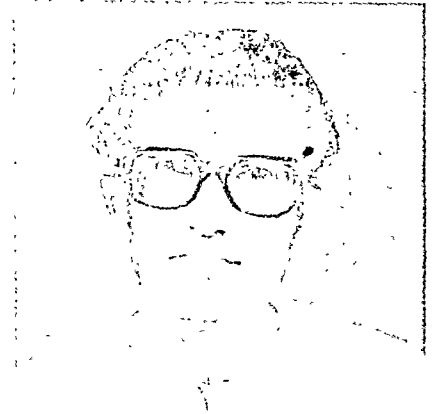
श्री भंवरलालजी कोठारी
स्वागताध्यक्ष स्वर्ण जयन्ती समारोह समिति

श्री जसकरणजी बोथरा

श्री सुमतिलालजी बांठिया

संस्था की वर्तमान प्रवृत्तियाँ

जवाहर पुस्तकालय एवं वाचनालय
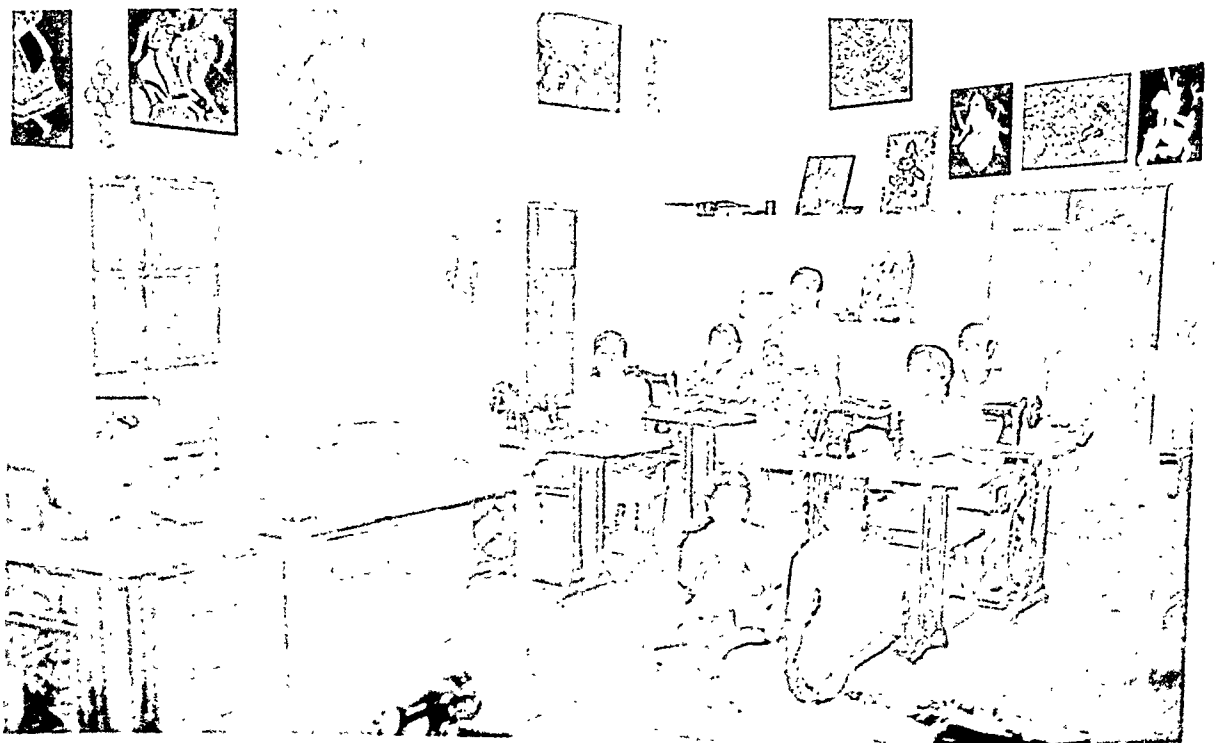
महिला सिलाई बुनाई कढ़ाई प्रशिक्षण केन्द्र

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर

उद्घाटन समारोह संवत् 2006

उद्घाटनकर्ता श्री इन्द्रचन्दजी गेलड़ा मद्रास के बीकानेर आगमन पर स्टेशन पर स्वागत करते हुए
बायें से—विद्यापीठ के छात्रगण, स्वागताध्यक्ष श्री जुगराजजी सेठिया, श्री जवाहरमलजी सेठिया, श्री इन्द्रचन्दजी गेलड़ा, श्री महावीर प्रसाद गुप्त एवं स्वागतमंत्री श्री चम्पालालजी बांठिया

उद्घाटन के अवसर पर मंच पर विराजित दाहिने से—वनेचन्द भाई दुर्लभजी, गुरांसा रामलालजी यति, श्री इन्द्रचन्दजी गेलड़ा, मुख्य अतिथि श्री सोहनलालजी दूगड़, श्रीमती सोहनलालजी दूगड़, पंडित शोभाचन्द्रजी भारिल्ल, श्री जुगराजजी सेठिया एवं सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया व उनका पुत्र धीरजलाल बांठिया

रविवार दिनांक 1 मई 1994

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव (मुख्य कार्यक्रम)
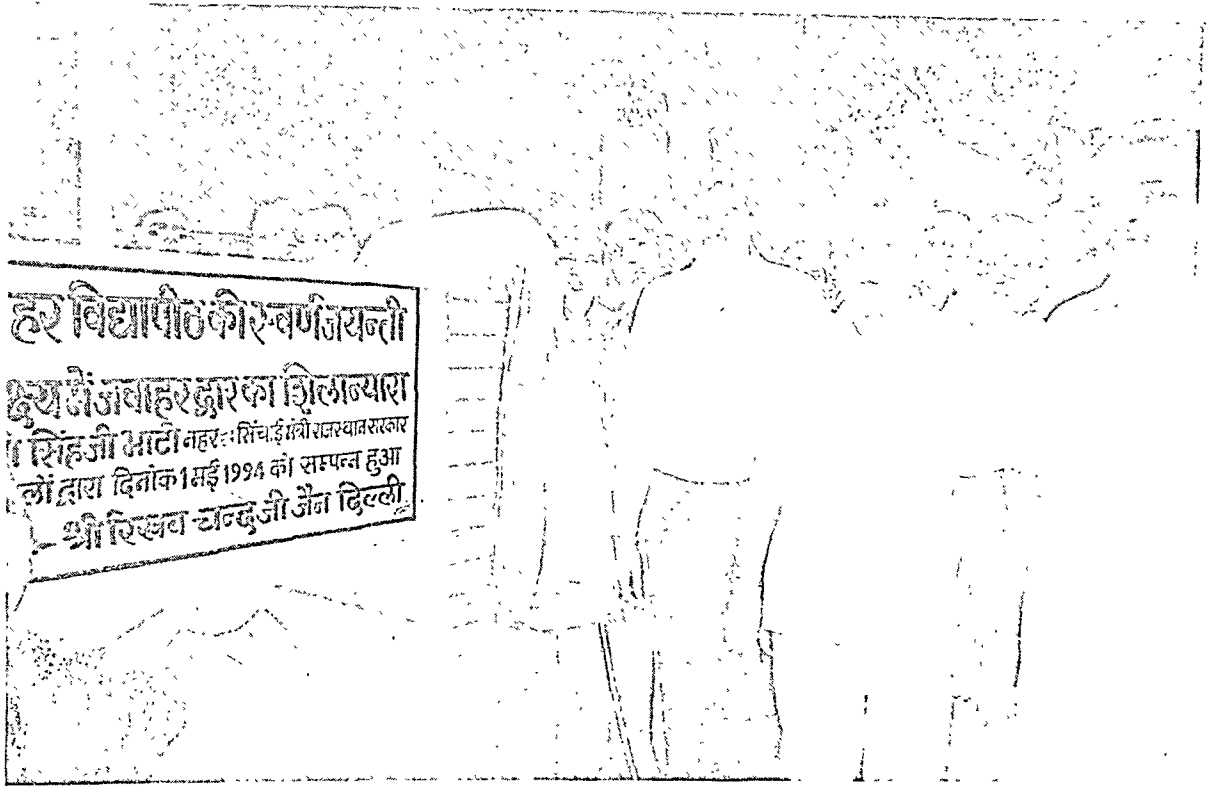
जवाहर द्वार का शिलान्यास करने के पश्चात् बायें से—विशिष्ट अतिथि डॉ. रामप्रतापजी खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति राज्यमंत्री, मुख्य अतिथि श्रीमान् देवीसिंहजी भाटी नहर एवं सिंचाई मंत्री राजस्थान सरकार, संस्था उपमंत्री श्री कोडामलजी बोथरा एवं संस्था मंत्री श्री सुमतिलालजी बांठिया।

सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति व्याख्यानमाला की विद्यालय स्तरीय प्रतियोगिता में प्रथम स्थान पर रही रामपुरिया विद्यानिकेतन की छात्रा कु. सीमा बांठिया को मुख्य समारोह में पुरस्कार प्रदान करते हुए विशिष्ट अतिथि डॉ. रामप्रतापजी।

श्री जवाहर विद्यापीठ स्वर्ण जयन्ती स्मारिका का विमोचन करते हुए मुख्य अतिथि श्रीमान् देवीसिंहजी भाटी, नहर एवं सिंचाई मंत्री राजस्थान सरकार एवं विमोचन के लिए प्रस्तुत करते हुए संस्था मंत्री श्री सुमतिलालजी बांठिया।

संस्था संस्थापक सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृतिग्रंथ का लोकार्पण करते हुए मुख्य अतिथि श्रीमान् देवीसिंहजी भाटी, नहर एवं सिंचाई मंत्री राजस्थान सरकार। लोकार्पण के लिए प्रस्तुत करते हुए संस्था अध्यक्ष श्री बालचन्दजी सेठिया।

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के मुख्य अतिथि श्रीमान् देवीसिंहजी भाटी, नहर एवं सिंचाई मंत्री राजस्थान सरकार को स्मृति-चिह्न स्वरूप प्रस्तावित जवाहर द्वार का मॉडल भेंट करते हुए कार्यक्रम अध्यक्ष श्रीमान् गुमानमलजी चोरड़िया।

स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के विशिष्ट अतिथि श्रीमान् डॉ. रामप्रतापजी, खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति राज्यमंत्री राजस्थान सरकार को स्मृति-चिह्न स्वरूप प्रस्तावित जवाहर द्वार का मॉडल भेंट करते हुए कार्यक्रम अध्यक्ष श्रीमान् गुमानमलजी चोरड़िया।

जीवन-वृत्त

बालक जवाहरलाल मां और पिता से वंचित हो अपने मामा के यहां रहने लगे। प्रतिष्ठित व्यवसायी मामा ने बहिन की धरोहर को प्यार से सहेज कर रखा। श्री जवाहरलाल जी को विद्यालय में भरती कराया गया। वे पढ़ाई के साथ-साथ चैतन्य मन से, खुली आंखों से प्रकृति की पाठशाला के भी जिज्ञासु विद्यार्थी बन गए। वे अपने परिवेश में बिखरे प्रकृति के रत्न-कणों को समेटने लगे। प्रकृति से एकात्म होने में उन्हें अमित आनन्द प्राप्त होता था।

आपकी जन्मभूमि थांदला यद्यपि मालवा में है किन्तु गुजरात का पड़ौसी है। अतः आप गुजराती भाषा, भूषा और संस्कारों के सिद्धहस्त ज्ञाता भी सहज ही बन गए। गुजराती समाज की सुसंघटना और संस्कार प्रणाली ने आपके जीवन पर गहरा प्रभाव डाला जो कालान्तर में आपकी यशस्विता की एक महनीय आधारभूमि सिद्ध हुआ।

ईसाई शिक्षा पद्धति—आपको बाल्यकाल में आदिवासी अंचलों में स्थापित ईसाई मिशनरियों द्वारा संचालित पाठशाला में पढ़ाने के लिए भरती किया गया। आपके सुसंस्कारी मन पर ईसाई पाठशाला के संस्कार जम न सके। आप मात्र गुजराती व हिन्दी भाषा तथा गणित आदि प्रारंभिक शिक्षा प्राप्त कर स्कूल के नीरस वातावरण से निकल कर प्रकृति के सरस वातावरण के जिज्ञासु विद्यार्थी बन गए। कालान्तर में धर्मप्रचार के अपने महाअभियान में उन्हें बाल्यकाल की धार्मिक आधार पर संचालित विद्यालय योजना के अनुभव ने अनेकानेक सफल शैक्षिक प्रयास व प्रयोग करने की प्रेरणा दी। वे भारत में धुर ग्रामीण क्षेत्रों में धर्मान्तरण प्रयासों से पूर्णतः परिचित थे।

जवाहरलालजी में विपदाओं से भयभीत न होने और उन पर विजय प्राप्त करने का भाव बाल्यकाल से ही प्रबल था। सच तो यह है कि मां और बाप को असमय छीन कर प्रकृति ने उन्हें विपत्तियों से स्वयं अठखेलियां करने के लिए छोड़ दिया था और उन्होंने इस कसौटी पर स्वयं को खरा सिद्ध किया। उनके बचपन की कुछ घटनाएं विशेष रूप से उनके साहस और सूझ बूझ को प्रदर्शित करती हैं। ये घटनाएं बालकों के लिए प्रेरक भी हैं।

एक बार आप अपने कुछ बाल सखाओं के साथ बैलगाड़ी पर यात्रा कर रहे थे। ऊबड़-खाबड़ मार्ग पर दौड़ते बैलों के हिचकोलों से बैलगाड़ी डगमगा रही थी। उसके बड़े बड़े पहिये पथरीले मार्ग पर धड़ाम-धड़ाम गिर कर भावी अनिष्ट की सूचना दे रहे थे। पथ के एक ओर पहाड़ तथा दूसरी ओर गहरी खाई। बैल अनियंत्रित होने लगे। भयभीत बालक बैलगाड़ी से कूदकर भागे और यहां तक कि गाड़ीवान भी आसन्न मृत्यु-भय से आतंकित हो अपनी गाड़ी और जीविका के साधन बैलों को मौत के कगार पर असहाय छोड़ कर गाड़ी से कूद पड़ा। मौत नाच रही थी किन्तु बालक जवाहर ने साहस नहीं खोया। उन्होंने आगे बढ़कर बैलों की रास सम्हाली और अचल-अभीत भाव से उन्हें शनैः शनैः नियन्त्रित किया। गाड़ी और बैलों सहित सुरक्षित अपने गन्तव्य पर पहुंचे। इस दिल दहलाने वाले दृश्य का स्मरण भी भय की झुरहरी पैदा करता है पर बाल जवाहर के दर्पपूर्ण, सस्मित आनन के विजय उल्लास का चिन्तन हमारे मनों में हर स्थिति में कर्त्तव्यपथ पर डटे रहने का भाव जगाता है।

विश्वास की शक्ति—बालक जवाहर ने धरण ठीक करने का मंत्र सीख लिया था और वह अपने पास आने वाले प्रत्येक पीड़ित का कष्ट हरण करने को सदैव उद्यत रहते थे। गांवों में शारीरिक श्रम करते समय थोड़ा सा पैर चूकने या अधिक भार उठाने आदि के कारण धरण पड़ने की अत्यधिक घटनाएं होती हैं। जवाहरलाल जी प्रसन्न मन और वदन से सभी का मंत्र से उपचार करते थे। अभी उनकी आयु ११ वर्ष की थी और वे मामाजी के साथ वस्त्र-व्यवसाय सीख रहे थे। वे नियमित रूप से दुकान पर बैठ कर मामाजी के काम में हाथ बंटाते थे और उनका सहयोग करते थे। एक बार ग्राहकी के समय एक व्यक्ति ने दुकान पर जवाहरलाल जी से धरण ठीक करने

वार उचित समय देख कर उन्होंने अपने ताऊजी श्री धनराजजी के समक्ष दीक्षा लेने का विचार रखकर आज्ञा मांगी। ताऊजी का जवाहर पर अत्यधिक स्नेह था। इस सूचना से वे हतप्रभ रह गए। वे जवाहर के विचारों की गहराई न जान सके और उन्होंने दीक्षा का विरोध करने का अपना निश्चय प्रकट किया। इस पर जवाहरलालजी ने अपने घर भोजन करना छोड़ दिया और एक-एक कर साधुजीवन की वातों को अपने जीवन तथा आचरण में घटित करना प्रारम्भ कर दिया। ताऊजी भरसक प्रयत्न करने लगे कि यह दीक्षा लेकर साधु न वनने पाये।

एक वार जवाहरलालजी को ज्ञात हुआ कि उनके गुरुजी लींवड़ी गांव पधारे हुए हैं तव उन्होंने भरी दुपहरी में गांव से चुपचाप प्रस्थान किया और पहले से तय किए धोवी के घोड़े के सहारे लक्ष्य की ओर बढ़े। जव वे लींवड़ी पहुंचे तो उन्हें देखकर आश्चर्य हुआ कि उनके ताऊजी पहले ही वहां पहुंच चुके हैं। ताऊजी ने उन्हें वहुत समझाया किन्तु उनका निश्चय अटल था। उन्होंने कहा कि आप आज्ञा दे दें अन्यथा मैं साधुओं की तरह रह कर ही सारा जीवन विता दूंगा। ताऊजी निराश होकर थांदला लौटे और जवाहरलालजी ने लींवड़ी रहकर साधुवृत्ति से जीवन यापन प्रारम्भ कर दिया। आठ माह की तपस्या के बाद भी ताऊजी का मन नहीं पसीजा तव आपने अज्ञात स्थान पर जाने की धमकी दी; इससे ताऊजी का हृदय द्रवित हो उठा। उन्होंने यह सोच कर कि साधु बन जाने पर भी देखने को तो मिलेगा, उन्हें आज्ञा प्रदान कर दी।

भागवती दीक्षा—माघ सुदी २ संवत् १९४८ को लींवड़ी में आपश्री ने भव्य भागवती दीक्षा ग्रहण की। आपश्री के केश लोच का कार्य मुनिश्री बड़े घासीलालजी म. ने किया और आप मुनि श्री मगनलालजी म.सा. के शिष्य वने। इस प्रकार उनके अटल संकल्प की विजय हुई।

गहरा आघात—जिन मुनि श्री मगनलालजी के आप शिष्य बने थे उनका माघ वदी २ को ही देहान्त हो गया, इससे मुनिश्री जवाहरलालजी म. को गहरा आघात लगा। कराल काल के इस क्रूर प्रहार से वे विचलित हो उठे और उनकी मानसिक दशा विगड़ गई, तब श्री मोतीलालजी म.सा. ने आपकी बड़ी सेवा की। अन्त में पुनः स्वास्थ्य लाभ हुआ।

चरैवेति—चरैवेति—अव साधु जीवन की आपकी यात्रा जो प्रारम्भ हुई तो जीवन भर चलती रही। राजा भोज की पावन नगरी धार में चौमासा करके इन्दौर होकर आप उज्जैन पधारे। उज्जैन में आपने मालवी भाषा में प्रवचन देने प्रारंभ किए तो मातृभाषा की प्रवाहमयी पावन धारा में अवगाहन कर जन-जीवन कृतार्थ होने लगा। आपश्री जब रतलाम पधारे तो तत्र विराजित हुकम संघ के तृतीय आचार्यश्री उदयसागर जी म.सा. ने आशा प्रकट की कि 'जवाहरलालजी म.सा. के सुप्रभाव से जैन धर्म की महती प्रभावना होगी।' यह आशीष आपश्री को परम प्रोत्साहन रूप प्राप्त हुई।

प्रसंगवश कहना होगा कि इस आशीष के समय हुकम संघ के चौथे तथा पांचवें आचार्य क्रमशः श्री चौथमलजी म. व श्रीलालजी म.सा. उस समय मुनिवेश में उपस्थित थे तथा स्वयं जवाहरलालजी छठे आचार्य बने। इस प्रकार कालक्रम से बनने वाले चार आचार्यों का मिलन इस आशीष के समय हुआ था जो एक सुखद, विरल घटना है। कालान्तर में श्री जवाहरलालजी म.सा. का यश जिस प्रकार दिगृदिगन्त में विस्तृत हुआ, उससे इस मंगल प्रसंग का महत्त्व स्पष्ट होता है।

आपश्री की प्रतिभा को पहचान कर आपको रामपुरा में सुश्रावक श्री केशरीमलजी के पास आगम-शास्त्रों के अध्ययन हेतु भेजा गया। आपश्री ने अल्पकाल में ही अपनी विलक्षण बुद्धि से दशवैकालिक, उत्तराध्ययन,

तो एक ही दिशा में उठते हैं उसी प्रकार श्रावक-श्राविका, साधु-साध्वी रूप चतुर्विध संघ को सम्यक् f
यत्नपूर्वक एक साथ, एक दिशा में प्रयाण करना चाहिये। इस संघ के चारों पैर समान रूप से सामर्थ्यवान
पैरों (साधु-साध्वी) का अनुसरण पिछले पैरों (श्रावक-श्राविका) को करना चाहिये। कामधेनु घास जैसे
को खाकर अमृत तुल्य दुग्ध प्रदान करती है, इसी प्रकार कान्फ्रेंस रूपी कामधेनु में भी यह सामर्थ्य होनी
प्रभु महावीर के संघ में जो भी प्रवेश करे, चाहे वह कितना भी तुच्छ या निम्न क्यों न हो, उसे अमृतम
गुणवान बना दे। संघ हितैषी, सेवा-समर्पित बना दे। कामधेनु के चार स्तन हैं। संघ के भी दान, शील
भावना चार स्तन हैं। कामधेनु के दो सींग हैं उसी प्रकार संघ के सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चारित्र दो रक्षक

लोक में कामधेनु की बड़ी महिमा है। संघ की भी बड़ी महिमा है। सदस्य संघ को आत्मभ
संघ सदस्यों की मनोकामना पूर्ण करें। अन्योन्याश्रय संबंध से चतुर्विध संघ का विकास करें।

अपने अगले थांदला चातुर्मास में आपश्री ने समाज-सुधार को धर्म का आधार निरूपित
सामाजिक कुरीतियों के निवारण हेतु प्रभावी उपदेश दिया, जिसके फलस्वरूप जो इकरारनामा सकल पंचा
१९६५ में लिखित व हस्ताक्षरित रूप से जारी किया वह आज से लगभग १०० वर्ष पूर्व कल्पनातीत
रहा होगा। आज भी समाज सुधार की उस दशा को हम प्राप्त नहीं कर सके हैं, जिससे बोध होता है f
महान् समाज सुधारक थे।

हाथी और सांप—एक बार आप थांदला में ही प्रवचन कर रहे थे। स्थानक में पर्याप्त स्थान
कारण छप्पर बनाया गया था जो राजपथ तक फैल गया था। आपका प्रवचन रूपी अमिय वर्षण चल ह
कि मार्ग पर एक हाथी आया। महावत ने हाथी को इशारा किया और वह चुपचाप चारों घुटनों के बल
घिसट कर छप्पर को बिना तोड़े सभा के पास से गुजर गया। मुनिश्री पर इस घटना का बड़ा प्रभाव पड़ा
ने कहा कि तनिक से संकेत पर हाथी ने कैसा अपूर्व आत्म संयम प्रदर्शित किया? महावत ने उसे
सिखाया, उस विराटकाय प्राणी ने सब कुछ सीख लिया क़िन्तु सन्त नित्य उपदेश देते हैं और आप सुनते
विचारिये आपमें कितना परिवर्तन हुआ है? हमें इस घटना से सीख लेनी चाहिये। मेघकुमार का जीव भ
में हाथी था।

इसी प्रकार एक रात्रि पौषधशाला में सर्पराज आ गए। पर्युषण पर्व के दिवस थे। वे रात्
श्रावक से टकराए। जिसने उन्हें परे धकेल दिया। सांप ने सारी रात्रि पौषधशाला में शांत भाव से बि
प्रातः जब लोगों को घबराते देखा तो उसी प्रशांत भाव से सर्पराज विदा हो गए।

मुनिश्री इस घटना के प्रसंग में कहा करते थे कि प्राणिमात्र पर आप सभी के समभाव का प्रभ
है। सांप पर भी पड़ा। अहिंसा में ऐसी अपूर्व शक्ति है कि सिंह और हिरन वैर त्याग कर अहिंसक की
आकर सो सकते हैं।

अगले जावरा चौमासे में वहां के नवाब साहब व पुरजन बहुत लाभान्वित हुए।

इन्दौर चौमासे में आपने पदार्थ की अपेक्षा भावना को महत्त्वपूर्ण बताते हुए भौति

साहसपूर्वक प्रारम्भ किया। उस समय यह नवाचार करना असाधारण साहस का कार्य था। प्रबल विरोध भी हुआ किन्तु आप दृढ़ रहे, जिसका सुपरिणाम और सुफल आज विद्वद्वर्य साधु समाज के रूप में देश को प्राप्त हो रहा है।

युवाचार्य पद महोत्सव—आचार्य श्री श्रीलालजी म.सा. ने आपश्री को युवाचार्य बनाया और आपने इस दायित्व को आज्ञारूप में ही स्वीकार किया। आचार्यश्री से रतलाम में प्रत्यक्ष भेंट के बाद ही आपने यह पद स्वीकारा। वि.सं. १६७५ चैत्र कृष्णा ६ दिनांक २६ मार्च १६१६ को आपश्री ने सहज विनय के साथ युवाचार्य पद की चादर ग्रहण की। इस अवसर पर आपने कहा कि मैं 'एक अकिंचन सेवक ही रहूंगा।' यह आपकी विनय का आदर्श था।

आचार्य पद—भीनासर में आपको आचार्य श्री श्रीलालजी के देहावसान का समाचार मिला। आपने श्रावकों के करुण आग्रह पर ही ८ दिन का उपवास पूर्ण किया। जैतारण मारवाड़ में वि.सं. १६७६ आषाढ़ शुक्ला ३ को आप आचार्य पद पर आरूढ़ हुए। आपका आचार्य काल राष्ट्रधर्म, युगधर्म और समाजोन्नति के भागीरथ प्रयासों की एक प्रेरक कहानी है।

आपकी प्रेरणा से सन् १६२० के क्रांतिकारी दिनों में श्री श्वेताम्बर साधुमार्गी जैन गुरुकुल के नाम से शिक्षण की एक महत्वाकांक्षी योजना समाज प्रमुखों ने बनाई।

खादी—देश महात्मा गांधी के सत्याग्रह आन्दोलन के माध्यम से ब्रिटिश साम्राज्य से जूझ रहा था। खादी और स्वदेशी के माध्यम से राष्ट्रीय चेतना मुखरित हो रही थी। आप श्री ने मिल के कपड़े में चर्बी लगने से उन्हें त्याज्य बताया और स्वयं खादी धारण की। आपकी प्रेरणा से देशभर में जैनधर्मानुयायियों व अन्यों ने भारी संख्या में आजीवन खादी धारण की। आपके रतलाम प्रवेश के समय वहां के सेठ श्री वर्धमानजी पीतलिया ने आपश्री के खादी के कारण गिरफ्तार होने की आशंका प्रकट की; आप मुस्कराए। रतलाम नरेश जब आपका प्रवचन सुनने पधारे तो उनमें महान् परिवर्तन आया और उन्होंने अनेक जनहितकारी कार्य किए।

अहमदनगर तथा सतारा प्रवास में आपने वहां के दुर्भिक्ष पीड़ितों की सहायता हेतु श्रेष्ठी वर्ग से आह्वान किया। फलतः जागरूक श्रावकों ने राहत की एक बड़ी योजना तैयार कर लागू की। आपकी 'मानव कर्त्तव्य' की भावपूर्ण व्याख्या से जनता के नेत्रों से आंसुओं की धारा बह निकली।

राष्ट्र सेवा—आपके पूना विहार के समय 'प्रान्तीय राजद्वारी परिषद्' के सदस्य राष्ट्रीय पताकाएं लेकर एक जुलूस के रूप में आपश्री की सेवा में उपस्थित हुए। इस अवसर पर आपने राष्ट्र सेवा, मादक द्रव्य निषेध तथा मिल के वस्त्रों की अपवित्रता पर ओजस्वी हृदयस्पर्शी प्रवचन दिया जो आपके प्रखर राष्ट्रवाद की स्वाभाविक अभिव्यक्ति थी। नान्दूर्डी में आपश्री ने ब्याजखोरी के विरुद्ध प्रभावी उपदेश दिया, जिस पर वहां के महाजनों ने ब्याज लेने के नियम निर्धारित किए। घाटकोपर बम्बई चौमासे में आपश्री की प्रेरणा से जीवदया खाते की स्थापना हुई। माटुंगा की झुग्गी-झौंपड़ियों की दशा देख आपने अछूतोद्धार और मानव एकता पर प्रभावी प्रवचनों से अपूर्व जागृति पैदा की। अपने जलगांव चौमासे में आपने भागीरथ मिल में मालिकों और मजदूरों की संयुक्त सभा में मजदूरों की दुर्दशा का कारुणिक चित्र और मालिकों के सुविधा भोगी जीवन की तुलनापूर्वक चेतावनी के स्वर गुंजाए।

गिरफ्तारी की आशंका—दिल्ली से आग्रह भरी विनती पर आपश्री जमनापार पधारे, तब गोरों का दमन चक्र भीषण हो चला था। श्रावकों ने प्रवचनों में राष्ट्रीय विचार न रखने का आग्रह किया, इस पर सिंह गर्जना करते हुए आत्मधर्मी जवाहर ने अपनी राष्ट्रधर्मी भूमिका को स्पष्ट किया और कहा कि —'मुझे अपने दायित्व का पूरा भान है। मैं जानता हूं धर्म क्या है? ....कर्त्तव्य पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य यदि गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज को नीचा देखने जैसी कोई बात नहीं है।' कहना न होगा कि आपश्री की व्याख्यानधारा निर्बाध रूप से उसी तरह प्रवाहित होती रही।

अजमेर साधु सम्मेलन—दिल्ली की कार्य योजना सफल हुई और अजमेर में साधु सम्मेलन ५-४-१९३३ को प्रारंभ हुआ, इसमें आपश्री ने 'श्री वर्धमान संघ' की प्रभावी, एक्य संस्थापक योजना रखी। एक समाचारी की रूपरेखा का निर्माण अति महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। आचार्यश्री का रचनात्मक योगदान अविस्मरणीय रहा।

युवाचार्य चादर प्रदान—आचार्य प्रवर ने श्री गणेशीलालजी म.सा. को जावद में सं. १९९० की फाल्गुन शुक्ला ३ को युवाचार्य पद की चादर प्रदान करते समय कहा कि अनुशास्ता को बीकानेरी मिश्री के कुंजे के समान होना चाहिये, वह अन्याय के प्रतिकार में कठोर से कठोर रहे किन्तु सत्य और न्याय के लिए मुंह में रखी हुई मिश्री के समान मीठा और नम्र रहे। मिश्री का कुंजा सिर पर मारने से सिर फूट सकता है। किन्तु उसका टुकड़ा मुंह में रखने से मुंह मीठा होता है।

अनथक यात्री-बहती धर्म गंगा—आचार्य श्री पुनः विहार हेतु कठिन परिषह सहते हुए सदैव की भांति पांव-प्यादे, ग्राम-ग्राम, नगर-नगर, डगर-डगर धर्मोपदेश देते हुए विचरण करते रहे। सं. १९९१ का चौमासा कपासन हुआ जहां उल्लेखनीय धर्माराधना के साथ कन्या विक्रय, मृत्यु-भोज, तिलक तथा भाई के विरुद्ध मुकदमेबाजी के त्याग भी भारी संख्या में हुए। धर्माराधन और समाज सुधार का भगीरथ अभियान साथ-साथ चलता रहा।

अल्पारंभ-महारंभ—आपश्री का वि.सं. १९९२ का रतलाम चातुर्मास रूढ़ विचारों पर सचोट प्रहार और आध्यात्मिक नवजाग्रति के साथ धर्म की साहसिक नव व्याख्याओं के साथ स्मरणीय बन गया। हिंसा-अहिंसा या अल्पारंभ महारंभ के विषय में रूढ़ धारणा यह थी कि प्रत्यक्ष की अल्पहिंसा के समक्ष बड़ी से बड़ी अप्रत्यक्ष की हिंसा को नगण्य माना जाता था जिसके परिणाम से चर्खा कातने में प्रत्यक्षतः जो अल्पहिंसा थी उससे बचने के लिए मिल के चर्बी लगे वस्त्र पहनने को उचित माना जाता था, जिनमें पशुवध की महाहिंसा होती थी। किन्तु वह चूंकि अप्रत्यक्ष थी; अतः उसे गौण कर दिया जाता था। इस दिशा में आचार्यश्री ने स्वविवेकपूर्वक कार्य करने का उपदेश दिया। उनका स्पष्ट मत था कि स्व विवेक से महारंभ (महापाप) के कार्य को भी अल्पारंभ (अल्पपाप) में बदला जा सकता है। उनकी इन नई व्याख्याओं का धीमा-धीमा विरोध भी हुआ किन्तु उससे विचलित न होकर आपने नए-नए उदाहरण देकर अपनी बात को सशक्त रीति से प्रस्तुत कर बदले दृष्टिकोण से आध्यात्मिक क्षेत्र में एक नव जागृति को जन्म दिया जिसका स्वावलंबन और स्वदेशी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिणाम निकला।

आदर्श मिलन—सौराष्ट्र की ओर विहार के समय मार्ग में आपश्री का मिलन आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. से हुआ, जो परस्पर प्रेमपूर्ण एवं वात्सल्य का एक अनुपम आदर्श था। मेवाड़ और मालवा के छोटे-छोटे गांवों को स्पर्श करने के पश्चात् आपश्री ने पालनपुर, वीरमगांव और बढ़वाण तथा मार्गवर्ती गांव-कस्बों में धर्म का जयघोष गुंजाते हुए राजकोट में संवत् १९९३ का चातुर्मास किया। इस चौमासे में हिन्दू और मुसलमानों ने भी संयुक्त रूप से प्रवचनों का अमृतपान किया।

गिरफ्तारी की आशंका—दिल्ली से आग्रह भरी विनती पर आपश्री जमनापार पधारे, तब गोरों का दमन चक्र भीषण हो चला था। श्रावकों ने प्रवचनों में राष्ट्रीय विचार न रखने का आग्रह किया, इस पर सिंह गर्जना करते हुए आत्मधर्मी जवाहर ने अपनी राष्ट्रधर्मी भूमिका को स्पष्ट किया और कहा कि —'मुझे अपने दायित्व का पूरा भान है। मैं जानता हूं धर्म क्या है? ....कर्त्तव्य पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य यदि गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज को नीचा देखने जैसी कोई बात नहीं है।' कहना न होगा कि आपश्री की व्याख्यानधारा निर्बाध रूप से उसी तरह प्रवाहित होती रही।

अजमेर साधु सम्मेलन—दिल्ली की कार्य योजना सफल हुई और अजमेर में साधु सम्मेलन ५-४-१६३३ को प्रारंभ हुआ, इसमें आपश्री ने 'श्री वर्धमान संघ' की प्रभावी, एक्य संस्थापक योजना रखी। एक समाचारी की रूपरेखा का निर्माण अति महत्वपूर्ण उपलब्धि रही। आचार्यश्री का रचनात्मक योगदान अविस्मरणीय रहा।

युवाचार्य चादर प्रदान—आचार्य प्रवर ने श्री गणेशीलालजी म.सा. को जावद में सं. १६६० की फाल्गुन शुक्ला ३ को युवाचार्य पद की चादर प्रदान करते समय कहा कि अनुशास्ता को बीकानेरी मिश्री के कुंजे के समान होना चाहिये, वह अन्याय के प्रतिकार में कठोर से कठोर रहे किन्तु सत्य और न्याय के लिए मुंह में रखी हुई मिश्री के समान मीठा और नम्र रहे। मिश्री का कुंजा सिर पर मारने से सिर फूट सकता है। किन्तु उसका टुकड़ा मुंह में रखने से मुंह मीठा होता है।

अनथक यात्री-बहती धर्म गंगा—आचार्य श्री पुनः विहार हेतु कठिन परिषह सहते हुए सदैव की भांति पांव-प्यादे, ग्राम-ग्राम, नगर-नगर, डगर-डगर धर्मोपदेश देते हुए विचरण करते रहे। सं. १६६१ का चौमासा कपासन हुआ जहां उल्लेखनीय धर्माराधना के साथ कन्या विक्रय, मृत्यु-भोज, तिलक तथा भाई के विरुद्ध मुकदमेबाजी के त्याग भी भारी संख्या में हुए। धर्माराधन और समाज सुधार का भगीरथ अभियान साथ-साथ चलता रहा।

अल्पारंभ-महारंभ—आपश्री का वि.सं. १६६२ का रतलाम चातुर्मास रूढ़ विचारों पर सचोट प्रहार और आध्यात्मिक नवजाग्रति के साथ धर्म की साहसिक नव व्याख्याओं के साथ स्मरणीय बन गया। हिंसा-अहिंसा या अल्पारंभ महारंभ के विषय में रूढ़ धारणा यह थी कि प्रत्यक्ष की अल्पहिंसा के समक्ष बड़ी से बड़ी अप्रत्यक्ष की हिंसा को नगण्य माना जाता था जिसके परिणाम से चर्खा कातने में प्रत्यक्षतः जो अल्पहिंसा थी उससे बचने के लिए मिल के चर्बी लगे वस्त्र पहनने को उचित माना जाता था, जिनमें पशुवध की महाहिंसा होती थी। किन्तु वह ...त्यक्ष थी; अतः उसे गौण कर दिया जाता था। इस दिशा में आचार्यश्री ने स्वविवेकपूर्वक कार्य करने का ... दिया। उनका स्पष्ट मत था कि स्व विवेक से महारंभ (महापाप) के कार्य को भी अल्पारंभ (अल्पपाप) में ... जा सकता है। उनकी इन नई व्याख्याओं का धीमा-धीमा विरोध भी हुआ किन्तु उससे विचलित न होकर ...ने नए-नए उदाहरण देकर अपनी बात को सशक्त रीति से प्रस्तुत कर बदले दृष्टिकोण से आध्यात्मिक क्षेत्र में ... नव जागृति को जन्म दिया जिसका स्वावलंबन और स्वदेशी के क्षेत्र में महत्वपूर्ण परिणाम निकला।

आदर्श मिलन—सौराष्ट्र की ओर विहार के समय मार्ग में आपश्री का मिलन आचार्य श्री हस्तीमलजी म.सा. से हुआ, जो परस्पर प्रेमपूर्ण एवं वात्सल्य का एक अनुपम आदर्श था। मेवाड़ और मालवा के छोटे-छोटे गांवों को स्पर्श करने के पश्चात् आपश्री ने पालनपुर, वीरमगांव और वढ़वाण तथा मार्गवर्ती गांव-कस्बों में धर्म का जयघोष गुंजाते हुए राजकोट में संवत् १६६३ का चातुर्मास किया। इस चौमासे में हिन्दू और मुसलमानों ने भी ...रूप से प्रवचनों का अमृतपान किया।

महाप्रयाण—स्वास्थ्य निरन्तर गिरता रहा और समस्त उपचार प्रयासों के बावजूद दि. ३०-५ १९४२ को आप श्री पर पक्षाघात का आक्रमण हुआ। आपने अनुभव किया कि महाप्रयाण का अवसर सन्निकट है तब आपने दि. १८-६-४२ को सकल संघ से अन्तिम क्षमा प्रार्थना की। उस क्षमाप्रार्थना के भाव पूज्य श्री के गौरवशाली, संघर्षमय जीवन के सर्वथा अनुकूल थे। एक महाप्रयाण की कगार पर खड़े पुरुष में भी नयी ताजगी, ऊर्जा, स्फूर्ति और वैचारिक चैतन्य तथा अपने सिद्धान्तों पर अविचल आस्था का साक्षात्कार उनके इस अन्तिम सन्देश में था। एक सत्य गवेषक का अपराजेय शौर्य उस सन्देश में पद पद पर छलक रहा था। श्रोताओं की आंखें आंसुओं से तर थीं।

वि. सं. १९९९ का चौमासा भी भीनासर (बीकानेर) में हुआ। पहले हाथ पर तथा बाद में गर्दन पर भयानक फोड़ा निकल आया। बहुत चिकित्सा की पर डॉक्टरों को निराशा ही हाथ लगी।

संथारा व स्वर्गारोहण—आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को निराशाजनक शारीरिक स्थिति में युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा. ने निर्देशानुसार तिविहार संथारा करा दिया। पूज्यश्री के प्रशस्त, सौम्य, प्रशान्त मुखमंडल पर अलौकिक सात्विक आभा प्रदीप्त थी। आपको चौविहार संथारा कराया और उसी दिन अर्थात् आषाढ़ शुक्ला अष्टमी सं. २००० को सायं ५ बजे ज्योतिर्धर जवाहराचार्य जी की तेजस्वी, सशक्त आत्मा ने अशक्त देह का परित्याग कर दिया। इस महाप्रयाण के समाचार से सहसा सब स्तब्ध रह गए।

स्वर्गारोहण के समाचार फैलते ही अंतिम दर्शन के लिए अपार भीड़ उमड़ पड़ी। सारे देश में विद्युत गति से खबर फैली और शोक सागर लहराने लगा। युवाचार्य श्री गणेशीलाल जी म. सा. को सर्वप्रथम आचार्य पद की चादर प्रदान की गई तत्पश्चात् दूसरे दिन स्व. श्री जवाहराचार्यजी की शवयात्रा स्वर्णमंडित रजत विमान में विराजित करके निकाली गयी। आगे-आगे बीकानेर महाराजा श्री गंगासिंहजी द्वारा भेजे गए नगाड़ा, निशान तथा बैंड थे और विमान के पीछे पूज्यश्री के यशोगीत गाती भजनमंडलियां चल रही थीं। अगणित रोते-गाते श्रद्धालु स्त्री-पुरुषों का जनप्रवाह इस यात्रा में सम्मिलित हुआ। चन्दन, घृत, कपूर, खोपरों आदि की चिता पर जब विमान सहित पूज्यश्री का अग्नि संस्कार किया गया तो हजारों आंखें बरस पड़ीं।

अपार श्रद्धा—युगद्रष्टा, युगस्रष्टा क्रांतिदर्शी, प्रखर राष्ट्रवादी ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. के महाप्रयाण के समाचारों से देशभर में शोकसागर उमड़ पड़ा। जिन-जिन रियासतों में आपका विहारादि हुआ था, उन सभी के राजा महाराजा व नवाबों ने श्रद्धासुमन अर्पित किए। महानगरी बम्बई के मुख्य बाजार बन्द रहे। पंजाब, मारवाड़, मेवाड़, गुजरात, महाराष्ट्र, मालवा आदि में शोकसभाएं आयोजित कर हार्दिक श्रद्धासुमन अर्पित करते हुए जवाहर की ज्ञान ज्योति को जाग्रत रखने के संकल्प लिए गए।

उस समय के पूज्य प्रभावक सन्तों, महापुरुषों, राजनेताओं एवं समाजसेवियों ने अंतर्हृदय से श्रद्धांजलि अर्पित की।

राष्ट्रीय सन्त, जैन जवाहर, हिन्द की धर्म क्रांति, प्रखर तत्त्व वेत्ता-चारित्र रथ के निपुण सारथी आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा. का पार्थिव शरीर पंचतत्त्वों की भेंट चढ़ गया, किन्तु उनका यश : शरीर युग-युग तक अमर रहकर समाज, राष्ट्र और प्राणिमात्र को सत्य धर्म का शाश्वत सन्देश सुनाता रहेगा।

जय जवाहर □

सृजन
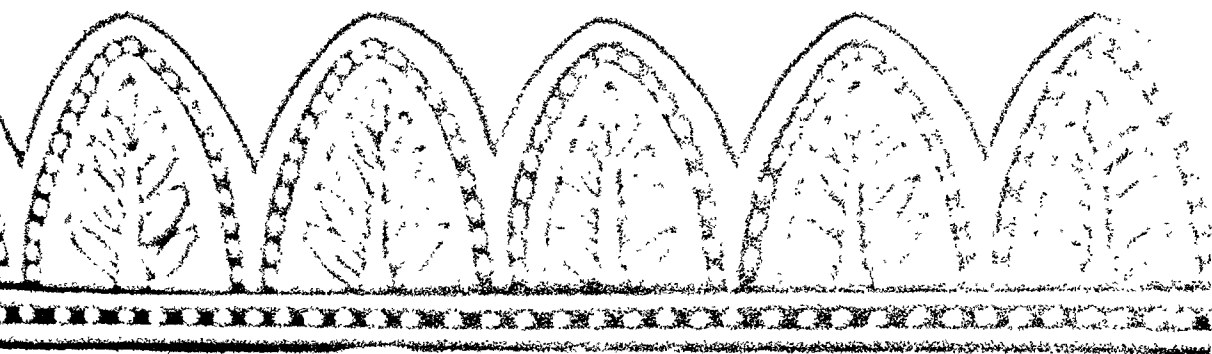
विशिष्ट प्रवचन

उदार अहिंसा

श्री जिन अजित नमो जयकारी, तू देवन को देवजी।
जितशत्रु राजा ने विजया, राणी को, आतजात त्वमेवजी।
श्री जिन अजित नमो जयकारी।।

निरारम्भ और निष्परिग्रह रहना साधु का धर्म है, अल्पारम्भी और अल्पपरिग्रही बनना श्रावक-गृहस्थ-का धर्म है तथा महारम्भी और महापरिग्रही बनना मिथ्यात्वी का काम है।

यहां यह विचार करना आवश्यक है कि गृहस्थ अल्पारम्भी, अल्पपरिग्रही किस प्रकार वन सकता है?

श्रावक स्थूल प्राणातिपात का त्यागी होता है। अतएव यह विचार कर लेना उपयोगी होगा कि यहां 'स्थूल' का क्या अर्थ है? स्थूल शब्द सूक्ष्म की अपेक्षा रखता है और 'सूक्ष्म' 'स्थूल' की अपेक्षा रखता है। यदि 'सूक्ष्म' न होता तो स्थूल का होना सम्भव नहीं था। तो यहां स्थूल शब्द से क्या ग्रहण किया गया है?

यहां स्थूल शब्द का प्रयोग द्वीन्द्रिय से लेकर जितने जीव आबालवृद्ध सभी को सरलता से आंखों द्वारा दिखाई देते हैं, उनके लिए किया गया है। ऐसे जीवों से भिन्न, आंखों से न दिखाई देने वाले जीव, चाहे वे द्वीन्द्रिय आदि ही क्यों न हों, यहां सूक्ष्म कहलाएंगे।

मोटी बुद्धि वालों को यह बात एकाएक समझना कठिन होगा, पर विचारशील व्यक्ति इसे जल्दी समझ सकेंगे।

शास्त्रकार ने एकेन्द्रिय जीव की हिंसा को हिंसा माना है पर उसका पाप पञ्चेन्द्रिय जीव की हिंसा के वरावर नहीं माना।

जैन समाज में आज हिंसा-अहिंसा के विषय में वहुत भ्रम फैला हुआ है। वहुत से ऐसे व्यक्ति हैं जिन्होंने 'दया करो' का अर्थ समझ रखा है—सिर्फ छोटे-छोटे जीवों की दया करो। उन्होंने मानवदया प्रायः भुला दी है। एक वलाय ऐसी खड़ी हो गई है, जिसकी समझ में चींटी और मनुष्य की हिंसा का पाप एक ही समान है। शायद उन्होंने कंकर चुराने वाले को और जवाहरत चुराने वाले को भी समान ही समझ रखा होगा।

जैन समाज ने एकेन्द्रिय जीवों की रक्षा के लिए जब से मनुष्य —दया भुलाई है, तभी से इनका पतन आरम्भ हुआ है।

हिन्दू शास्त्र भी किसी जीव को न मारने का विधान करता है, परन्तु जैन शास्त्रों में इसका बहुत अच्छा, स्पष्ट और बारीक विवेचन किया गया है। जैन शास्त्रों में हिंसा के दो भेद किये हैं एक संकल्पजा हिंसा और दूसरी आरम्भजा हिंसा।

'संकल्पाज्ञाता संकल्पजा। मनसःसंकल्पाद् द्वीन्द्रियादिप्राणिनः गांसास्थिचर्मनखदन्ताद्यर्थ व्यापादती भवति।

अर्थात्—मांस, हड्डी, चमड़ी, नाखून, दांत आदि के लिये जानबूझकर द्वीन्द्रिय आदि जीवों को मारना संकल्पजा हिंसा कहलाती है।

आरम्भाज्ञाता आरम्भजा। तत्रारम्भो हलदन्तालरवननरतत्।

तस्मिन् शंखपिपीलिकाधान्य गृहकारिकादि संघट्टन-परिताप द्रावलक्षणेति।

अर्थात्—हल जोतने से तथा दांतुली आदि उपकरणों से और घर आदि वनाने में जो सूक्ष्म जीवों की हिंसा होती है, वह आरम्भजा हिंसा है।

तत्र श्रमणोपासकः संकल्पतो यावज्जीवयाऽपि प्रत्याख्याति, न तु यावज्जीवयैव नियमतः, इति नारम्भजमिति तस्यावश्यकता आरम्भसद्भावादिति।

श्रावक जीवन पर्यन्त के लिए भी संकल्पजा हिंसा का त्यागी हो सकता है परन्तु गृह-निर्माण आदि कार्यों में लगे रहने से आरम्भजा हिंसा का सर्वथा—नियम से त्यागी नहीं हो सकता। आरम्भ करने के कारण आवश्यकता पड़ने पर हिंसा हो ही जाती है।

आज अहिंसा का वास्तविक रहस्य न समझने के कारण अपने-आपको श्रावक मानने वाले कई भाई ऐसे काम कर बैठते हैं, कि अन्य-धर्मावलम्बी उनके कार्यों को देखकर उनकी हंसी उड़ाते हैं। कभी-कभी तो इतनी नासमझी प्रकट होती है कि उनके कारण धर्म की अप्रतिष्ठा होती है। कहां तो जैन धर्म की अहिंसा की विशालता और कहां इन भोले भाइयों की अहिंसा के पीछे हिंसा का बड़ा भाग।

आज अनेक भाई आरम्भजा हिंसा से बचने की पूरी कोशिश करते हैं पर संकल्पजा हिंसा से वचने के लिए कुछ भी प्रयत्न करते नजर नहीं आते। हिंसा-अहिंसा का सच्चा रहस्य न जानने के कारण ही कई श्रावक चींटी मर जाने पर जितना अफसोस प्रकट करते हैं, मनुष्य पर अत्याचार करने में उतनी घृणा नहीं करते।

मित्रों! जैनधर्म की अहिंसा ऐसी नहीं है जैसी कि आपने भूल से उसे समझ लिया है। अवसर आने पर सच्चा जैनधर्मी युद्धभूमि में जाने से नहीं हिचकता। हां, वह इस बात का पूरा ध्यान रखता है कि मुझसे कहीं निरपराध प्राणी की संकल्पजा हिंसा न होने पावे।

प्राचीन काल में जब कोई राजा दूसरे राजा पर आक्रमण करता था तो वह आक्रमण करने से पहले उसे सूचना देता था। सूचना के साथ ही वह अपनी मांग भी उसके सामने उपस्थित कर देता था। चाहे महाभारत के युद्ध का इतिहास पढ़िये, चाहे राम —रावण के संग्राम का। सर्वत्र आप देख सकेंगे कि आक्रमण से पहले, जिस पर आक्रमण किया जाता था उसके सामने आक्रमणकारी ने अपनी मांग पेश की। प्राचीन भारतवर्ष में यह नियम इतना व्यापक और अनुल्लंघनीय बन गया था कि आज भी इसकी परम्परा प्रायः दिखाई देती है। इस समय भी अपने दूतों के द्वारा मांग पेश की जाती है।

क्या आप बता सकते हैं कि इस नियम का क्या कारण था? पहले से युद्ध की सूचना देकर अपने शत्रु तैयार होने का अवसर क्यों दिया जाता था? राजा लोग अचानक आक्रमण क्यों नहीं कर देते थे?

मित्रों! इस परम्परा में एक रहस्य है। जिस दावे को पूरा करने के लिए राजा आक्रमण करता है, उसे कदाचित् वह राजा, जिस पर आक्रमण करना है, विना युद्ध किये ही स्वीकार कर ले। ऐसी अवस्था में वह युद्ध निरपराधी सैनिकों की हिंसा का कारण होगा और अनावश्यक भी होगा। इस प्रकार निरपराध जीवों की हिंसा से वचने के लिए ही युद्ध से पहले दूसरे राजा के सामने मांग पेश कर दी जाती थी। दूसरा राजा जब आक्रमणकारी की मांग स्वीकार नहीं करता था तो उसे अपराधी समझकर वह आक्रमण कर देता था।

इससे यह विदित हो जाता है कि श्रावक अपराधी जीवों की हिंसा का एकान्ततः त्यागी नहीं होता।

अहिंसा कायर बनाती है या कायरों का शस्त्र है यह बात वही कह सकता है जो अहिंसा का स्वरूप और सामर्थ्य नहीं समझ पाया है। इससे विपरीत सत्य तो यह है कि अहिंसा का व्रत वीर शिरोमणि ही धारण कर सकते हैं। जो कायर है वह अहिंसा को लजाएगा। वह अहिंसक बन नहीं सकता। कायर अपनी कायरता को छिपाने के लिए अहिंसक होने का ढोंग रच सकता है, वह अपने आपको अहिंसक कहे तो कौन उसकी जीभ पकड़ सकता है, पर वास्तव में वह सच्चा अहिंसक नहीं है। यों तो सच्चा अहिंसावादी एक चींटी के भी व्यर्थ प्राण हरण करने में थर्रा उठेगा, क्योंकि वह संकल्पजा हिंसा है। वह इसे महान् पातक समझता है। जब नीति या धर्म खतरे में होगा, न्याय का तकाजा होगा, और संग्राम में कूदना अनिवार्य हो जायगा, तब वह हजारों मनुष्यों के सिर उतार लेने में किंचित्मात्र खेद प्रकट न करेगा। हां, वह इस बात का अवश्यपूर्ण ध्यान रखेगा कि संग्राम मेरी और से संकल्परूप न हो, वरन् आरम्भ रूप हो।

संकल्पजा हिंसा करने वाले को पातकी के नाम से पुकारा जाता है, पर आरम्भजा हिंसा करने वाला श्रावक इस नाम से नहीं पुकारा जाता।

मित्रों! इस संक्षिप्त विवेचन से आप समझ गये होंगे कि जैनों की अहिंसा इतनी संकुचित नहीं है कि वह संसार के कार्य में बाधक हो और सांसारिक कार्य करने वालों को उसका परित्याग करना पड़े। वह इतनी व्यापक और विशाल है कि बड़े-बड़े सम्राटों, राजाओं और महाराजाओं ने उसे धारण किया है, पालन किया है और आज भी वे उसका धारण —पालन कर सकते हैं। उनके लोक-व्यवहार में किसी प्रकार की रुकावट खड़ी नहीं होती। जैन अहिंसा अगर राजकाज में बाधक होती तो प्राचीन काल के राजा—महाराजा उसका पालन किस प्रकार करते ?

एक पादरी की लिखी हुई पुस्तक में मैंने पढ़ा था कि हिन्दू लोगों की अपेक्षा हम पादरी लोग अधिक अहिंसक हैं। हिन्दू शास्त्रों के अनुसार गेहूं आदि पदार्थों में जीव है। हिन्दू लोग गेहूं आदि को पीस कर खाते हैं। ऐसा करने में कितनी हिंसा होती है ? एक बात और भी है। जब गेहूं आदि की खेती की जाती है तब भी पानी के, पृथ्वी के और न जाने कौन-कौनसे हजारों जीवों की हत्या होती है। वे इतनी अधिक हिंसा करने के पश्चात् पेट भरने में समर्थ हो पाते हैं। फिर भी हिन्दू लोग अपने आपको अहिंसक मानते हैं।

हम पादरी लोग सिर्फ एक बकरे को मारते हैं और उसी से अनेक आदमियों का पेट भर जाता है। इससे हम बहुत कम हिंसा करते हैं।

मित्रों! यह पादरी भोले—भाले लोगों की आंख में धूल झोंकने का प्रयास कर रहा है। वह इस युक्ति से हिन्दुओं के प्रति घृणा का भाव उत्पन्न करवाना चाहता है। वह समझता है, तर्क सुनकर बहुत से लोग ईशु की शरण में आ जाएंगे। मगर यह पादरी भाई भारी भ्रम में है। उसे समझ लेना होगा कि वह जो दलील पेश करता है, सच्चे अहिंसावादी के सामने पल भर ही नहीं ठहर सकती।

जरा विचार कीजिए, बकरा क्या आसमान से टपक पड़ा है? उसका जन्म किसी बकरी के गर्भ से हुआ है। उस बकरी ने कितना चारा खाया होगा, कितना पानी पिया होगा, जिससे गर्भ का पोषण हुआ तथा जन्म लेने के बाद बकरे ने कितना घास खाया और कितना पानी पिया है, जिससे उसका शरीर पुष्ट हुआ है? इसका हिसाब लगाना अत्यावश्यक है। बकरे की हिंसा और धान पैदा करने की हिंसा की इस आधार पर तुलना की जाय, तो मालूम होगा कि हिंसा किसमें ज्यादा है?

इस सम्बन्ध में एक बड़ी बात और भी है। क्या धान आदि द्वारा पेट भरने वाला इतना झूठा स्वभाव का हो सकता है जितना बकरे का मांस खाने वाला हो सकता है? यदि नहीं तो मांस खाने वाले के गुणों और धान्य खाने वाले के अवगुणों के गीत क्यों गाये जाते हैं।

ऊपर—ऊपर के विचार से तो हमने पादरी को दोषी ठहरा दिया और यह भी कह दिया कि वह अपनी झूठी सफाई देकर लोगों को धोखा देता है। परन्तु आपने कभी अपने सम्बन्ध में भी सोचा है? मित्रों! आप लोग भी ऊपर —ऊपर से विचार करते हैं और गहरे पैठकर विचार करने की क्षमता प्राप्त नहीं करते। आप विचार कीजिए, एक चमार को, जो मरे हुए बकरों आदि जानवरों की चमड़ी उतारकर जूता, चरस, पखाल आदि बनाता है, आप नीच समझते हैं और उसे घृणा की दृष्टि से देखते हैं। पर आप ही कई सेठ कहलाने वाले भाई अपने मिलों में उपयोग करने के लिए सैंकड़ों नहीं, हजारों भी नहीं वरन् लाखों मन चर्बी काम में लाते हैं। यह कितने ताप की बात है? जब बेचारा चमार आपकी दूकान पर आता है तो आप लाल— लाल आंखें दिखाकर उसे डांट फटकार दिखलाते हैं, पर जब चर्बी वाले सेठजी आते हैं तो उन्हें उच्च आसन पर बैठने के लिए आग्रह करते हैं। यह सब क्या है? क्या यह आपका सच्चा इन्साफ है? नहीं मित्रों! यह घोर पक्षपात है और महापाप के बन्ध का कारण है?

मैं पहले कह चुका हूं कि श्रावक संकल्पजा हिंसा का त्यागी हो सकता है, किन्तु आरम्भजा हिंसा का नहीं। संकल्पजा हिंसा से पहले आरम्भजा हिंसा के त्याग करने का प्रयत्न करना मूर्खता है, क्योंकि उसका इस प्रकार त्याग होना सम्भव नहीं है। क्रम से काम होना श्रेयस्कर होता है।

कई बहिनें चक्की चलाने का त्याग करती हैं पर आपस में लड़ने-झगड़ने और गाली-गलौज करने में तनिक भी नहीं हिचकतीं। वे न इधर की रहती हैं, न उधर की रहती हैं। वे स्वयं नहीं पीसतीं, दूसरों से पिसवाती हैं। जो बहिन अपने हाथ से काम करती है वह यदि विवेक वाली है तो 'जयणा' रख सकती है, पर जो दूसरे के भरोसे रहती है वह कहां तक बच सकती है, यह आप स्वयं विचार देखिए।

मित्रों! अहिंसा को ठीक तरह से समझने के लिए मोटी—सी बात पर ध्यान दीजिए। अहिंसा के तीन भेद कीजिए—(१) सात्विकी, (२) राजसी और (३) तामसी। सात्विकी अहिंसा वीतराग पुरुष ही पाल सकते हैं। राजसी अहिंसा वह है जिसमें अन्याय के प्रतिकार के लिए आरम्भजा हिंसा करनी पड़े। जैसे राम और रावण का उदाहरण लीजिए। रावण सीता को हरण कर ले गया। राम ने सीता को मांगा, पर रावण लौटाने को तैयार न हुआ। तब लाचार होकर राम ने रावण के विरुद्ध शस्त्र उठाया और उसका नाश किया। यह हिंसा तो अवश्य है पर इसे राजसी अहिंसा की कहा जाता है। रावण ने शस्त्र उठाया—सो संकल्पजा हिंसा थी और राम की हिंसा आरम्भजा। दोनों में यह अन्तर है। राजसी अहिंसा सात्विकी अहिंसा से भिन्न श्रेणी की है पर तामसी अहिंसा से उच्च कोटि की है। तामसी अहिंसा कायरता से उत्पन्न होती है। अपनी स्त्री पर अत्याचार होते देखकर, जो क्षति पहुंचने या अपने मर जाने के डर से चुप्पी साधकर बैठ जाता है, अन्याय और अत्याचार का प्रतिकार नहीं करता,

लोगों के टोकने पर जो अपने-आपको दयालु प्रकट करता है, ऐसा नपुंसक तामसी अहिंसा वाला है। यह निकृष्ट अहिंसा है। इस अहिंसा की आड़ लेने वाला व्यक्ति संसार के लिए भार-स्वरूप है। वह कायर है और धर्म का, जाति का तथा संस्कृति का घातक है।

मित्रों! विवेक के साथ अहिंसा का स्वरूप समझो। क्रमशः अहिंसा का पालन करते हुए अन्त में पूर्ण अहिंसक बनों। ऐसा कोई व्यवहार मत करो जिससे तुम्हारे कारण धर्म की अप्रतिष्ठा हो। इसी में तुम्हारा और जगत् का कल्याण है।

सत्याग्रह

सकडालपुत्र ने भगवान् महावीर का धर्म अंगीकार कर लिया है, यह सुनकर उसका पूर्वगुरु गोशालक अपने धर्म पर पुनः आरूढ़ कराने के लिए उसके पास आया।

मित्रों! यह कह देना आवश्यक है कि जिसकी धर्म पर पूरी आस्था हो जाती है उसे फिर कोई डिगा नहीं सकता। महावीर के धर्म में और गोशालक के धर्म में एक बड़ा अन्तर यह था कि महावीर आत्मा को कर्त्ता मानते थे और संसार में इसी सिद्धान्त का प्रचार कर रहे थे, जब कि गोशालक इस सिद्धान्त से बिल्कुल अनभिज्ञ था। वह नियतिवादी था। उसका कहना था कि जो कुछ होता है वह होनहार अर्थात् भवितव्यता से ही होता है। सकडाल भी पहले इसी मत को मानने वाला था, परन्तु अब उसे इस पर विश्वास नहीं रहा था। अब वह दृढ़तापूर्वक यह मानने लगा था कि जो कुछ होता है, वह आत्मा के कर्म का ही फल है।

आत्मा को कर्त्ता मानने वाले भारत में और भी बहुत से धर्मनायक हो गये हैं। गीता में श्रीकृष्ण ने अर्जुन को ऐसा ही उपदेश दिया था—

उद्धरेदात्मनात्मानं, नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैवात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः।।

अर्थात्—हे अर्जुन! अपनी आत्मा के द्वारा ही आत्मा का उद्धार करो। आत्मा ही अपना बन्धु और आत्मा ही अपना रिपु है।

गीता के इस उद्धरण से आप लोग समझ गये होंगे कि महावीर प्रभु के उपदेश में और श्रीकृष्ण के उपदेश में कितनी समानता है। 'अप्पा कत्ता विकत्ता य' का उपदेश 'उद्धरेदात्मनात्मन' से बिल्कुल मिलता-जुलता है।

इस सिद्धान्त के विरुद्ध होनहार को कर्त्ता मानने पर हमारे सामने ऐसे-ऐसे अनेक प्रश्न उपस्थित हो जाते हैं, जिनका निराकरण नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए, कल्पना कीजिए एक लड़का स्कूल में पढ़ने जाता है। प्रश्न यह है कि उसे पढ़ाने— लिखाने, प्रश्नोत्तर करने आदि की क्या आवश्यकता है? भवितव्यता को गत मान लेने पर इस पर माथापच्ची की कुछ भी उपयोगिता नहीं रह जाती। अगर लड़का विद्वान होना है तो वह भवितव्यता के अनुसार स्वयं विद्वान हो जायेगा। पर लोकव्यवहार में हम इससे उल्टा ही देखते हैं। शिक्षक लड़के को पढ़ाता है और लड़का स्वयं पुरुषार्थ करता है तब वह पढ़-लिख कर विद्वान बनता है। [illegible]

और शिष्य दोनों उद्योग करना छोड़ दें और होनहार के भरोसे बैठ रहें तो परिणाम क्या आएगा, यह समझने में कठिनाई नहीं हो सकती। इससे यही परिणाम निकलता है कि कर्त्ता के बिना कर्म होना शक्य नहीं है। मिट्टी में घड़ा बन जाने की शक्ति अवश्य है, पर कुम्भकार के बिना घड़ा बन नहीं सकता। भवितव्यता पर निर्भर रह कर अगर बहिनें चूल्हे के पास आटा रख दें तो रोटी बन सकती है? मैं समझता हूं, भवितव्यता के भरोसे बैठकर सारा संसार यदि चार दिन के लिये अपना-अपना उद्योग छोड़ दे तो संसार की ऐसी दुर्गति हो कि जिसका ठिकाना न रहे। संसार में घोर हाहाकार मच जायेगा। इस प्रकार भवितव्यता का सिद्धांत अपने-आप में पोच ही नहीं है वरन् वह मानव-समाज की उद्योगशीलता में बड़ा रोड़ा है और लोगों को निकम्मा एवं आलसी बनाने वाला है। यही सब सोच कर सकडाल ने भगवान् महावीर का सिद्धान्त भक्तिपूर्वक स्वीकार कर लिया।

ज्यों ही गोशालक सकडाल के पास पहुंचा, सकडाल ने समझ लिया कि मेरे यह पूर्वगुरु फिर अपना सिद्धान्त मनवाने आये हैं। सकडाल ने गोशालक की तरफ से मुंह फेर लिया। उसके ललाट पर बल पड़ गये। गोशालक मूर्ख तो था नहीं। वह बड़ा बुद्धिमान् और विचक्षण था। वह सकडाल का अभिप्राय ताड़ गया।

मित्रों! यह विचारणीय है कि गोशालक सकडाल का पूर्वगुरु था। फिर उसने अपने पुराने गुरु के प्रति ऐसा व्यवहार क्यों किया? इसका कारण यह है कि सकडाल को विश्वास हो गया था कि गोशालक का सिद्धान्त मेरे लिए और जगत् के लिए अकल्याणकारी है। ऐसे सिद्धान्तवादी के प्रति विनय-भक्ति प्रदर्शित करना उसके सिद्धान्त को मान देना है। इससे बड़े अनर्थ की सम्भावना रहती है। गोशालक के प्रति सकडाल के व्यवहार का यही कारण था। इसी का नाम असहयोग है।

जिस प्रकार धर्म-सिद्धान्त के लिये मनुष्य को असहयोग करना आवश्यक है, उसी प्रकार लौकिक नीतिमय व्यवहारों में अगर राज्यशासन की ओर से अन्याय मिलता हो तो ऐसी दशा में राज्यभक्तियुक्त सविनय असहकार असयोग—करना प्रजा का मुख्य धर्म है। वह प्रजा नपुंसक है जो चुपचाप अन्याय को सहन कर लेती है और उसके विरुद्ध चूं तक नहीं करती। ऐसी प्रजा अपना ही नाश नहीं करती परन्तु उस राजा के नाश का भी हेतु बन जाती है, जिसकी वह प्रजा है। जिस प्रजा में अन्याय के पूर्ण प्रतिकार की सामर्थ्य नहीं है उसे कम-से-कम इतना तो प्रकट कर ही देना चाहिए कि अमुक कानून या कायदे हमारे लिए हितकर नहीं है और हम उसे नापसंद करते हैं।

प्रजा को बिगाड़ना राजनीति नहीं है। राजा वही कहलाता है जो प्रजा की सुव्यवस्था करे जो राजा प्रजा की सुव्यवस्था नहीं करता और प्रजा को कुव्यसनों में डालता है, जो अपनी आमदनी बढ़ाने के लिये आबकारी जैसे प्रजा के स्वास्थ्य को नष्ट करने वाले विभाग स्थापित करता है, फिर भी प्रजा अगर चुपचाप बैठी रहती है तो समझना चाहिए वह प्रजा कायर है।

प्रजा के हित का नाश कनरे वाली बातें कानून के द्वारा रोकने वाला राजा, राजा कहलाने योग्य नहीं है।

राजा के भय से अपकारक कानून को शिरोधार्य करना धर्म का अपमान करना है। धर्मवीर पुरुष राजा के अपकारक कानून को ही नहीं ठुकराता, पर राजा और प्रजा के किसी खास भाग द्वारा भी अगर कोई ऐसा कानून बनाया गया हो तो उसे भी उखाड़ फेंकने की हिम्मत रखता है।

कोणिक राजा द्वारा हार और हाथी लेने चेडा श्रावक ने क्या किया था, जरा इस पर दृष्टि डालिए। उसने राजा और राज्य के विरुद्ध इस अन्याय का प्रतिकार करने के लिए लड़ाई छेड़ दी। धर्मवीर थोथी शान्ति नहीं करते। वे जानते हैं, थोथी शांति से सत्य का खून होता है।

प्रायः आजकल के श्रावक थोथी शांति के हिमायती होते हैं। 'अरे कहीं लड़ाई हो जायगी, दंगा मच जायेगा, लोग अपने विरुद्ध हो जाएंगे, ऐसा हो जायगा, वैसा हो जायगा, हमें तो चुप्पी साध लेनी चाहिए, विगाड़ हो तो अपना क्या सुधार हो तो अपना क्या' इत्यादि कहा करते हैं। यह उनकी वास्तविक शान्तिप्रियता नहीं है। यह शान्ति का ढोंग है और अन्दर धधकती हुई आग फैलने में सहायक होना है।

सम्भव है, आप मेरी बात का रहस्य न समझें हों। यदि ऐसा ही हो तो यह दोष आपका नहीं, मेरा है क्योंकि मेरी तपस्या अब तक इतनी निर्बल है कि मैं आपको समझाने में असमर्थ हो जाता हूं।

मेरे कथन का आशय यह है कि मनुष्य को हर हालत में सत्य का पालन करना चाहिए। सत्य का पालन न करने वाले के कार्य, चाहे वे कैसे ही हों, नाटक के सदृश हैं। सत्य का पालन करने के लिए आपको चाहिए कि अगर मुझ में कोई पालिसी नजर आती हो तो मुझसे अलग रहें और मुझे चेतावें। ऐसा न करने से साधु भी असाधु बन जाता है। सत्य के बिना कभी कोई वस्तु टिक नहीं सकती। अरणक के जहाज में हजारों आदमी बैठे थे। देवता ने कहा —'तू असत्य बोल, नहीं तो जहाज उलटता हूं।' पर अरणक अटल रहा। वह असत्य न बोला। अगर अरणक असत्य बोलता तो जहाज टिक सकता था? सत्य ही के प्रभाव से जहाज बचा था।

सारी राजगृही नगरी सुदर्शन पर हंसती थी, पर सुदर्शन ने किसी की परवाह न की। उसे सत्य पर भरोसा था और सचमुच ही सत्य की विजय हुई। सुदर्शन पर हंसने वालों को अपने ही ऊपर हसने का अवसर आते देर न लगी।

कौरवों और पाण्डवों के युद्ध में महाविचक्षण भीष्म और द्रोण आदि दुर्योधन की तरफ थे। वे जानते थे कि दुर्योधन का पक्ष न्यायसंगत नहीं है और युधिष्ठिर न्यायपक्ष पर है। पर वे लोग दुर्योधन का अन्न खाते थे, इसलिए उसके विरुद्ध शस्त्र उठाना अनुचित समझते थे। फिर भी उन्होंने अपने हृदय के भाव स्पष्ट रूप से विना हिचकिचाहट दुर्योधन के आगे प्रगट कर दिये।

मैं यह अभी कह चुका हूं कि अन्याय के प्रति असहयोग न करने से बड़ा भारी अनर्थ हो जाता है। इस कथन की पुष्टि के लिए महाभारत के युद्ध पर ही दृष्टि डालिए। अगर भीष्म और द्रोण आदि महारथियों ने कौरवों से असहयोग कर दिया होता तो इतना भीषण रक्त-पात न होता और इस देश के अधःपतन का श्रीगणेश भी न होता। अन्याय से असहयोग न करने के कारण रक्त की नदियां बहीं और देश को इतनी भीषण क्षति पहुंची कि सदियां व्यतीत हो जाने पर भी वह सम्भल न सका।

कौन—सा कार्य न्यायसंगत है और कौन-सा अन्याययुक्त है, किस कानून से प्रजा के कल्याण की सम्भावना है और किससे अकल्याण की, यह वात प्रत्येक मनुष्य नहीं समझ सकता। समझदारों को चाहिए कि वे प्रजा को इस वात का ज्ञान कराएं। जो व्यक्ति समय-समय पर प्रजा को अपनी भलाई-बुराई का ज्ञान कराते हैं और बुराई से हटाकर भलाई की ओर ले जाते हैं, जनता का पथ-प्रदर्शन करते हुए स्वयं आगे-आगे इस पथ पर चलते हैं, उन्हें जनता अपना पूज्य नेता मानती है और उन्हें श्रेष्ठ पुरुष मानकर उनके पीछे-पीछे चलती है। गीता में कहा है—

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्त्तते।।

मित्रों! सकडाल, जाति का कुम्हार होने पर भी श्रेष्ठ पुरुषों में गिना जाता था। अगर यह गोशालक के सिद्धान्तों से असहयोग न करता तो दूसरे भोले लोग इस सिद्धान्त के आगे सिर झुका देते और अकर्मण्य वन जाते।

आप स्वयं विचार कीजिए कि कर्त्ता को भूल जाने से क्या काम चल सकता है? सिर्फ होनहार के भरोसे बैठे रहने से कोई काम बन सकता है? मैं अभी कह चुका हूं कि होनहार के भरोसे रोटी बनाने का काम दो-चार रोज के लिए भी अगर ये बहनें स्थगित कर दें तो कैसी स्थिति उत्पन्न हो जाय? होनहार पर निर्भर रहकर अगर पुरुष एक दिन भी वस्त्र धारण न करें तो कैसी वीते? नंगा रहने के लिए किसे दण्ड दिया जा सकता है? जब होनहार को ही स्वीकार कर लिया तो किसी भी अपराध का कर्त्ता कोई मनुष्य नहीं ठहरता।

नियतिवादी के सामने कोई डंडा लेकर खड़ा हो जाय और उससे पूछे —'वताओ, यह डंडा तुम्हारे सिर पर पड़ेगा या कमर पर?' वह क्या उत्तर देगा? यही कि जहां तुम मारना चाहोगे वहीं! इससे क्या यह मतलव न निकला कि नियति (होनहार) कर्त्ता नहीं है। जहां मारने वाला मारना चाहेगा वहीं डंडा पड़ेगा, इससे सिद्ध हुआ कि होनहार मारने वाले के हाथ में है।

आप लोग महावीर के शिष्य होकर भी कहां तक कहते रहोगे कि —'हम क्या करें? हमारे हाथ में क्या है? जो कुछ होना है वह तो होकर ही रहेगा।' कभी आप काल पर उत्तरदायित्व थोप देते हैं —क्या करें, समय ही ऐसा आ गया है!' और कभी स्वभाव का रोना रोने लगते हैं—'लाचारी है, इसका स्वभाव ही ऐसा पड़ गया है!' खेद! आप महावीर के अनुयायी होकर जड़ पर जवावदारी डालते हैं! भूल होती है आपकी और जवाबदारी डाली जाती है जड़ पर, यह कैसी उल्टी समझ है? आप यह क्यों नहीं कहते कि दोष हमारा है। हम स्वयं ऐसे हैं!

जो मनुष्य अपना दोष स्वीकार कर लेता है उसकी आत्मा वहुत ऊंची चढ़ जाती है। अपनी भूल वताने वाले को अपना गुरु मानो और भूलों का साहस के साथ निराकरण करो तो फिर देखना तुममें कितना चमत्कार आ जाता है।

किसान वर्षा ऋतु आने पर खेत में हल न चलाए तो क्या होगा? अगर वह सोचने लगे कि खेती होनी है, धान्य उपजना है, तो कौन रोक सकता है? अगर धान्य नहीं उपजता है, तो मेरे प्रयत्न करने पर भी नहीं उपजेगा। दोनों हालतों में मेरा प्रयत्न व्यर्थ है। जैसी होनहार होगी, वही होगा। तव काहे को अपने शरीर का पसीना बहाऊं!

इसी प्रकार जुलाहा भी होनहारवादी बनकर बैठा रहे और जगत् के समस्त कार्यकर्ता यही सोचने लगें तो जगत् के व्यवहार कितनी देर तक जारी रह सकेंगे? कहिए, इस सिद्धान्त से संसार का काम चल सकता है?

'नहीं चल सकता!'

इस सिद्धान्त को मानकर जनता कहीं अकर्मण्य न बन जाय, यह सोचकर सकडाल को गोशालक के साथ असहयोग करना पड़ा। महावीर का सिद्धान्त उसे रुचिकर और हितकर प्रतीत हुआ। महावीर पुरुषार्थवादी थे। वे आत्मा को कर्त्ता मानते थे।

मित्रों! सकडाल ने अन्याय से असहयोग कर दिखाया। सकडाल जाति का कुम्हार था। मिट्टी के बर्तनों की ५०० दुकानों का मालिक था। तीन करोड़ स्वर्ण-मोहरों का अधिपति और दस हजार गायों का प्रतिपालक था। सदा नीतिपूर्ण व्यवहार का ध्यान रखता था।

गोशालक के प्रति असहयोग करके भी सकडाल ने अपनी सभ्यता नहीं गंवाई। गोशालक के जाने पर वह उठा नहीं, इसका कारण यह था कि गोशालक अपने सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करने गया था। उस समय उसका 'मिशन', अपने सिद्धान्त को स्वीकार कराना था। सच्चा असहयोगी किसी व्यक्ति—विशेष की अवज्ञा नहीं करता। किसी व्यक्ति के प्रति उसके हृदय में घृणा या द्वेष का भाव नहीं होता। असहयोगी अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर अन्याय का प्रतिकार करता है और अन्यायी को सहयोग न देना भी अन्याय के प्रतिकार के अनेक रूपों में से एक रूप है। असहयोग प्रत्येक मनुष्य का न्यायसंगत अधिकार है, यदि उसकी सब शर्तें यथोचित रूप में पालन की जाए।

सकडाल के असहयोग के कारण गोशालक को निराश होना पड़ा, वह भगवान महावीर के सिद्धान्त पर अटल और अचल रहा।

यहां वैठे हुए भाइयों में शायद ही कोई होनहारवादी होगा। पर ऐसे बहुत-से लोग मिलेंगे जो कहा कहते हैं—'भगवान् करते हैं सो होता है। उनकी मान्यता यह है कि हमारे किये कुछ नहीं होता। हम नाचीज हैं। हम भगवान् के हाथ की कठपुतली है। वह जैसा नचाता है, हमें नाचना पड़ता है।'

मैं कहता हूं, भाइयों! इस भ्रम को दूर कर दो। इससे तुम्हारे विकास में, तुम्हारी क्षमता में और तुम्हारे पुरुषार्थ में बाधा पड़ती है। इस भ्रम के कारण तुम्हारी स्वातन्त्र्य-भावना दब गई है। गीता को देखो। वह कहती है—

न कर्तृत्वं न कर्माणि, लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्त्तते।।

परमात्मा किसी मनुष्य का न कर्तृत्व बनता है, न कर्म। न वह कर्त्ता को कर्मफल देने की व्यवस्था ही करता है। यह सब माया करती है।

जैन भाई भी अन्धविश्वास से दूर नहीं है। वे भी 'क्या करें महाराज, कर्मों की गति!' कहकर अपना सारा दोष कर्मों के सिर मढ़ देते हैं। मानों कर्म विना किये हुए ही उन्हें फल देने आ टूटे हैं। स्वयं कुछ करने वाले ही नहीं हैं।

मित्रों! आज गोशालक दिखाई नहीं देता, पर उसका उपदेश गोशालक का सूक्ष्म रूप धारण करके आपके समाज में घूम रहा है। आप अपनी उद्योगशीलता को भूल रहे हैं। आपने अपनी क्षमता की ओर से दृष्टि फेर ली है। आप अपने-आपको अकिंचित्कर मान बैठे हैं। यह दीनता का भाव दूर करो। अपनी असीम शक्ति को पहचानो। सच्चे वीरभक्त हो तो अपने को कर्त्ता—कार्यक्षम मानकर कल्याणमार्ग के पथिक वनो।

किसी भी दूसरे की शक्ति पर निर्भर न वनो। समझ लो, तुम्हारी एक मुट्ठी में स्वर्ग है, और दूसरी में नरक है। तुम्हारी एक भुजा में अनन्त संसार है और दूसरी भुजा में अनन्त मंगलमयी मुक्ति है। तुम्हारी एक दृष्टि में घोर पाप है और दूसरी दृष्टि में पुण्य का अक्षय भण्डार भरा है। तुम निसर्ग की समस्त शक्तियों के स्वामी हो, कोई भी शक्ति तुम्हारी स्वामिनी नहीं है। तुम भाग्य के खिलौना नहीं हो वरन् भाग्य के निर्माता हो। आज का तुम्हारा पुरुषार्थ कल भाग्य बनकर दास की भांति, तुम्हारा सहायक होगा। इसलिए हे मानव! कायरता छोड़ दे। अपने ऊपर भरोसा रख। तू सब कुछ है, दूसरा कुछ नहीं है। तेरी क्षमता अगाध है। तेरी शक्ति असीम है। तू सामर्थ है। तू विधाता है। तू व्रह्मा है। तू शंकर है। तू महावीर है। तू वुद्ध है।

स्त्री-शिक्षा

१-शिक्षा का प्रभाव

शिक्षा मनुष्य के नैतिक और सामाजिक स्तर को ऊंचा उठाने का साधन है। वह जीवन को सभ्य, सुसंस्कृत एवं सहानुभूतिशील बनाने की योग्यता प्रदान करती है। वर्तमान में शिक्षा प्राप्ति के उद्देश्य को ध्यान में लेकर, उसकी परिभाषा संकुचित क्षेत्र में करते हुए चाहे उसे हम अर्थप्राप्ति का साधन कहें पर ऐसा कहना मूलतः गलत होगा। शिक्षा का उद्देश्य कभी अर्थप्राप्ति नहीं। सामाजिक क्षेत्र में शिक्षा जीवन के वातावरण को अधिक सुखमय और सरस बनाती है —हमें निचाई से ऊंचाई पर प्रतिष्ठित करती है। वह एक प्रकार का नव जीवन सा प्रदान करके कई बुराइयों से बचाकर अच्छाइयों की ओर ले जाने को प्रेरित करती हैं।

मानव इतिहास की ओर हलका-सा दृष्टिपात करने पर हमें शिक्षा की उपयोगिता और उसका प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर हो जायगा। किसी जमाने में मनुष्य आज की भांति सभ्य एवं संस्कृत नहीं थे। उनका खान-पान, रहन-सहन तथा वातावरण बिल्कुल भिन्न था। वृक्षों के वल्कल धारण कर अथवा नग्न ही रह कर अपना जीवन-यापन करते थे। माता, पिता, बंधु आदि के प्रति भी जैसे स्नेह और कर्त्तव्यपालन की दृष्टि होनी चाहिए, वैसी न थी। यों कहना चाहिए कि कौटुम्बिक भावना ही जागृत नहीं हुई थी। न उनका कोई निश्चित निवास-स्थान था और न कोई निश्चित वस्तुएँ ही थीं, जो उनके भोजनादि के प्रबन्ध के लिए उपयुक्त थीं। जहाँ जो चीज मिल गई, उसी का उपयोग करते थे। और जहाँ रात्रि में स्थान मिला, विश्राम करते थे। न वहाँ कोई सामाजिक अथवा राजनीतिक बन्धन थे और न कायदे कानून। मनुष्य अपने आप में ही सीमित था और प्रकृति पर ही निर्भर था।

लेकिन आज.... ? सामाजिक जीवन में आकाश और पाताल का अन्तर है। यही शिक्षा का प्रभाव है। इसी मापदण्ड से हम शिक्षा की उपयोगिता का अनुमान सहज ही लगा सकते हैं। जीवन में जितनी जागृति और उन्नति होती है, वह केवल शिक्षा से ही। जैन शास्त्रों के अनुसार इस युग में प्रथम तीर्थंकर श्री ऋषभदेवजी ने ही सर्व प्रथम शिक्षा का प्रचार किया था। उन्होंने ही कृषिविद्या, पाक विज्ञान, बुनाई विज्ञान आदि की शिक्षा लोगों को दी। पुरुषों के लिए बहत्तर कलाएं दी तथा स्त्रियों के लिए चौसठ। इस प्रकार लोगों को सभी प्रकार से शिक्षित कर उन्होंने सभ्यता तथा संस्कृति का प्रथम पाठ पढ़ाया। तभी से आज तक वह परम्परा अबाध गति से चली आ रही है। यद्यपि समय-समय पर राजनैतिक परिस्थितियों के अनुसार उसमें परिवर्तन भी बहुत हुए।

शिक्षा को हम मुख्य रूप से दो भागों में विभाजित कर सकते हैं —(१) फल-प्रदायिनी (२) प्रकाशिनी। फल-प्रदायिनी शिक्षा विशेष रूप से मनुष्य का सामाजिक स्तर ऊंचा लाती है। किस प्रकार से भिन्न-भिन्न कार्य किए जाने पर उत्तम रीति से पूर्ण होंगे, वह इसमें बताया जाता है। सिलाई, बुनाई, कृषि, शरीर-विज्ञान आदि शिक्षा इसी कोटि में आ सकती है।

प्रकाशिनी शिक्षा क्रियात्मक रूप से किसी विशेष कार्य की पूर्णता के लिए नहीं होती। उसका कार्य है—भिन्न-भिन्न वस्तुओं के गुणों और उनके प्रभाव पर प्रकाश डालना। भौतिक वस्तुओं के सिवाय आध्यात्मिक क्षेत्र में भी इसकी पहुँच रहती है। दर्शन, धर्मशास्त्र, रसायनशास्त्र, इतिहास, भूगोल आदि को हम इसके अन्तर्गत ले सकते हैं। यह शिक्षा भी परोक्ष रूप से जनता के सामाजिक स्तर को उन्नत करने में महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त करती है। आध्यात्मिक क्षेत्र में भी यह लोगों के नैतिक स्तर को ऊंचा उठाती है।

शिक्षा मनुष्य के रहन-सहन में अपूर्व परिवर्तन कर देती है। इसके विना हम वहुत-सी वस्तुओं से विल्कुल अज्ञात रह सकते हैं जो हमारे जीवन में सफलता प्रदान करने में सहायक हो सकती है। किसी भी क्षेत्र में अशिक्षा सफल नहीं हो सकती। दूसरे शव्दों में अशिक्षित कुछ भी नहीं कर सकता।* किसी भी विषय में निपुणता और दक्षता प्राप्त करने के लिए शिक्षा अपेक्षित है। एक डाक्टर कभी सफल नहीं हो सकता, जव तक वह पूर्ण रूप से शरीर विज्ञान और रसायनशास्त्र का गहरा अध्ययन न कर ले। मनुष्य सफल व्यापारी भी तव तक नहीं बन सकता, जव तक वह अर्थशास्त्र, भूगोल आदि का अच्छा अध्ययन नहीं कर लेता। कृषि विद्या, सिलाई, बुनाई आदि की भी क्रियात्मक शिक्षा के अभाव में अपूर्णता ही है।

इस प्रकार सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि शिक्षा के अभाव में समस्त जीवन ही अपूर्ण है। किसी भी एक क्षेत्र में निपुणता प्राप्त करके ही जीवन निर्माण किया जाता है। किसी भी देश की अवनति के कारणों का यदि पता लगाया जाय तो स्पष्ट प्रतीत होगा कि शिक्षा का अभाव ही इसका मुख्य कारण है।

शिक्षा के अभाव में कई बुराइयां स्वतः घर कर लेती हैं। अयोग्यता के कारण एक प्रकार की अज्ञानता फैल जाती है, जिसके कारण गृह-कलह, अन्धविश्वास, फूट आदि समाज में फैलते हैं। शिक्षा के अभाव में किसी भी वस्तु को तर्क और योग्यता की कसौटी पर कस कर लोग नहीं देख सकते। परम्परा से चली आती हुई परिपाटी तथा रीति रिवाजों को नहीं छोड़ना चाहते। इतना ही नहीं बल्कि समय की गति के अनुसार उसमें तनिक-सा भी परिवर्तन नहीं करना चाहते, चाहे वह खुद के लिए व समाज के लिए कितनी ही हानिप्रद क्यों न हो!

शिक्षा से अभिप्राय यहां केवल विशेष रूप में स्त्री या पुरुष की ही शिक्षा से नहीं, लेकिन समान रूप से दोनों की शिक्षा से है। स्त्री और पुरुष समाज के दो महत्त्वपूर्ण अंग हैं। किसी एक को विशेष महत्त्व देकर और दूसरे की पूर्ण रूप से अवहेलना कर समाज की उन्नति नहीं की जा सकती। उन्नति के लिए यह परमावश्यक है कि स्त्री और पुरुष समाज के दोनों ही अंग शिक्षा प्राप्त करें।

२-स्त्रीशिक्षा

वहुत समय से स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर के भीतर ही समझा जाता है। समाज ने इस ओर कभी दृष्टिपात ही नहीं किया कि घर की दुनिया के बाहर भी उनका कुछ कार्य हो सकता है। भोजन बनाना, चक्की पीसना, पति की आज्ञा का पालन कर उसे सदैव सुखी और सन्तुष्ट रखने का प्रयत्न करना ही उसके जीवन का उद्देश्य रहा है। इन कार्यों के लिए भी शिक्षा की उपयोगिता हो सकती है, इसका कभी विचार भी नहीं किया गया। बालिकाओं को शिक्षा देने का प्रयत्न किया गया तो वह भी उतना ही जिससे पत्र पढ़ना और लिखना आ सके और पति का मनोरंजन किया जा सके। प्राचीन योरप में ऐसी ही मनोवृत्तियां लोगों में फैली हुई थीं। स्त्रियों का स्थान वहां भी वहुत संकुचित था। अधिक शिक्षा प्राप्त करना और वाहरी दुनियां से सम्पर्क बहुत अनावश्यक समझा जाता था। सीना-पिरोना, चर्खा कातना, भोजन बनाना आदि जानना ही उनके लिए पर्याप्त था। पुरुषों की शिक्षा का प्रयत्न भी वहुत वाद में किया गया था और उसमें कुछ उन्नति हो जाने पर भी, स्त्रियों के लिए भी शिक्षा उपयोगी हो सकती है, इसका किसी ने विचार तक नहीं किया।

---

* अन्नाणी किं काही, किं वा नाही सेय-पावगं ?

—दशवैकालिकसूत्र

भारत वर्ष में प्राचीन काल में स्त्रियां काफी शिक्षित होती थी। घर के वाहर भी उन्हें वहुत कुछ स्वतंत्रता प्राप्त थी। जैन समाज में भी उस समय स्त्रियों में काफी जागृति थी। सती ब्राह्मी ने शिक्षा प्रारम्भ करके महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। ब्राह्मी लिपि भी उन्हीं के नाम से चली। सोलह सतियों में से प्रत्येक ६४ कलाओं में निपुण होने के साथ-साथ बड़ी विदुषी थीं। साधारण पुस्तकीय ज्ञान के अलावा उन्होंने उत्कृष्ट संयम द्वारा विशिष्ट ज्ञान भी प्राप्त किया था। उनकी योग्यता के लिए क्या कहा जाय? स्त्री-शिक्षा और स्त्री-स्वातन्त्र्य का अनुमान इतने से ही सहज में लगाया जा सकता है। विद्या की अधिष्ठात्री देवी भी सरस्वती ही मानी गई है।

स्त्री जाति का पतन मुसलमानों के आगमन के साथ-साथ हो रहा था। धीरे-धीरे उन्हें पहिले जैसी स्वतंत्रता न रही, उनका कार्यक्षेत्र सीमित होता गया और अन्त में उनका पतन चरम सीमा तक पहुंच गया। उनकी शिक्षा के प्रश्न को समाप्त कर दिया गया। पाश्चात्य देशों में तो उसमें बहुत सुधार हो चुका है पर भारतवर्ष में अभी बहुत सुधार की आवश्यकता है।

कहते हैं वर्तमान युग में स्त्रीशिक्षा की विशेष आवश्यकता का अनुभव सर्वप्रथम जापान के मि. नारू ने किया था। उस समय वहां की स्त्रियों की हालत बहुत खराब थी। उनमें जरा भी नैतिकता की भावना न थी। वे अत्यन्त पतित-अवस्था को पहुंच चुकी थी। मि. नारू ने अनुभव किया कि राष्ट्र के उत्थान के लिए स्त्रियों का सुशिक्षित और उन्नत होना नितान्त आवश्यक है। उन्होंने यह भी समझने का प्रयत्न किया कि स्त्रियों और पुरुषों की शिक्षा साधारण रूप से एक ही प्रकार की नहीं हो सकती, कुछ न कुछ भिन्नता कार्यक्षेत्र और व्यक्तित्व की दृष्टि से होनी ही चाहिए। स्त्रियों के लिए साधारण और पुस्तकीय शिक्षा का उद्देश्य मानसिक स्तर का उन्नत होना चाहिए। महिलाओं की प्रतिभा का सर्वतोमुखी विकास करना ही उनकी शिक्षा का उद्देश्य है। वह विकास शारीरिक, वौद्धिक और मानसिक तीनों प्रकार का होना चाहिए। शिक्षा का ध्येय ऐसा हो, जिससे वे जीवन में योग्यता-पूर्वक अपने कर्त्तव्य को पूर्ण कर सकें और स्वतन्त्रता से जीवन-पथ में अपना समुचित विकास कर अपनी प्रतिभा का सदुपयोग कर सकें। स्त्री शिक्षा की व्यवस्था करते हुए हमें यह न भूलना चाहिए कि उनका कार्य-क्षेत्र पुरुषों से कुछ भिन्न है। जीवन में उनका कर्त्तव्य सुगृहिणी और माता बनना है। हमारे समाज का बहुत प्राचीन काल से संगठन और श्रम-विभाजन भी ऐसा ही है, जिससे स्त्रियों के कर्त्तव्य पुरुषों से कुछ भिन्न हो गए हैं। यद्यपि दोनों में कोई मौलिक भेद नहीं है पर कौटुम्बिक जीवन की सरलता के लिए यह भेद किया गया। सुगृहिणी और माता बनना कोई ऐसी सरल वस्तु नहीं, जैसी आजकल समझी जाती है। माताओं के क्या-क्या गुण और कर्त्तव्य होने चाहिए, इस तरफ कोई दृष्टि नहीं डालता। उत्तम चरित्र और कार्य-सम्पादन की योग्यता होना उनमें सर्वप्रथम आवश्यक है।

परन्तु इतने में ही उनके कर्त्तव्य की इतिश्री नहीं हो जाती। यह कदापि नहीं भूलना चाहिए कि स्त्री, समाज और राष्ट्र की अभिन्न अंग है। उनके उद्धार का बहुत कुछ उत्तरदायित्व इन्हीं पर है। वैसे सफल और बुद्धिमति माता बनकर ही वे राष्ट्र की बहुत कुछ भलाई कर सकती हैं। पर वे पुरुषों के क्षेत्रों में भी, जहाँ उनकी प्रतिभा और रुचि हो, अपनी योग्यता द्वारा सफल कार्यकर्त्री और नेत्री हो सकती हैं, क्योंकि यह आवश्यक नहीं कि जो कार्य पुरुषों द्वारा सम्पादित हों, वे स्त्रियों द्वारा पूर्ण हो ही नहीं सकते। ऐसा न कभी हुआ है और न होगा। अगर उन्हें उचित शिक्षा और उचित स्वतन्त्रता दी जाय तो वे अपनी योग्यता का उपयोग कर समाज की काफी भलाई कर सकती हैं।

अतएव सर्वप्रथम स्त्रियों को मानव जाति के नाते शिक्षा दी जानी चाहिए, फिर स्त्रीत्व के नाते, जिससे कि वे एक सफल गृहिणी और सुशिक्षिता तथा उपयुक्त माता बन सकें। तीसरे, उन्हें राष्ट्र के एक अभिन्न अंग होने

'मां ।'

मगर खाने को देने से शस्त्र तीखा होता है, ऐसा कहने वालों की श्रद्धा के अनुसार तो बहिन लड़की की आंखों में काजल लगाकर शस्त्र तीखा कर रही है ? इसलिए न लड़की को खिलाना चाहिए और न आंखों में अंजन ही आंजना चाहिए। फिर तो उसे ले जाकर कहीं समाधि करा देना ही ठीक होगा। कैसा अनोखा विचार है। यह सब अशिक्षा का ही फल है।

लड़की की माता को पहिले ही ब्रह्मचारिणी रहना उचित था, तब मोह का प्रश्न ही उपस्थित न होता, लेकिन जब मोह-वश सन्तान उत्पन्न की है तो उचित लालन पालन तथा शिक्षित करके उस मोह का कर्ज भी चुकाना है। इसी कारण जैन शास्त्रों में माता-पिता और सहायता करने वाले को उपकारी बताया है। भगवान् ने कहा है कि सन्तान का लालन-पालन करना अनुकम्पा है।

तात्पर्य यह है कि जो माता अपनी कन्या की आंखें फोड़ दे उसे आप माता नहीं, बैरिन कहेंगे। लेकिन हृदय की आंखें फोड़ने वाले को आप क्या कहेंगे ? कन्या-शिक्षा का विरोध करना वैसा ही है जैसा अपनी संतति के ज्ञान-चक्षु फोड़ने में ही कल्याण मानना। जो कन्याओं की शिक्षा का विरोध करते हैं, वे उनकी शक्तियों का घात करते हैं। किसी की शक्ति का घात करने का किसी को अधिकार नहीं है।

अलबत्ता शिक्षा के साथ सत्संस्कारों का होना भी आवश्यक है। कन्याओं की शिक्षा की योजना करते समय यह ध्यान रखना जरूरी है कि कन्याएं शिक्षिता होने से साथ-साथ सत्संस्कारों से भी युक्त हों और पूर्वकालीन योग्य महिलाओं और सतियों के चरित्र पढ़कर उनके पथ पर अग्रसर होने में ही वे अपना कल्याण मानें। यही बात बालकों की शिक्षा के सम्बन्ध में भी आवश्यक है। ऐसी अवस्था में कन्याओं की शिक्षा का विरोध करना, उनके विकास में बाधा डालना और उनकी शक्ति का नाश करना है।

प्रत्येक समाज और राष्ट्र का भविष्य कन्या-शिक्षा पर मुख्य रूप से आधारित है। कन्याएं ही आगे होने वाली माताएं हैं। यदि वे शिक्षित और धार्मिक संस्कार वाली हैं तो उनकी संतान अवश्य शिक्षित और धार्मिक होगी। ये देवियां ही देश और जाति का उत्थान करने में महत्त्वपूर्ण भाग लेने वाली हैं। एक सुप्रसिद्ध राजनीतिज्ञ के कथनानुसार :

'यदि किसी जाति की भविष्य-संतानों के ज्ञान, आचरण, उन्नति और अवनति का पहिले से ज्ञान करना है तो उस समाज की वर्तमान बालिकाओं की शिक्षा, संस्कार, आचार और भाव प्रणालियों को देखो ये ही भावी सन्तानों के ढालने के ढांचे हैं।'

माँ ही बच्चे की प्रथम और सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षिका है। उसके चरित्र का गठन करने वाली भी वही है। इस दृष्टि से स्त्री समस्त राष्ट्र की माता हुई। समाज के वृक्ष को जीवित और सदैव हरा-भरा बनाए रखने के लिए बालिकाओं की शिक्षा अत्यन्त ही आवश्यक है। श्री ऋषभदेव जी आदि ६३ शलाका पुरुषों को जन्म देकर उत्तम संस्कार और चरित्र प्रदान करने वाली महिलाएं ही थीं। प्राचीन जैन इतिहास में स्पष्ट है कि जैन महिलाओं ने बड़े महत्त्वपूर्ण कार्य किये हैं। महारानी कैकेयी ने युद्ध के समय महाराज दशरथ की अनुपम सहायता कर अपूर्व साहस और कौशल का परिचय दिया। सती द्रौपदी ने स्वयंवर के पश्चात् समस्त विद्रोही राजाओं के विरुद्ध [illegible] रह कर उनके दमन में अपने पति अर्जुन और भाई धृष्टद्युम्न की सहायता की थी। सती राजुल ने आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत का पालन कर भारतीयों के लिए एक अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। पतिसेवा के लिए मैना

सुन्दरी और धर्म-दृढ़ता में सती चेलना भारतीय इतिहास में अमर हो गई हैं। उनका चरित्र, ज्ञान और त्याग महिलाओं के लिए सदैव अनुकरणीय रहेगा।

इतना सब होते हुए भी आजकल बहुत से लोग स्त्रीशिक्षा का तीव्र विरोध करते हैं। धर्मान्धता ही इसका मुख्य कारण है वे यह नहीं सोचते कि योग्य माताओं के विना समाज की उन्नति सर्वथा असम्भव है।

जैन शास्त्र स्त्रीशिक्षा का हमेशा समर्थन करते हैं। स्त्री को धर्म और अपने सभी कर्त्तव्यों का ज्ञान कराना नितांत आवश्यक है। अगर स्त्री मूर्ख तथा अज्ञानी रही तो यह अपने कर्त्तव्य को भूल सकती है। जैन शास्त्रों के अनुसार गृहस्थ रूपी रथ के स्त्री और पुरुष ये दो चक्र हैं। इन दोनों का सम्बन्ध कराकर मिलाने वाला वैवाहिक वन्धन है। वहुत लोग एक ही पहिए को अत्यन्त मजवूत और शक्तिशाली रखना चाहते हैं। किन्तु जब तक दोनों चक्र समान गुण वाले और समान शक्ति वाले न होंगे, रथ सुचारू रूप से नहीं चल सकता। उसकी गति में स्थिरता कभी नहीं आ सकती। पुरुष और स्त्री का स्थान बराबर होने के साथ ही साथ उनके अधिकार, शक्ति स्वतंत्रता में भी सदैव एकता लाने का प्रयत्न करना चाहिए। यद्यपि दोनों में कुछ भिन्नता भी अवश्य है पर वे एक दूसरे के पूरक हैं। दोनों का सुखमय जीवन उनके पूर्ण सहयोग और प्रेम पर निर्भर है।

अन्य पुस्तकीय शिक्षा के साथ-साथ बालिकाओं के शारीरिक विकास की ओर भी अधिक ध्यान दिया जाना चाहिए। इसके अभाव में उनका शरीर बहुत निर्बल होता है। एक तो वे स्वभावतः ही कोमल होती है और दूसरे उनका गिरा हुआ स्वास्थ्य, कायरपन और भीरुता बढ़ाने में सहायक होता है। वे पुरुष के और ज्यादा आश्रित रहती है। उनको किसी कार्य में स्वतन्त्रता प्राप्त नहीं होती, उन्हें सदैव दासता के बन्धन में बन्ध कर पुरुष की गुलामी करते हुए अपना जीवन निर्वाह करना पड़ता है। कहा गया है : स्वस्थ शरीर में ही स्वस्थ मन रहता है।

निर्वल और सदैव बीमार रहने वाली महिलाओं का जीवन सुखी नहीं रह सकता। परिवार के सभी सदस्य, चाहे कितने ही सहनशील क्यों न हो, हमेशा की बीमारी से तंग आ ही जाते हैं। पति के मन में भी एक प्रकार का असन्तोष-सा रहता है। गृहकार्य पूर्ण रूप से न होने पर अव्यवस्था होती है। अगर प्रारम्भ से ही शरीर की ओर पर्याप्त ध्यान दिया जाय तो बीमारियां नहीं हो सकतीं।

लड़कों के विद्यालयों में तो उचित खेल-खूद का भी प्रबन्ध रहता है पर बालिकाओं के लिए इसका पूर्ण अभाव-सा है। उनका स्वास्थ्य बुरी अवस्था में है। प्राचीन काल में स्त्रियां सभी गृहकार्य अपने हाथों से किया करती थीं, जिसमें कूटना, पीसना, खाना पकाना आदि आ जाते थे, जिससे उनका स्वास्थ्य ठीक रहता था। पर आजकल तो सभी कार्य नौकरों से करवाये जाने लगे हैं। हर एक कार्य के लगाए गए नौकरों से स्त्रियों का स्वास्थ्य बहुत गिरता जा रहा है। वे कुछ भी काम अपने हाथ से नहीं करना चाहती। उनकी इस निर्वलता का प्रभाव सन्तानों पर पड़ता है। वह भी बहुत अल्पायु और अशक्त होती है। कुछ-कुछ योरोपीय संस्कृति के प्रभाव से स्त्रियों की गृहकार्य करने में लज्ञा-सी होने लगी है। लेकिन योरोपीय महिला के रहन-सहन और भारतीय महिलाओं के रहन-सहन में वहुत अन्तर है। वे वहुत स्वतन्त्रतापूर्वक घूमने-घामने बाहर निकलती हैं। उचित व्यायाम और खेल-कूद आदि की भी उनके लिए सुव्यवस्था है। इसी कारण उनका स्वास्थ्य ठीक रहता है, पर भारतीय महिलाएं तो उनका अन्धानुसरण करके अपना और अपनी सन्तान का जीवन विगाड़ रही हैं।

स्त्रियों के लिए सर्वोत्तम और उपयुक्त व्यायाम गृहकार्य ही हैं। उन्हीं की उचित रूप से शिक्षा दी जानी चाहिए, जिससे वे अपना स्वास्थ्य ठीक कर सकें। चक्की चलाना वहुत अच्छा व्यायाम है। छाती, हृदय आदि इससे

मजबूत रहते हैं। शिक्षित स्त्रियां इन कार्यों को करने में बहुत लज्जा का अनुभव करती हैं। उनकी शिक्षा में गृहविज्ञान भी एक आवश्यक विषय होना चाहिए।

बहुत पहिले श्री मुंशी का स्त्रीशिक्षा पर एक लेख प्रकाशित हुआ था। इसमें स्त्रीशिक्षा के विभिन्न पहलुओं पर गम्भीरता से विचार किया गया था। उन्होंने कहा है :

'संसार के प्रत्येक राष्ट्र तथा मानव जाति के लिए स्त्रीशिक्षा का प्रश्न बहुत ही महत्त्वपूर्ण है। प्रत्येक देश की उन्नति और विकास एवं संसार का उत्कर्ष बहुत अंशों में इस महत्त्वपूर्ण समस्या को सन्तोषपूर्वक हल करने पर ही अवलम्बित है।'

इस समस्या को हल करने का प्रथम महत्त्वपूर्ण प्रयत्न उनकी शारीरिक विकास की योजनाओं को कार्यान्वित करना है। स्त्रियों के शारीरिक व मानसिक विकास के लिए उचित शिक्षा का प्रबन्ध करने के लिए देश के विभिन्न भागों में शिक्षा संस्थाएं स्थापित की जानी चाहिए, जहां पर पुस्तकीय शिक्षा के उपरांत चरित्र-निर्माण और शारीरिक विकास की ओर विशेष लक्ष्य दिया जाय। जो राष्ट्र इस प्रकार की संस्थाएं स्थापित नहीं कर सकता, उसे अपने उत्कर्ष का स्वप्न देखना भी असम्भव है। जिस देश की स्त्रियां कमजोर व निर्बल हों, उनसे गुणवान् और शक्तिमान् संतानों की क्या आशा की रखी जा सकती है? जिन महिलाओं ने शिक्षा के साथ-साथ अपने स्वास्थ्य को सुधारने का प्रयत्न किया, उनकी संतान भी निश्चित रूप से होनहार होगी और उन्हीं से तो राष्ट्र का निर्माण होना है। शरीर से स्वस्थ होने पर ही नारियां उच्च शिक्षा एवं उत्कृष्ट विचारों से साहसपूर्वक राष्ट्र की राजनैतिक और सामाजिक समस्याओं को हल करने की क्षमता रखेगी। साथ ही साथ आदर्श पत्नी और आदर्श माता बन कर अपना सामाजिक कर्त्तव्य पूर्ण करने में समर्थ होंगी। पुरुष स्त्री का आजन्म साथी है, सुख-दुःख में सदैव अपनी पत्नी के प्रति अपनत्व की भावना रखता है। स्त्री का भी पूर्ण कर्त्तव्य है कि सभी परिस्थितियों में पुरुष की सदैव सहायिका रहे। उसमें उतनी योग्यता होनी चाहिए कि पति की प्रत्येक समस्या पर गम्भीरता से वह विचार कर सके। तभी पति-पत्नी दोनों सच्चे सहयोगी और प्रेमी सिद्ध हो सकेंगे। स्त्री की शिक्षा इसी में पूर्ण नहीं हो जाती कि बीजगणित या रेखागणित का प्रत्येक सवाल शीघ्र हल कर सके या रसायन शास्त्र में अच्छी योग्यता रख सके, उसकी शिक्षा तो गृहस्थ जीवन को स्वर्ग बनाने में है। पति-पत्नी जहां जितने प्रेम से रह कर एक दूसरे के कार्य में रुचि रखेंगे, शिक्षा उतनी ही सफल सिद्ध होगी। उनकी शिक्षा तभी पूर्ण होगी, जब वे पुराने सभी उच्च विचारकों तथा कार्य-कर्त्ताओं के कार्यों का भलीभांति अध्ययन करके अपने दृष्टिकोण से विचार कर, अपने आदर्शों का उनके साथ तुलनात्मक रूप से विचार कर सकें, प्रत्येक इतिहास के पात्र के कार्यों और चरित्रों पर दृष्टि डाल कर समय और परिस्थितियों को देखकर उनके समान बनकर अपने व्यक्तित्व का निर्माण कर सकें। उन्हें ऐसी शिक्षा दी जानी चाहिए जिससे वे नियति के विपरीत भीषण आघातों से, जो सदैव पश्चाताप और शोक का पथ प्रदर्शन करते हैं, बचकर नूतन साहस से अपने कर्त्तव्य और पथ की ओर बढ़ती चली जाएं। उन्हें कभी निराशा अनुभव नहीं करनी चाहिए। सफलता और असफलता का जीवन में कोई महत्त्व नहीं। महत्त्व तो मनुष्य की प्रतिभा और प्रयत्नों का है।

हृदय में सहानुभूति दया, प्रेम, वात्सल्य आदि गुणों का विकास ही शिक्षा का उद्देश्य हो। उन्हें यह सिखाना चाहिए कि पीड़ा और शोक आंसू बहाने और निःश्वासों के द्वारा कम नहीं हो सकते। जीवन में वस्तुओं के प्रति जितनी उपेक्षा की जायेगी, वे वस्तुएं उतनी ही सुलभ और सुखमय हो जाएंगी। शिक्षा मानवता का पाठ [illegible] वाली हो। पीड़ा आखिर पीड़ा ही है। वह जितना हमें दुःखी करती है, उतनी ही दूसरों को। जितना हम [illegible] चाहते हैं, उतने ही दूसरे। हमारे हृदय और दूसरों के हृदयों में कोई मौलिक भेद नहीं। सहानुभूति की

भावना अपने परिवार तक ही सीमित नहीं होनी चाहिए। जितना विशाल हृदय बनाया जा सके, उतना ही बनाकर अधिक से अधिक लोगों में आत्मीयता का अनुभव करना ही शिक्षा का उद्देश्य हो। विश्व में ऐसे कई अबोध बालक, सरल महिलाएं और निरपराध मनुष्य हैं, जिन्हें दुनियां में कोई पूछने वाला नहीं। वे किसी के कृपापात्र नहीं। ऐसे लोगों के प्रति प्रेम और सहानुभूति का सम्बन्ध रखना ही ईश्वर में सच्ची श्रद्धा रखना है। ऐसे ही लोग भगवान् को प्रिय और उसके कृपापात्र होते हैं। अगर शिक्षा का रुख बीजगणित तक ही सीमित न रह कर इस तरफ हो तो विश्व में सुख, सन्तोष और आत्मीयता फैल सकती है।

● ●

बालिकाओं को अपने चरित्र-निर्माण की भी शिक्षा दी जानी चाहिए। लज्जा, विनय, शिष्टता सदाचार, शील आदि उनके आवश्यक गुण हैं। इनसे गृह-जीवन में शांति और प्रेममय वातावरण रहता है। माताओं को चाहिए कि बालिकाओं को ऐसे संस्कार दें जिनसे जीवन में ये गुण स्वाभाविक हो जाएं। उनका हृदय कोमल और दयार्द्र होना चाहिए। दीन, दुखियों और रोगियों की हालत देखकर उनमें कुछ सेवा और अपनत्व की भावना होनी चाहिए। गृहागत अतिथि या सम्बन्धी के उचित स्वागत की योग्यता भी होनी चाहिए।

भारतवर्ष में स्त्रीशिक्षा की बहुत दुर्दशा है। मुश्किल से पांच प्रतिशत महिलाएं यहां साक्षर होंगी। जापान में ९६ प्रतिशत और अमेरिका में ९३ प्रतिशत लड़कियां शिक्षित हैं। इसी प्रकार अन्य बहुत से देशों में लड़कों की शिक्षा से लड़कियों की शिक्षा पर अधिक जोर दिया जाता है किन्तु भारतवर्ष में स्त्री शिक्षा पर जोर नहीं दिया जाता है। इसके लिए बहुत कम व्यय किया जाता है। हमारे भाइयों का लक्ष्य बालिकाओं की शिक्षा की ओर जाता ही नहीं। शिक्षा के अभाव में नारियों की हालत आज अत्यन्त दयनीय है। वे अपना समय गृहकलह और व्यर्थ की टीका टिप्पणी में लगाती हैं। छोटे-छोटे बालकों पर भी वैसे ही संस्कार पड़ जाते हैं। माता के जैसे संस्कार और कार्य होंगे उनका असर तत्काल बच्चे पर पड़ेगा। अतएव स्त्रियों का शिक्षित होना जरूरी ही नहीं वरन अनिवार्य है शिक्षा पाए बिना नारियां अपना कर्त्तव्य पूर्ण रूप से निभाने में सफल न हो सकेंगी। ऋषभदेव की पुत्री ब्राह्मी ने ही भारतवर्ष में शिक्षा का प्रचार किया था। नारियों को इस बात का पूर्ण ज्ञान व अभिमान होना चाहिए कि हमारी ही बहिन ने भारत को शिक्षित बनाया था। उस देवी के नाम से भारतीय लिपि अब भी ब्राह्मी लिपि कहलाती है। ब्राह्मी का नाम सरस्वती है और अन्य ग्रन्थों में उसे ब्रह्मा की पुत्री बतलाया है। ऋषभदेव ब्रह्मा थे और उनकी पुत्री ब्रह्मा कुमारी थी। इस प्रकार दोनों कथनों से एक ही बात फलित होती है। जैन ग्रन्थों से पता चलता है कि ऋषभदेव की दूसरी पुत्री सुन्दरी ने गणित विद्या का प्रचार किया था।

संसार में स्त्री-पुरुष का जोड़ा माना गया है। जोड़ा वह है जिसमें समानता विद्यमान हो। पुरुष पढ़ा लिखा और शिक्षित हो और स्त्री मूर्खा हो तो उसे जोड़ा नहीं कहा जा सकता है। आप स्वयं विचार कीजिये कि क्या वह वास्तविक और आदर्श जोड़ा है ?

पहले यह नियम था कि पहले शिक्षा और पीछे स्त्री मिलती थी। प्रत्येक बालक को ब्रह्मचर्य-जीवन व्यतीत करते हुए विद्याभ्यास करना पड़ता था परन्तु आजकल तो पहिल स्त्री और पीछे शिक्षा मिलती है। जहां यह हालत है, वहां सुदृढ़ शारीरिक सम्पत्ति से सम्पन्न प्रकाण्ड विद्वान् कहां से उत्पन्न होंगे ?

स्त्री शिक्षा का तात्पर्य कोरा पुस्तक ज्ञान नहीं है। पुस्तक पढ़ना सिखा दिया और छुट्टी पाई, इससे काम नहीं चलेगा। कोरे अक्षर-ज्ञान से कुछ नहीं होने का, अक्षर ज्ञान के साथ कर्त्तव्य ज्ञान की शिक्षा दी जावेगी तभी शिक्षा का वास्तविक प्रयोजन सिद्ध होगा।

गुलामों सरीखा व्यवहार उनके साथ किया गया। दहेज प्रथा द्वारा उनका क्रय और विक्रय तय करने में वालिकाओं के माता-पिता को लज्जा का अनुभव नहीं होता था।

कई शताव्दियों तक स्त्रियों के ऐसी अवस्था में रहते हुए यही कहा जाने लगा है कि स्त्रियां स्वभावतः शारीरिक दृष्टि से कमजोर होती हैं। उन्हें स्वतन्त्रता स्वतः पसन्द नहीं, घर के सिवा वाहर जाना भी नहीं चाहती तथा पुरुषों की गुलामी ही में जीवन की सफलता समझती हैं। लेकिन यह वात पूर्ण रूप से असत्य है। अशिक्षा एवं अज्ञानता के कारण वह पृथक् रूप से अपना जीवन ही निर्वाह नहीं कर सकती, अतः उन्हें पति के आधीन रहना पड़ता है तथा दूसरे की गुलामी करनी पड़ती है, पर इसका यह तात्पर्य नहीं कि स्त्रियां गुलामी ही पसन्द करती हैं तथा स्वतन्त्रता उन्हें पसन्द नहीं है। आजीविका की सवसे बड़ी समस्या उन्हें सदैव दुखी वनाए रहती है। उन्हें ऐसी शिक्षा प्रारम्भ से नहीं दी जाती, जिससे वे अपने जीवन का निर्वाह स्वतन्त्र रूप से कर सकें। अगर वे इस योग्य हों कि स्वतन्त्रतापूर्वक अपना और अपनी सन्तानों का पालन-पोषण कर सकें तो उनकी हालत में बहुत कुछ सुधार हो सकता है। वे पति की दासी मात्र न रहकर पवित्र प्रेम की अधिकारिणी हो सकती हैं। उनका हृदय स्वभावतः कोमल होता है, उसमें प्रेम रहता है और आत्मसमर्पण की भावना पूर्ण रूप से विद्यमान होती है। पूर्ण रूप से शिक्षा प्राप्त करने पर भी वे प्रेममय दाम्पत्य जीवन व्यतीत कर सकती हैं।

शिक्षा के अभाव में स्त्री के लिए विवाह एक आजीविका का साधन मात्र रह गया है। अभी हिन्दू समाज में कई ऐसे पति हैं जो बहुत क्रूर एवं निर्दय हैं और अपनी स्त्रियों को दिन रात पाशविकता से मारते-पीटते रहते हैं तथा कई ऐसी साध्वी देवियां हैं, जिन्हें अपने शरावी और जुआरी पति को देवता से वढ़कर मानते हुए पूजना पड़ता है और वे लाचारी से अपने वन्धनों को नहीं तोड़ सकती। अशिक्षा के कारण आजीविका के साधनों का अभाव ही उनकी ऐसी गुलामी का कारण है।

समाज में यह भावना कूट-कूट कर भरी हुई है कि स्त्रियों का स्थान घर के भीतर ही है, वाहर नहीं और इन्हीं विचारों की पुष्टि के लिए यह कहना पड़ता है कि स्त्रियां घर से वाहर कार्यक्षेत्र के लिए विल्कुल उपयुक्त नहीं। कुछ समय के लिए उन्हें शारीरिक दृष्टि से अयोग्य मान भी लिया जाय तो भी इस विज्ञान के युग में मस्तिष्क की शक्ति के सामने शारीरिक शक्ति कोई महत्त्व नहीं रखती। सभी महत्वपूर्ण कार्य मस्तिष्क से ही किये जाते हैं। मानसिक दृष्टि से तो कम से कम स्त्री और पुरुष की शक्ति में कोई भेद नहीं किया जा सकता। अभी तक शिक्षा के क्षेत्र में स्त्रियां पुरुषों के समान कार्य नहीं कर सकीं। वह तो उनकी लाचारी थी। उन्हें पूर्ण रूप से अशिक्षित रखकर क्या समाज आशाएं रख सकता था कि वे अपनी शक्तियों का उचित उपयोग कर सकें ?

अगर अच्छी तरह से विचार किया जाय तो यह भी स्पष्ट हो जायेगा कि स्त्री और पुरुष की शारीरिक शक्ति में कोई विशेष भेद नहीं है। कुछ तो स्त्रियों का रहन-सहन ही सदियों से वैसा चला आ रहा है तथा खान-पान और वातावरण से उनमें कमजोरी आ जाती है, जो कि पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। स्त्री और पुरुष की शरीर रचना में कुछ भेद है पर उसका यह तात्पर्य नहीं कि स्त्री का किसी क्षेत्र से वहिष्कार ही किया जाय। कई ऐसी स्त्रियां हैं और थीं जो प्रत्येक क्षेत्र में पुरुषों के समान ही सफल कार्यकर्त्री सावित हुईं। शिक्षा के क्षेत्र में ब्राह्मी, धार्मिक क्षेत्र में चन्दनवाला द्रौपदी, मृगावती आदि सतियां थीं, जिनका पुरुषार्थ अनेक पुरुषों से भी बढ़ा-चढ़ा था। भारतवर्ष प्रारम्भ से ही अध्यात्मप्रधान देश रहा, और विशेष कर स्त्रियां तो स्वभावतः धार्मिक-हृदय होती हैं। अतः उसी क्षेत्र में वे पुरुषों के समान महत्त्वपूर्ण स्थान लेती रहीं यद्यपि राजनीतिक क्षेत्र में भी आजकल महिलाएं वरावर भाग लेती हैं। रानी लक्ष्मीवाई, अहिल्यावाई, दुर्गावती, चांदवीवी, नूरजहां आदि का स्थान वहुत

महत्त्वपूर्ण है। वे अन्य राजाओं के समान ही नहीं लेकिन कुछ राजाओं से अधिक योग्यता और साहसपूर्वक राज्य संचालन करती रहीं और युद्धादि के समय वीर अभिनेत्री वनती थीं। वीरता में भी स्त्रियां पुरुषों से कम नहीं। यद्यपि वे स्वभावतः कोमलहृदया होती हैं पर समय पड़ने पर वे मृत्यु के समान भयंकर भी हो सकती हैं। रानी दुर्गावती और लक्ष्मीबाई के उदाहरण भारतवर्ष में अमर रहेंगे। त्याग और वलिदान की भावना उनमें पुरुषों से अधिक ही होती है। वे प्रथम तो अपना सर्वस्व ही पतिदेव को समर्पण कर विवाह करती हैं तथा साथ ही साथ अपनी इज़्ज़त बचाने के लिए वे प्राण तक बलिदान कर सकती हैं। पद्मिनी आदि चौदह हजार रानियों का हंसते-हंसते आकाश को छूती हुई आग की लपटों में समाकर सती होना क्या विश्व के समक्ष भारतीय नारी के त्याग और बलिदान का ज्वलंत उदाहरण नहीं ?

महारानी एलिजाबेथ और महारानी विक्टोरिया ने भी अपनी सुयोग्यता द्वारा सफलतापूर्वक इतने वड़े राज्य का संचालन किया। अगर शारीरिक दृष्टि से स्त्रियां शक्तिहीन होती तो किस प्रकार वे इतना बड़ा कार्य कर सकती थी ? वास्तव में स्त्रियों का उचित पालन पोषण तथा शिक्षा होनी चाहिए। राजघराने की महिलाओं को ये सब वस्तुएं सुलभ होती हैं। वातावरण भी उन्हें पुरुषों जैसा प्राप्त होता है, फलतः वे भी पुरुषों के समान योग्य होती हैं। साधारण नारी को चूल्हे और चक्की के सिवाय घर में कुछ प्राप्त नहीं होता, अतः उनकी योग्यता और शक्ति वहीं तक सीमित रह जाती है।

शारीरिक और मानसिक दोनों दृष्टियों से स्त्रियों और पुरुषों की शक्ति बरावर ही होती है। हर एक कार्य को स्त्रियां भी उतनी ही योग्यता से कर सकती हैं, जितना कि पुरुष। यह नहीं कह सकते कि जो कार्य पुरुष कर सकते हैं, उन्हें स्त्रियां कर ही नहीं सकती। अभ्यास प्रत्येक कार्य को सरल बना देता है। यद्यपि समाज की सुव्यवस्था के लिए दोनों के कार्य सुचारु रूप से विभाजित कर दिए गए हैं पर इसका अभिप्राय यह नहीं कि स्त्री किसी अपेक्षा से पुरुषों से कम है या जो कार्य पुरुष कर सकते हैं, वे कार्य स्त्रियों द्वारा किए ही नहीं जा सकते।

शरीर-रचना-शास्त्र के अनुसार बहुत से लोग यहां तक भी सिद्ध करने का साहस करते हैं कि स्त्री तथा पुरुष के मस्तिष्क में विभिन्नता है। स्त्री की अपेक्षा पुरुष का मस्तिष्क विशाल होता है। पर यह कथन सर्वथा उपयुक्त नहीं। इस कथन के अनुसार तो मोटे आदमियों का मस्तिष्क हमेशा भारी ही होना चाहिए। पर यह तो बहुत हास्यास्पद और असत्य है। हम निजी अनुभव से ही देख सकते हैं कि मोटे आदमी भी बहुत बुद्धू और मूर्ख होते हैं, तथा दुबले पतले दिखने वाले भी अधिक बुद्धिमान और बड़े मस्तिष्क वाले होते हैं।

स्त्रियों का कार्यक्षेत्र घर तक ही सीमित रखने के लिए जिस प्रकार उनकी शारीरिक कमजोरी बताई जाती है उसी प्रकार उनकी मानसकि कमजोरी को भी उनकी अज्ञानता का कारण बताया जाता है। उनको पुरुष समाज सदियों तक घर में, परदे में और घूंघट में रखता रहा और आज यह तर्क दिया जाता है कि उनमें से कोई भी बड़ी राजनीतिज्ञ, दार्शनिक, वैज्ञानिक नहीं हुई, अतः उनमें कोई मानसिक न्यूनता है। उनसे यह आशा रखी जाती है कि चक्की पीसते-पीसते वैज्ञानिक बन जाएं, खाना बनाते-बनाते दार्शनिक हो जाएं पति की ताड़ना सहते-सहते राजनीतिज्ञ हो जाएं! जहां बिल्कुल शिक्षा का प्रचार ही नहीं और स्त्रियों को घर से बाहर नहीं निकाला जाता, वहां ये सब बातें कैसे सम्भव हैं ?

मानसिक कमजोरी का तर्क तब युक्तिपूर्ण हो सकता है, जब एक स्त्री प्रयत्न करने पर भी उस क्षेत्र में भी कार्य करने के योग्य न हो सके। पर ऐसा कहीं भी देखने में नहीं आता। स्त्रियां शिक्षित होने पर हर एक बड़ी सफलतापूर्वक कर सकती हैं। जिस गति से भारत में स्त्रीशिक्षा बढ़ रही है, उसी गति से महिलाएं प्रत्येक

क्षेत्र में आगे वढ़ती जा रही हैं। यह नहीं कहा जा सकता कि सुशिक्षिता स्त्रियां भी किसी मानसिक कमजोरी के कारण कोई कार्य करने में असमर्थ रही हों। भारतवर्ष में और अन्य देशों में, महत्त्वपूर्ण कार्यों में स्त्रियों के आगे न आने का कारण उनको अवसर न मिलना ही है।

अभी स्त्री शिक्षा की नींव डाली ही गई है, धीरे-धीरे निरन्तर प्रगति होते-होते निश्चित रूप से महिलाएं अपने को पुरुषों के वरावर सिद्ध कर देगी। एकदम नव-शिक्षितिओं को पुरानी सभी विचारधाराओं का पूर्ण रूप से अध्ययन कर लेना कष्टसाध्य भी तो होता है।

इस प्रकार यह निश्चित है कि शारीरिक और मानसिक दृष्टि से स्त्री व पुरुष दोनों वरावर होते हैं। पति को ऐसी अवस्था में पत्नी को दासी वना कर रखना उसके प्रति अन्याय होगा। स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न उठता है कि स्त्री और पुरुष की शिक्षा में भिन्नता होनी चाहिए अथवा नहीं ?

५-शिक्षा की रूपरेखा

यह निश्चित है कि पति चाहे कितना ही धन अर्जित करता हो अगर उस पैसे का उचित उपयोग न किया जाय तो वहुत हानि होने की सम्भावना है। अगर घर की व्यवस्था उपयुक्त नहीं, स्वच्छता की ओर कोई लक्ष्य नहीं उचित सन्तानपोषण की व्यवस्था नहीं तथा खान-पान की सामग्री का इन्तजाम नहीं तो कौटुम्बिक जीवन कभी सफल और सुखी नहीं रह सकता। अगर गृहिणी शिक्षिता होकर आफिस में पतिदेव की तरह क्लर्की करे और उनकी सन्तान सदैव दुखी रहे तथा सभी प्रकार की अव्यवस्था हो तो क्या वह दाम्पत्य जीवन सुखी होगा ? एक सफल गृहिणी होना ही स्त्री का कर्त्तव्य है। पति-पत्नी दोनों ही अगर भिन्न-भिन्न क्षेत्र में अपना-अपना कर्त्तव्य अच्छी तरह पूरा करते रहें, तभी गृहजीवन सुखी हो सकता है। पति का आफिस का कार्य उतना ही महत्त्वपूर्ण है, जितना स्त्री का भोजन वनाना। किसी का भी कार्य एक दूसरे से हीन नहीं। स्त्रियों को सुशिक्षित होकर अपना गृहस्थी को स्वर्ग वनाने और अपनी सन्तान को गुणवान् वनाकर सत्संस्कारी करने का उपक्रम करना चाहिए। स्त्रियों की शिक्षा निश्चित रूप से पुरुषों से भिन्न प्रकार की होनी चाहिए। साधारण रूप से सभी शिक्षित स्त्रियों को सफल गृहिणी वनने में सीता सावित्री का आदर्श अपनाना चाहिए। किन्हीं विशेष परिस्थितियों में कोई स्त्री अर्थप्राप्ति में भी पति का हाथ वंटा सकती है, अपनी सुविधा और योग्यता के अनुसार। पर स्त्रियों के विना गृहस्थी सुव्यवस्थित नहीं रह सकती और उन्हें इस ओर सुशिक्षिता होकर उपेक्षा कदापि नहीं करनी चाहिए।

आजकल स्त्रियों को धर्म, विज्ञान, गृहकार्य, रन्धन, सीना, सन्तान-पोषण और स्वच्छता आदि की शिक्षा दी जानी चाहिए।

अश्लील नाटकों, उपन्यासों, सिनेमा आदि में व्यर्थ समय नष्ट न किया जाय तो अच्छा है। मनोरंजन के लिए चित्रकला, संगीत आदि की शिक्षा देना उपयुक्त है। प्राचीन काल में वालिकाओं को अन्य शिक्षाओं के साथ-साथ संगीत आदि का भी अभ्यास कराया जाता था। नृत्य भी एक सुन्दर कला है। नृत्य और संगीत शिक्षा मनोरंजन के साथ-साथ स्वास्थ्य लाभ की दृष्टि से भी अच्छी है। इन वातों से दाम्पत्य जीवन और भी सुखमय, आकर्षक तथा मनोरञ्जक वन जाता है। परस्पर पति-पत्नी में प्रेम भी वढ़ता है। कला के क्षेत्र में वे उन्नति करेंगी और वहुत से आदर्श कलाकार पैदा होंगे।

शिक्षा के प्रति प्रेम होने से आदर्श नारी चरित्र की ओर अग्रसर होने का वे प्रयत्न करेंगी। सीता, सावित्री दमयन्ती, मीरां वाई आदि के जीवन चरित्र को समझकर अपने जीवन को उन्हीं के अनुरूप वनाने का वे

प्रयत्न करेंगी। स्त्रियों के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षा तो मातृत्व की है। जितनी योग्यता से वे बच्चों का पालन-पोषण करेंगी, राष्ट्र का उतना ही भला होगा।

बालकों के स्वभाव का मनोवैज्ञानिक अध्ययन होना संतान के हृदय में उच्च संस्कार डालने में विशेष उपयोगी सिद्ध हो सकता है। प्रत्येक बालक की प्रारम्भ से ही भिन्न-भिन्न प्रकार की स्वाभाविक रुचि होती है। कोई स्वभाव से ही गम्भीर और शांत होते हैं, कोई चंचल और कोई बुद्धिहीन और मूर्ख होते हैं। कइयों की रुचि खेल-कूद की ओर ही होती है, कोई संगीत का प्रेमी होता है तो कोई अध्ययनशील। किसी को दूकान की गद्दी पर बैठ कर सामान तोलने में ही प्रसन्नता होती है तो किसी को मन्दिर में जाकर ईश्वर के भजन में ही आत्मसन्तोष प्राप्त होता है। अगर ऐसी ही स्वाभाविक रुचि के अनुसार बालकों की शिक्षा का प्रबन्ध किया जाय तो वे उसमें बहुत सफल और प्रवीण हो सकते हैं। स्त्रियों के लिए ऐसी ही मनोवैज्ञानिक शिक्षा उपयोगी है, जिसके द्वारा वे बालकों को समझ सकें उनके मस्तिष्क की गतिविधि को पहचानने में ही उनके जीवन की सफलता निर्भर रहती है।

जैसा व्यवहार करना बचपन में बालकों को सिखाया जायगा वैसा ही वे जीवन भर करते रहेंगे। वे प्रत्येक बात में माता-पिता और कुटुम्ब के वातावरण का अनुकरण करते हैं। अगर माता स्वभाव से योग्य, कर्त्तव्यनिष्ठ, सुसंस्कृत और सभ्य है तो कोई वजह नहीं कि पुत्र अयोग्य हो। पुत्रों को सुधारने के लिए माताओं को अपने आचरण और व्यवहार को सुधारना चाहिए। स्त्रियों को इसी प्रकार की शिक्षा देना उपयुक्त है, जिससे वे संतान के प्रति अपना उत्तरदायित्व समझें और अपना व्यवहार सुधारें। झूठे ममत्ववश बालकों को जिद्दी और हठी बना देना, उनका जीवन बिगाड़ने के समान है।

मातृत्व में ही स्त्रियों पर सबसे बड़े उत्तरदायित्व का भार रहता है, अतः उसी से सम्बन्धित शिक्षा भी उनके लिए उपयुक्त है। इसका यह तात्पर्य नहीं कि और किसी प्रकार की शिक्षा की उनको आवश्यकता ही नहीं। महिलाओं के लिए भी शिक्षा का बहुत-सा क्षेत्र रिक्त है। घर के आय-व्यय का पूर्ण हिसाब रखना गृहिणी का ही कर्त्तव्य है। कितना रुपया किस वस्तु में खर्च किया जाना चाहिए, इसका अनुमान लगाना चाहिए। धन की प्रत्येक इकाई को कहां-कहां खर्च किए जाने पर अधिक से अधिक सन्तोष प्राप्त किया जा सकता है, यह स्त्री ही सोच सकती है। बच्चों को चोट लग जाने पर, जल जाने पर, गर्मी सर्दी हो जाने पर, साधारण बुखार में कौनसी औषधि का प्रयोग किया जाना चाहिए, इसका साधारण ज्ञान होना अत्यावश्यक है। घर की प्रत्येक वस्तु को किस प्रकार रखा जाय कि किसी को भी नुकसान न पहुँचे, यह सोचना गृहिणी का कार्य है। घर को स्वच्छ और आकर्षक बनाए रखने में ही गृहिणी की कुशलता आंकी जाती है। घर की स्वच्छता और सुन्दरता भी वातावरण की तरह मनुष्य के मस्तिष्क पर प्रभाव डालने वाली होती है। चतुर गृहिणी अपनी योग्यता से घर को स्वर्ग बना सकती हैं और मूर्ख स्त्रियां उसी को नरक। यद्यपि अकेली शिक्षा ही पर्याप्त नहीं होती, उसके साथ-साथ कोमलता, विनय और सरलता आदि स्वाभाविक गुण भी महिलाओं में होने चाहिए पर शिक्षा का महत्त्व जीवन में कभी कम नहीं हो सकता। जितना अधिक महिलोचित शिक्षा का प्रचार होगा, गृहस्थी की व्यवस्था उतनी ही उत्तम प्रकार से होगी, बालकों की शिक्षा उचित रूप से होगी और कौटुम्बिक जीवन सुखी होगा।

कुछ लोगों की धारणा है कि स्त्रियों का कार्य घर में चूल्हा चक्की ही है, अतः उनको पढ़ाने का लिखाने आवश्यकता नहीं तथा कई लोग प्रत्येक स्त्री को एम.ए. कराकर पुरुषों के समान ही नौकरी करने की पक्षपाती हैं। ये दोनों बातें उपयुक्त नहीं। यह कथन अत्यन्त निराधार है कि सफल गृहिणी को शिक्षा की आवश्यकता नहीं। कुछ प्रारम्भिक शिक्षा के उपरान्त उच्च गृहस्थ-शास्त्र का अध्ययन करना प्रत्येक स्त्री के लिए आवश्यक है। हर एक कार्य

को सफलता से पूर्ण करने के लिए शिक्षा होनी चाहिए। प्रत्येक वस्तु का गहरा अध्ययन होने से ही उसकी उपयोगिता और अनुपयोगिता का पता चलता है। सुशिक्षिता स्त्रियां सफल गृहिणी और सफल माता वन कर गृहस्थ जीवन को स्वर्ग वना सकती हैं।

वास्तव में स्त्री-पुरुष का श्रम-विभाजन ही सर्वथा उचित और अनुकूल है। दोनों के क्षेत्र भिन्न-भिन्न होते हुए वरावर महत्त्वपूर्ण हैं। पुरुप पैसा कमा कर लाता है और स्त्री उसका भिन्न-भिन्न कार्यों में उचित विभाजन करती है। न स्त्री ही पुरुप की दासी है और न पुरुष ही स्त्री का मालिक है। दोनों प्रेमपूर्वक अगर मैत्री सम्वन्ध रखेंगे, तभी गृहस्थी सुखमय होगी। स्त्री को गुलाम न समझ कर घर में उसका कार्य क्षेत्र भी उतना ही महत्त्वपूर्ण समझा जाना चाहिए। परन्तु पुरुप-समाज में ऐसे वहुत ही कम लोग होंगे, जो ऐसी मनोवृत्ति के हों। ऐसी विपम परिस्थितियों में कम से कम स्त्री में इतनी योग्यता तो होनी ही चाहिए कि स्वतन्त्र रूप से वह अपना जीवन-निर्वाह कर सके। विशेप प्रतिभावान् स्त्री अगर अपनी प्रखर प्रतिभा से समाज को विशेष लाभ पहुंचा सकती है तो उससे उसे वंचित न रखा जाना चाहिए। पर साधारण स्त्रियों को अपनी गृहस्थी की अवहेलना न करना ही उचित है। शिक्षा के क्षेत्र में उन्हें प्रतिवन्ध तो कुछ होने ही नहीं चाहिए।

शिक्षा के अभाव में भारतीय विधवा-समाज को बहुत हानि उठानी पड़ी। उनका जीवन वहुत कष्टमय और दुखी रहा। कुटुम्व में उनको कुछ महत्त्व नहीं दिया जाता है और वहुत वन्धन में रह कर जीवन व्यतीत करना पड़ता है। अगर प्रारम्भ से ही इनकी शिक्षा का पूर्ण प्रवन्ध किया जाता है और अपनी आजीविका चलाने लायक योग्यता इनमें होती तो इनका जीवन सुधर सकता था। समाज को इनकी प्रतिभा से वहुत कुछ लाभ भी मिल सकता था।

एक कुटुम्व में यह आवश्यक है कि पति अवश्य ही पर्याप्त रुपया कमाए जिससे कि जीवन-निर्वाह हो सके। अगर कोई पति इतना नहीं कर सकता हो तो समस्त कुटुम्व पर आफत आ जाती है। कई परिवार ऐसे हैं, जिनमें गृहपति के वन्धुगण या वच्चे नहीं कमा पाते और फलस्वरूप वह कुटुम्व वर्वाद हो जाता है। अगर स्त्रियां सुशिक्षित हों तो वे ऐसी परिस्थितियों में पति का हाथ वंटाकर उसकी सहायता कर सकती हैं। श्रमविभाजन का यह तात्पर्य तो कदापि नहीं कि स्त्रियां पैसा कमाने का कार्य करें ही नहीं। अगर उनमें इतनी योग्यता है तो उनका कर्त्तव्य है कि वे आपत्ति के समय पति की यथाशक्ति मदद करें। आखिर जिसे जीवन-साथी वनाया है, उसके दुःख में दुःख और सुख में सुख मानना ही तो स्त्रियों का कर्त्तव्य है।

हर एक स्त्री को पढ़ लिखकर विल्कुल पुरुषों के समान स्वतन्त्र होकर नौकरी आदि करना चाहिए, यह विचार भी युक्तिसंगत नहीं। हर एक स्त्री यदि ऐसा करने लगे तो घर की व्यवस्था कैसे हो? संतान का पालन-पोषण कौन करे? घर की प्रत्येक वस्तु को हिफाजत से यथास्थान कौन रखे और खानपान का उचित वन्दोवस्त कैसे हो? नौकरी भी करते रहना और साथ में इन सव वातों का इन्तजाम भी पूर्ण रूप से करना तो वहुत ही कष्टसाध्य होगा। अगर कोई ऐसी असाधारण योग्यता वाली महिला हो तो वह जैसा चाहे, वैसा कर सकती है।

चाहे ऐसी परिस्थतियां कभी उत्पन्न न हों पर प्रत्येक अवस्था में स्त्री को अपनी स्वतन्त्र आजीविका चलाने लायक योग्यता प्राप्त करनी चाहिए। स्त्री का पुरुप पर किसी वात पर निर्भर न होना और पुरुप का स्त्री पर किसी वात पर निर्भर न रहना कोई अनुचित वात नहीं। जो स्त्री घर के कार्यक्षेत्र में रुचि न रख कर किसी अन्य क्षेत्र के लिए योग्य होकर अपनी शक्तियों के विकास का दूसरा मार्ग ग्रहण करना चाहती है, उसे पूरी स्वतन्त्रता दी

जानी चाहिए। पुरुषों का क्षेत्र स्त्रियों के पहुंच जाने से कोई अपवित्र नहीं हो जाएगा और न वे किसी कार्य के लिए सर्वथा अनुपयुक्त ही हैं क्योंकि पुरुष-समाज अब तक स्त्रियों को दासता में रखने का अभ्यस्त था, इसलिए उन्हें शिक्षा से पूर्ण रूप से वंचित रखा गया। इसी दासता को और मजबूत बनाए रखने के लिए बहुत प्रयत्न किए गए थे। उनकी शारीरिक और मानसिक शक्तियों की कमजोरी का तर्क दिया जाता रहा। इन सब के परिणामस्वरूप स्त्री की परवशता बढ़ती गई और जैसे-जैसे स्त्री परतन्त्र होती गई, पुरुष को स्वामित्व के अधिकार भी ज्यादा मिलते गए। सामाजिक और राजनैतिक क्षेत्र में उसका प्रभुत्व बढ़ता गया। परिस्थिति ऐसी हो गई कि पुरुष, स्त्री को चाहे कितनी ही निर्दयता से मारे, पीटे या घर से निकाल दे पर स्त्री चूं तक नहीं कर सकती।

अगर प्रारम्भ से स्त्रियों को अपने जीवन निर्वाह करने योग्य शिक्षा दी जाती तो समाज की बहुत-सी अबलाओं और विधवाओं के नैतिक पतन के एक मुख्य कारण का लोप हो जाता।

आज स्त्रियों में जागृति की भावना बढ़ती जा रही है। वह खुले रूप से राजनैतिक, सामाजिक या धार्मिक क्षेत्र में पुरुषों से मुकाबला करने के लिए तैयार है। युनीवर्सिटियों में लड़कियां बड़ी से बड़ी डिग्रियां प्राप्त करने में तल्लीन हैं। पर हमारा देश अभी पतन के गहरे गड्ढे में गिर रहा है या उन्नति की ओर अग्रसर है? इस प्रश्न का उत्तर देना जितना सरल है, उसे ज्यादा कठिन। किसी देश की उन्नति की कोई निश्चित सीमा रेखा अभी तक किसी के द्वारा निर्धारित नहीं की गई है। प्रत्येक देश की सभ्यता और संस्कृति की भिन्नता के साथ-साथ लोगों की मनोवृत्तियों और विचारधाराओं में भी विभिन्नता आ जाती है। उन्नति की एक परिभाषा एक देश में बहुत उपयुक्त हो सकती है और वही दूसरे देश में उसके ही विपरीत हो सकती है। सभी के दृष्टिकोण भिन्न-भिन्न हो सकते हैं।

कुछ समय पहले भारत में शिक्षित स्त्रियां बहुत कम थीं, पर अब तो उनकी संख्या उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। अपने अधिकारों और स्वतन्त्रता की मांगों की प्रतिध्वनि भी स्पष्ट रूप से सुनाई देने लगी है। पर मुख्य प्रश्न है कि क्या यह वर्तमान शिक्षा प्रणाली भारतीयों के सुख सन्तोष व समृद्धि को बढ़ा सकेगी? क्या केवल शिक्षिता होने से पति-पत्नी के सम्बन्ध अच्छे रहकर गृहस्थ-जीवन स्वर्ग बन सकेगा? अगर नहीं तो शिक्षित स्त्रियां क्या करेंगी और उनका भविष्य क्या होगा।

६ वर्तमान शिक्षा का बुरा प्रभाव

शिक्षा के अभाव में बहुत समय तक हमारे स्त्री-समाज की हालत बहुत दयनीय, परतन्त्र और दासतापूर्ण रही। उनकी अज्ञानता के कारण बहुत-सी बुराइयां उत्पन्न हो गईं। फलतः स्त्रीशिक्षा को प्रधानता दी जाने लगी। अशिक्षा को ही सब बुराइयों का मुख्य कारण समझकर उसे ही दूर करने पर बहुत जोर दिया जाने लगा पर अब धीरे-धीरे शिक्षित स्त्रियों की संख्या बढ़ती जा रही है। अब तक यह आशा की जाती थी कि पढ़-लिख कर स्त्रियां सफल एवं चतुर गृहिणी बनेंगी। वे आदर्श पत्नी होकर पतिव्रत धर्म का आदर्श विश्व के समक्ष रखेंगी। वीर गुणवान संतान उत्पन्न कर राष्ट्र का भला करेंगी। शिक्षा की ओर महिलाओं की रुचि देखकर हम शकुन्तला, सीता के स्वप्न देखने लगे। हम सोचते थे कि बहुत समय पश्चात् अब भारतवर्ष में फिर लव, कुश, भरत और हनुमान जैसे तेजस्वी, शक्तिवान् और गुणवान् पुत्र उत्पन्न होने लगेंगे। हमें पूर्ण विश्वास था कि महावीर, बुद्ध, गौतम सरीखे महापुरुष उत्पन्न होंगे और भारत की कीर्तिपताका एक बार फिर विश्व में लहराने लगेगी। ऐसी ही मनोहर आशाओं और आकांक्षाओं के साथ-साथ अविद्यारूपी अन्धकार को दूर करने के लिए ज्ञान-सूर्य का उदय हुआ। पर

वैधव्य भोगना पड़े तो विधवा-शिक्षा। तात्पर्य यह है कि स्त्री को जिन अवस्थाओं में से गुजरना पड़ता है, उन अवस्थाओं में सफलता के साथ निर्वाह करने की उसे शिक्षा मिली थी। यही शिक्षा समूची शिक्षा कही जा सकती है, स्त्रियों को जीवन की सर्वाङ्ग उपयोगी शिक्षा मिलनी चाहिए।

स्त्रियों की सब प्रकार की शिक्षा पर ही तो संतान का भी भविष्य निर्भर है। आज भारत के बालक आपको देखने में, ऊपर से भले ही खूबसूरत दिखलाई देते हों, पर उनके भीतर कटुकता भरी पड़ी है। प्रश्न होता है, बालकों में यह कटुकता कहां से आई? परीक्षा करके देखेंगे तो ज्ञात होगा कि बालक रूपी फलों में माता रूपी मूल में से कटुकता आती है। अतएव मूल को सुधारने की आवश्यकता है। जब आप मूल को सुधार लेंगे तो फल आप ही सुधर जाएंगे।

माता रूपी मूल को सुधारने का एकमात्र उपाय है, उन्हें शिक्षित बनाना। यह काम, मेरा खयाल है, पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों से बहुत शीघ्र हो सकता है। उपदेश का असर स्त्रियों पर जितना जल्दी होता है, उतना पुरुषो पर नहीं होता।

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों में त्याग की मात्रा अधिक दिखाई देती है। पुरुष चालीस वर्ष की अवस्था में विधुर हो जाय तो समाज के हित-चिन्तकों के मना करने पर भी, जाति में तड़ डालने की परवाह न करके दूसरा विवाह करने से नहीं चूकता। दूसरी तरफ उन विधवा बहिनों की ओर देखिए, और देखिए, जो बारह-पन्द्रह वर्ष की उम्र में ही विधवा हो गई हैं। वे कितना त्याग करके आजीवन ब्रह्मचर्य का पालन करती हैं! क्या यह त्याग पुरुषों के त्याग से बढ़कर नहीं है? □

सती मयणरेहा

मंगलाचरणः

दोहा

शांतिनाथ प्रभु-चरण में, वन्दन वारम्वार।
कथा मयणरेहा लिखूं, शील सत्य आधार।।१।।

तर्ज—म्हांरी रस सेलडियाँ, आदि जिनेश्वर कीनो पारणो

सती मयणरेहाजी, पति निरतारी, तारी आतमा।।ध्रुवपदम्।।

देश मालवा शहर सुदर्शन, शोभायुत है स्थान।
मणिरथ राजा राज करै वहां, राजनीति का जान रे।स।१।

युगवाहु है लघुभ्राता तस, प्रेमपात्र गुणवन्न।
भावी राजा इसे वरूं मैं, यों चिन्ते राजन्न रे।सती।२।

मयणरेहा है रानी उसकी, शील गुणों की खान।
शुद्धश्राविका समकितधारी, पतिव्रता धर्म-निधान रे।स।३।

क्षुद्रवुद्धि नहीं रखे श्राविका, रूपे रंभ समान।
शशी सम सौम्य और लोकप्रिय, सत्य क्षमा की खान रे।स।४।

डरे पाप से, निडर सभी से, निर्मल सरल स्वभाव।
साहसपन लज्जा से दीपे, दया तणो चित्त चाव रे।स।५।

समता भावित निर्मलदृष्टि, गुण से राखै राग।
धर्मकथा नित करे प्रेम से, धर्म धरे महाभाग रे।स।६।

जातिवन्त कुलवंत सतीजी, दीर्घ दृष्टि की धार।
अविरुद्ध अर्थ की सदा उपासक, विनयवंत गुणधार रे।स।७।

परहित में दत्तचित्त महासती, लब्ध लक्ष गुणवान।
प्रतिमा है इक्कीस गुणों की, धर्म मर्म की जान रे।स।८।

नहीं शील से डिगे डिगाई, ज्यों गिरि मेरु अडोल।
सागर सम गंभीर सतीजी, कहै न किसी की पोल रे।स।९।

सीता शीले कर्गी पंचाली, रंभे रंभ रागान।
दाने लक्ष्गी गति सरस्वती, धर्मे गौरी गान रे।स।१०।

विशेषज्ञ गुण बड़ा सती में, गुरु आज्ञा की धार।
कृतज्ञता गुण को पहचाने, सज के गम अलंकार रे।स।११।

शील नेग अरु पति-रंजनका, सतीजी राखी ध्यान।
पुत्ररत्न को जन्म दिया है, चन्द्रयश गुण-गान रे।स।१२।

चन्द्रकला सग बढ़े कुंवरजी, सपने के अनुसार।
कल्पवृक्ष सपने में देखा, गर्भ धरा श्रीकार रे।स।१३।

स्फटिक—पात्र में दिख —ज्योति राग, सती की दीपे काय।
शुभकारी दोहद को धरती, पति पूरे गन लाय रे।स।१४।

एक दिवस श्री युग वाहुजी, बान्धव महले जाय।
अति आदर से आसन बैठे, बोले गणिरथराय रे।स।१५।

शुभ सगागग भाई तुम्हारा, गन गेरा हरषाय।
युवराजा पद देने की सब, बातें दीनी सुनाय रे।स।१६

नीचे सिर युगवाहु बोले, यह क्या कहते बात।
आप कृपा से गैं जीवित हूँ, और न मुझे सुहात रे।स।१७।

दोनों भाई का साथ गिले तब, सुख पावे संसार।
अपूर्व पात्रे शक्ति शोभे, यह गेरा निरधार रे।स।१८।

मेरी लघुता होती इसगें, तुग हो पिता सगान।
पदवी ले सेवा करूं गैं, इतना नहीं नादान रे।स।१९।

हृदय—भेदी हैं वाक्य तुम्हारे, अहो —अहो गुणवान।
भाई की आज्ञा को गानो, रखो हगारा गान रे।स।२०।

अर्द्ध स्वीकृति देके वाहुजी, आवे तिरिया म्हैल।
चित्त में चिन्ता गन के गिंत्ता, विसर गये सब खेल रे।स।२१।

चिन्तातुर जब पति को देखा, सती ने किया विचार।
हँस के पूछा तुरत विनय से, जान पड़ा सब कार रे।स।२२।

अमृत सी वाणी से बोली, पद परवाह नहीं आप।
ज्येष्ठ श्रेष्ठ का आदर करते, रहो सदा निष्पाप रे।स।२३।

नहीं लेने से दुखित भ्रात हो, नहीं लेने गें दोष।
सेवा भाव की वृद्धि सगझ के, गन गें रखो तोष रे।स।२४।

वड़ी उमंग से किया महोत्सव, मणिरथ मन हरषाव।
युगवाहु को युवराजा पद, देके आनन्द पाय रे।स।२५।।
निज महल की छत पर वैठी, सव सखियन के साथ।
दान मान आमोद प्रमोदे, करे प्रेम से वात रे।स।२६।
इस अवसर पर मणिरथ राजा, निज अटारी पर आव।
भाई महले नजर फैलावे, सज्जन जन समझाय रे।स।२७।
युगवाहु का महल प्रभु यह, वैठी उनकी रानी।
दृष्टि न देवो रखो मर्यादा, नीति लेवो मानी रे।स।२८।
अज्ञानी सम तुम सव मुझको, क्या देते हो वोध।
अहंकार वश मणिरथ राजा, मन में लाया क्रोध रे।स।२९।
विषममार्ग से पैर रपटता, होता चकनाचूर।
तद्वत् राजा देख पदमनी, भूला भान भरपूर रे।स।३०।
लीलावती की लीला होती, सहज ही लीला रूप।
कामी देख उसे ललचावे, भँवर कमल अनुरूप रे।स।३१।
अहो अहो यह रूपनिधि महा, स्वर्ग-मर्त्य-पाताल।
क्या इस सम होगी जगनारी, यों चिन्ते भूपाल रे।स।३२।
हितकारी जन फिर भी वोले, उचित नहीं यह कार।
भाई नारी को निरखो राजवी, विगड जाय संसार रे।स।३३।
विषमय विषधर जानो सदा ही, परनारी का रूप।
अन्य जहर की मिले औषधि, यह है जहर अनूप रे।स।३४।
विरत रहो परनारी से सव, यह सुख क्षणभंगूर।
करुणा-मैत्री-प्रज्ञा वधू से, भोगो सुख भरपूर रे।स।३५।
निर्मल दीप विवेक तभी तक, फैलाता परकाश।
मृगनयनी के नयन-वाण से विंधे न हृदयाकाश रे।स।३६।
लज्जा भय से हटा राजवी, मन में वस गया रूप।
महामोह वश हुआ राय यों, मानो पड़ा भव कूप रे।स।३७।
जो मैं इसका संग न पाऊं, विरथा जन्म गंवाऊं।
सरेस झाड़ सम निष्फल योंहीं, सांस ले उम्र वितांऊं रे।स।३८।
संकल्प वश हो चिन्ते राजा, भाई दूर हटाऊं।
लालच दे इसको ललचाऊं, विलास सुख को पाऊं रे।स।३९।

राजा कपट कर बोला सभा में, सेना सजग हो जावे।
आन न माने उसे मनावे, देश—साधने जावे रे।स।४०।

युगबाहु यों बोला सभा में, आज्ञा दो महाराज।
मेरे रहते आप सिधारो, मुझको आती लाज रे।स।४१।

मुझ बांधव तूं प्राणपियारो, यह संकट को काल।
वैरी—मुख में तुझे भेजना, यह कैसा मम साल रे।स।४२।

क्या कायर तुम मुझे बनाते, मैं क्षत्रिय का अंश।
वीर—कार्य में विघ्न करो मत, जैसे रहे नृप —वंश रे।स।४३।

पाप पेट में अमृत मुखमें, मणिरथ बोला बैन।
सब विधि से तुम वीर वीर हो, विरह न चाहते नैन रे।स।४४।

'जावो' मुख से शब्द न निकले, रखे न सुधरे काज।
धर्म शीलता रहे तुम्हारी, यों बोले महाराज रे।स।४५।

प्रणमन करके चले बाहुजी, आये पत्नी पास।
विधि से प्रेम प्रकाशत बोली, कहो सेवा जो खास रे।स।४६।

जाने की सब बात की तब, दोनों जोड़े हाथ।
प्रभो! विघ्न करना नहीं चाहती, मैं हूं क्षत्रिय जात रे।स।४७।

इष्ट धर्म का ध्यान रहे सदा, यह मेरी अरदास।
दर्श आपका फिर हो जल्दी, यह है मन की आश रे।स।४८।

सेना साथे चले बाहुजी, नीति धर्म के साथ।
अरिजन आकर पड़े चरण में, नहीं न्याय की घात रे।स।४९।

मन में मोद धरा राजाने, इच्छा पूरूं खास।
दूती को बुलवाय रायने, भेद दिया परकाश रे।सती।५०।

वायें हाथ का खेल हमारा, पूरण करणी आश।
वस्त्राभूषण और मिठाई, ले आई सती पास रे।सती।५१।

पति गये परदेश हमारे, ज्येष्ठ श्रेष्ठ का मान।
समझ भाव से लिया सती ने, और न मन में ध्यान रे।स।५२।

दूती खुश हो गई राय पै, सुधरा तुमरा काम।
पुनः सजावट सज के आई, मयणरेहा के धाम रे।स।५३।

पति नहीं है साथ हमारे, मुझे न रुचते भोग।
निरर्थक यह कार्य तुम्हारा, नहीं हमारे जोग रे।स।५४।

वात खोल सव वोली दूती, सती में आया जोश।
चंड स्वरूप को धारा खड्ग ले, छाया नेत्र में रोप रे।स।५५।

रे निर्लज्ज! फिर मत आना, जो प्यारे हों प्राण।
दूती डर के गई राय पै, छोडो उसका ध्यान रे।स।५६।

मैं खुद जाकर करूं प्रार्थना तव मानेगी वात।
नीच-वुद्धि से नीचता, कर्मो का उत्पात रे।सती।५७।

कामी राजा सोचे मन में, वह है चतुर सुजान।
दूती को क्यों भेद वतावे, क्षत्रिय का अभिमान रे।स।५८।

अर्द्धनिशा चल आया सती घर, किया वचन उच्चार।
हे सुभगे! मुझ आदर देओ, होओ प्राणाधार रे।स।५९।

सुनकर सोचे मयणरेहाजी, धिक्-धिक् मेरा रूप।
ज्येष्ठ श्रेष्ठ को भान भुलाया, पड़ा मोह के कूप रे।स।६०।

कमल—पुष्प सम कहते नयन को, मुख को चन्द्र समान।
सुन्दर रूप की नीधि मान के, नृप ने खोया भान रे।स।६१।

इतना भी नहीं रहा भाव मैं, हूं वंधव की नार।
धिक्-धिक् हैं इस भूप को अरे, आया क्रोध अपार रे।स।६२।

दे धिकार मैं करूं फजीती, फिरे सोचा दिल मांय।
अपने कुल का गौरव रखना, यो धीरज मन ठाय रे।स।६३।

सोच समझकर वचन उच्चारे नर—नारी गुणवान।
विना विचारे वचन उच्चारे, मानव नहीं हैवान रे।स।६४।

शान्त शब्द से वोली सतीजी, प्रजा पिता सम राय।
ज्येष्ठ श्रेष्ठ सुसरा हो मेरे, सोचो मन के मांय रे।स।६५।

रक्षक वन भक्षक नहीं होना, विनति लेओ धार।
घरे सिधावो मन समझावो, कदे न लोपूं कार रे।स।६६।

गुण-सागर सुन्दरी विन मेरा, राजतंत्र वेकार।
वुद्धिदाता वनो सहायिका, होवे हल्का भार रे।स।६७।

युवराजा की मैं हूं रानी, जिस पे रक्खा भार।
लालच छोड़ो मन को मोड़ो, धर्म से वेड़ा पार रे।स।६८।

पति प्रेम से शुद्ध भाव को, देव न सके चलाय।
किसी लोभ से मैं नहीं ललचूं, चित्त को लो समझाय रे।स।६९।

हैं नर नारी वे ही सच्चे, पर मन में नहीं लावे।
शुद्ध प्रेम को सार समझकर, हृदय प्रभु को ध्यावे रे।स।७०।

रावण पद्मोत्तर कीचक का, जो लिखा है हाल।
उसको सोच समझ कर बुधजन, फँसते न मोह की जाल रे।स।७१।

वमन-पात्र सम परनारी का, मन से तजते ध्यान।
वे ही वर हैं उत्तम कुल के, जो पाये गुरु से ज्ञान रे।स।७२।

वहरा-अंधा-मूक-पुरुष से, पापी नर का भार।
धरा न सहती समझो राजा, मरना है श्री कार रे।स।७३।

अमृतमय तब वचन श्रवण कर, चित्त में पाया चैन।
एक वार मुझ प्रत्यक्ष होओ, यो बोला नृप वैन रे।स।७४।

अतिगृद्ध जब नृप को देखा, सासू लाई बुलाय।
युग वाहु का महल पुत्र! यह, मात कहै समझाय रे।स।७५।

हो अति लज्जित चला राय मन, उलटा किया विचार।
जव लग वांधव जीवे तब लग, हुवै न मेरा कार रे।स।७६।

लक्ष्मी सम नारी का मुझको, जिससे है अंतराय।
नारा करूं मैं उस भाई का, कुमति धरी मन मांय रे।स।७७।

सव से यश ले युग बाहुजी, देश साध घर आया।
मन मैला मणिरथ यों बोला, मुख देख्यां सुख पाया रे।स।७८।

चउपाइयाँ

हे वीर! कहो समझाई, क्या कार्य किया मुझ भाई!।।१।।
नहीं युद्ध हुआ महाराया!, सब को धर्म-भाव समझाया।।२।।
दुखी जन को दुःख जो देवे, अपना सुयश नष्ट कर लेवे।।३।।
राजतेज रसातल जावे, अपयश से नष्ट हो जावे।।४।।
यही वात कुंवर समझाई, वैरभाव दिया है मिटाई।।५।।
शांति सर्वत्र है वरताई, महिमा सव जन रहे गाई।।६।।
राय मन नहीं वचन सुहाये, मानो कमल में आग लगाये।।७।।
कपटभाव से यों मुख वोला, मेरा भाई है जग अनमोला।।८।।
भाई! नीति मुझको सुहाई, राजलक्ष्मी न सके ललचाई।।९।।

राजतख्ते गर्व नहीं आवे, मेरी प्रजा दुःख नहीं पावे।।१०।।
स्तुति सुनके नहीं हरषाऊं, निंदा सुन के गुण मैं पाऊं।।११।।
जुल्म किसी पर नहीं गुजारूं, हृदय की कुवासना में मारूं।।१२।।
दुःखी दुःख को हृदय विचारूं, दूर करने की इच्छा धारूं।।१३।।
राजकोष प्रजा हित खोलूं, सव के सुख में सुख तोलूं।।१४।।
भाई रक्षक वनकर रेवूं, या के सुख में चित नित देऊँ।।१५।।
प्रभु से विनवूं वेकर जोड़ी, पूरो ये सव मन की कोड़ी।।१६।।

तर्ज—पहलेवाली

राय रजा ले आये महल में, सती आदर दे वोली।
आज भाग्य की हुई परीक्षा, सत्य वात मैं तोली रे।स।७६।

जेठ वात नहीं कही सती ने, मन में किया विचार।
अनरथ होगा द्वेष वढ़ेगा, समता में है सार रे।स।८०।

केसरी केसर विषधर मणि ज्यों, लगे न किसी के हाथ।
गौरव इसमें है स्वामी का, नहीं गर्व का साथ रे।स।८१।

दूर नहीं अव रहूं नाथ से, निश्चय लीना धार।
पति-सेवा और गर्भ पालना, सुख का यह व्यवहार रे।स।८२।

वसंतऋतु आई सुखदाई, पशु-पक्षी हरषाये।
युगवाहुजी उपवन जाने, निज अन्तेउर आवे रे।स।८३।

मैं इच्छा की दासी प्रभुजी! रहूं आपके संग।
चल आये दंपति कानन में, रंगे प्रेम के रंग रे।स।८४।

सायंकाल को सव जन जाते, अपने अपने धाम।
मणिरथ भी निज महल में आये, मन में सुमरे काम रे।स।८५।

युगवाहु का मन अति रंजा, वनक्रीड़ा सुखदाय।
सुखकारी निवास यहां का, गर्भवती सुख पाय रे।स।८६।

सव विधि की वहां की तैयारी, निशि निवास सुखकार।
मयणरेहा निज पतिसंग रहकर, धरा धर्म पर प्यार रे।स।८७।

नाना विधि की धर्म-भावना, धर्म—कथा का सार।
प्रीतम संग इस विधि से करती, होवे वेड़ा पार रे।स।८८।

पाप मति मणिरथ मन सोचे, मयणरेहा का बोल।
युग बाहु को जो नहीं मारूं, तो स्थिति डांवाडोल रे।स।८६।

युगबाहु नारी सह वन में, सुन कर हर्ष भराया।
खड्ग हाथ ले हयारूढ़ हो, मणिरथ हलकर आय रे।स।६०

पहरेदार तकरार करे जब, भाई पै कहलाय।
दूत तुम्हारे मुझे रोकते, मैं मिलने को आय रे।स।६१।

मयणरेहा ने कहा पति से, भाई—प्रेम मति जानो।
अकाल में यह आया चलकर, निश्चय दगा पहचानो रे।स।६२।

रे रे प्रिया! भाई है मेरा, मत शंको नादान।
भाई विनय से मुझे रोकती, रहा न तुमको भान रे।स।६३।

बीती बात सुनाई सती ने, सुनकर आया रोष।
तो डर नहीं है उस पापी का, देखन दो मुझ जोश रे।स।६४।

वहुत विनय से कहा सती ने, होनहार बलवान।
मानी नहीं युगबाहुजी ने, छोडा सती ने ध्यान रे।स।६५।

गया सामने भाई लेने, सती परदे के मांय।
मणिरथ आया वचन सुनाया, क्यों आये तुम राय रे।स।६६।

प्राणपियारा भाई हमारा, वन में किया निवास।
सुनके चेतन हुआ दौड़ते, मैं आया तुम पास रे।स।६७।

योग्य स्थान यह नहीं तुम्हारे, वैरी जीत घर आये।
ऐसे समय में छलिया छलते, दिल मेरा घबराये रे।स।६८।

स्थानभ्रष्ट नहीं रहै राजवी, नीतिधर्म का नेम।
तुमरै खातिर किला बना है, जिसमें पाओ क्षेम रे।स।६६।

तुम तज के क्यों आये राजा, जो ऐसा था ध्यान।
भाई-रक्षा कर्त्तव्य मेरा, मैं क्षत्रिय बलवान रे।स।१००।

मैं भी तो हूं भाई तुम्हारा, यह क्यों भूलो भान।
ध्यान रहा नहीं भाई हमारा, तुममें उलझे प्रान रे।स।१०१।

इस प्रपंच से भाई तुम्हारा, मन मैला दरसाय।
वैरी एक न रहा राज में, झूठी तर्क उठाय रे।स।१०२।

झूठा प्रपंची जव तुम मानो, पानी देवो पिलाय।
में जाता हूं मेरे धाम को, दिल को लो समझाय रे।स।१०३।

जल लेने को उठे वाहुजी, विनय भाव को लाय।
निर्दय मणिरथ खड्ग निकाला, मस्तक दिया लगाय रे।स।१०४।

विषमिश्रित थी खड्गधार वह सिर पर चमकी आय।
शैलशिखर समगिरे वाहुजी, दिल में बहु अकुलाय रे।स।१०५।

एकबार जब कामदेव ने, मन फैलाया ज्हैर।
तब सब अनरथ होते उससे, बंधते जीवन—वैर रे।स।१०६।

संग में रहते हँसते रमते, खाते भ्रमते एक।
दोय देह पर एक हृदय हो, रहते एकामेक रे।स।१०७।

एक सहोदर भाई-भाई में काम कराता वैर।
प्राणहरण की बुद्धि देता, काम नहीं यह ज्हैर रे।स।१०८।

हा-हा अकारज हुआ सतीजी, मन में अति दुख पाय।
मूर्छा आई चेत को पाई, पंखणी सम कुरलाय रे।स।१०९।

सामंतगण जब भेद को पाये, मार मार कर धाये।
निर्लज्ज तोकूं लाज न आई, यों कह रोष भराये रे।स।११०।

भाई घातक तूं है राजा, नहीं तजने के योग।
करो इष्ट को याद हमारे, बनो खड्ग के भोग रे।स।१११।

पत्नी-पुत्र का क्या हाल होगा, यों सोचे दिल मांय।
अशक्ता से उठा न जाता, वाहुजी घबराय रे।स।११२।

अन्तिम अवसर जान सती ने, प्रभु का कर सम्मान।
सामंतों से बोली रानी, मत लो इसका प्रान रे।स।११३।

रक्त रक्त से शुद्ध न होता, शांति लेओ धार।
अल्प समय की स्वामी सेवा, जिससे सुधरे कार रे।स।११४।

सती बोध से सामंत समझे, दीना राजा छोड़।
पति गोद में लिया सती ने, यों बोली कर जोड़ रे।स।११५।

एक प्रासंगिक-गीत

तर्ज—हिरदे राखीजे हो भविवण मंगलीक शरणा चार

सुस्वर करी कहै कंथ नै, हो प्रीतम, सुणो वचन धर ध्यान।
अन्त समय हिवै आवियो, हो प्रीतम, धरो धर्म चित्त ध्यान।।
हिरदे राखीजे, हो प्रीतम! मंगलीक शरणा चार।।ध्रुवपद।।१।।

अरिहन्त सिद्ध साधु तणो, हो प्रीतम!, केवली भाषित धर्म।
ये चारों जपतां थकां, हो प्रीतम!, टूटे आठों कर्म।।हि।।२।।

आई विपदा टालवा, हो प्रीतम!, चित्त समाधि धार।
कोप कषाय निवारदो, हो प्रीतम, जिम उतरो भवपार।।हि।।३।।

मुझ अने बांधव ऊपरै, हो प्रीतम, राग द्वेष परिहार।
सम परिणाम थे राखजो, हो प्रीतम, जिम उतरो भवपार।।हि।।४।।

जे कीधा ते भोगवो, हो प्रीतम!, निमित्त मात्र अन्य होय।
निश्चय दुःख आतम दियो, हो प्रीतम!, निमित्त भाई ने जोय।।हि।।५।।

तेथी हितधर वीनवूं, हो प्रीतम, धर्म कियां सुख होय।
पाप अठारह परिहरो, हो प्रीतम, पुनरपि वैर न होय।।हि।।६।।

जीव सभी खमा लेवो, हो प्रीतम, जे किया अपराध।
तेहना किया तुम खमो, हो प्रीतम, मैत्रीभाव आराध।।हि।।७।।

देव अरिहन्त गुरु निग्रन्थ, हो प्रीतम, केवली भाषित धर्म।
तत्त्व तीन आराधजो, हो प्रीतम, समकीत नो ए मर्म।।हि।।८।।

धन कुटुम्ब मित्रादिक नो, हो प्रीतम, बन्धन मन मत राख।
दुःख आयां निज जीवनै, हो प्रीतम, देव जपो अरिहन्त।।हि।।९।।

मृत्यु मार्ग पहुंचावतां, हो प्रीतम, शरणागत ने साख।
समाधि सबल लेय ने हो प्रीतम, पहुँचो मोक्ष महन्त।।हि।।१०।।

रक्त मांस करके भरयी, हो प्रीतम, देह पिंजरो एह।
नष्ट देख भय मत करो, हो प्रीतम, ज्ञान-भावना लेह।।हि।।११।।

मृत्यु महोत्सव जानजो, हो प्रीतम, भय न रखो लवलेश।
तृण कुटी सम पण छोड़ ने, हो प्रीतम, रत्नगृह प्रवेश।।हि।।१२।।

कर्म वैरी दुःख पिंजरै, हो प्रीतम, नाख्यो चेतनराय।
मृत्युराज शरण विना, हो प्रीतम, वन्धन नांय छुडाय।।हि।।१३।।

कल्पवृक्ष मृत्यु थकी, हो प्रीतम, जो सुख साधे नाय।
दुर्बुद्धि ते आतमा, हो प्रीतम, भव भव में दुख पाय।।हि।।१४।।

मृत्यु सम जो वेदना, हो प्रीतम, ज्ञानी मोह नशाय।
आत्मिक अर्थ ने साधने, हो प्रीतम, स्वर्ग मोक्ष में जाय।।हि।।१५।।

काचा घट को अग्नि में, हो प्रीतम, पाकां नीर रहाय।
[illegible] सम सेवतां, हो प्रीतम, सुख-भाजन जीव थाय।।हि।।१६।।

अनेक वरस तपस्या करी, हो प्रीतम, जो सुख तपसी पाय।
समाधि-मरण आराधनां, हो प्रीतम, अल्पकाल में आय।।हि।।१७।।

पाप सकल त्यागो तुमे, हो प्रीतम, आहार चार परिहार।
छेल्ला सांस लग छांडजो, हो प्रीतम, झीणी देह निसार।।हि।।१८।।

वाहलो सज्जन जो हुवै, हो प्रीतम, खरची बांधे साथ।
आप परलोक पधारतां, हो प्रीतम, ए मुझ हाथ नो भांत।।हि।।१९।।

एह सकल उपदेश ने, हो भवियण माथे हाथ चढाय।
तहत करी ने सरधियो, हो भविचण, युगबाहु हुलसाय।।हि।।२०।।

शुभलेश्या शुभध्यान थीं, हो भवियण, काल कर्यो तिणवार।
स्वर्ग पांचवें सुर थयो, हो भवियण, सामानिक पद धार।।हि।।२१।।

तर्ज—मूल की

सुखमय प्राण को मैंने समझे, आज हुये दुखदाय।
कहां ले जाऊं कैसे बचावूं, यों सोचे मनमांय रे।।स।।११६।।

जिसके खातिर सुन्दरता थी, उसके लूंटे प्राण।
ऐसी अपराधिन सुन्दरता, रे मन! तजदे ध्यान रे।स।११७।

गर्भरक्षा का धर्म करारा, नहीं तो तजती प्राण।
जंगल जाऊं कष्ट उठाऊं, मन में लाई ज्ञान रे।स।११८।

जो मैं वन मैं नहीं जाऊं तो, पुत्र तणो संहार।
निश्चय करसी पापी आत्मा, बान्धव मारणहार रे।स।११९।

शील पुत्र की रक्षा जहां हो, वह वन है सुखदाय।
महल भयंकर दुःख का सागर, जिसमें कुमति छाय रे।स।१२०।

अन्त्येष्टि में सभी लगे हैं, सन्धि मिली चित्त चाय।
अन्तिम सेवा हुई नाथ की, अब चलना सुख दाय रे।स।१२१।

शील पुत्र की जिससे रक्षा, वह दुख भी सुखदाय।
वीर-भावना मन में लाके, चली सती वन मांय रे।स।१२२।

द्रव्य भाव से पूर्व दिशा में, वेग गति से जाय।
सिंह शब्द जब सुना कान में, मन में डर नहीं पाय रे।स।१२३।

पीछे से जब मन में आया, जेठ का क्रूर विचार।
उत्पथ पथ से चली सती जी, मन में समता धार रे।स।१२४।

विषयी मनुष्य और सिंह आदि का, मन से किया विचार।
स्थूल शरीर के ये हैं नाशक, शील न नाशूँ लिगार रे।स।१२५।

भौतिक पिंडे मुझे श्रद्धा, धर्म परम सुखदाय।
उसके खातिर इसको तज दूं, यही मर्म मन लाय रे।स।१२६।

सागारी अनशन सती कीनो, समरे श्री नवकार।
सिंह सामने चली सती जी, धीरज मन में धार रे।स।१२७।

मृग सम मृगपति हुआ सती को, हुआ न दुख लिगार।
अनशन पाली वनफल खाये, लीनी क्षुधा निवार रे।स।१२८।

संध्या समय इक केलिगृह में, सती ने लीना वास।
मार्गश्रम से सोई अकेली, धर जिनवर विश्वास रे।स।१२६।

दिनपति जब अस्ताचल पहुंचे, तम छाया वन मांय।
सिंह शब्द घनघोर भयंकर, कायर मन कंपाय रे।स।१३०।

परमेष्ठि का ध्यान धरे सती, मन में चेत अपार।
मध्यरात्रि में प्रसव वेदना, पुत्र हुआ तम-हार रे।स।१३१।

शीतल-पवन तब करे सहायता, पक्षी मंगल गाय।
दिनपति ने परकाश दिखाया, लाल रंग फैलाय रे।स।१३२।

मातृ-प्रेम से देखै सतीजी, मन में चिन्तै एम।
वन में जन्म हुआ तुम लालजी!, क्या दिखलाऊं प्रेम रे।स।१३३।

सावधान हो मन में सोचे, शुद्ध करूं मुझ काय।
साड़ी फाड़ एक झोली करली, लाल को दिया सुलाय रे।स।१३४।

वन देवी! वन देव! तुम्हारी, शरण रहे यह बाल।
मन रखवाला मेल सतीजी, आई सरवर पाल रे।स।१३५।

स्नान से शुद्ध करे चित्त तो, पुत्र—प्रेम के मांय।
मस्त हाथी इक सती पर दौड़ा, वह दौड़ी साहस लाय रे।स।१३६।

पीछा नहीं छोड़ा उस करि ने, दीना गगन उछाल।
स्मरण करतां मूर्च्छा आई, दुख से हुई बेहाल रे।स।१३७।

नीचे पड़तां विद्याधर ने, झेली करुणा लाय।
शीतल जल उपचार करीने, मूर्च्छा दीनी भगाय रे।स।१३८।

देख रूप सती का विद्याधर, भूला भान विशेष।
रूप-राशि मुझ आई हाथ में, विलसूं सुख विशेष रे।स।१३६।

एकाकी जब देखा पुरुष को, बोली धीरज धार।
बान्धव! तुमने करी सहायता, मुझ पर है उपकार रे।स।१४०।

भाई भाई तुम किसको कहती, मैं हूं मणिप्रभ राय।
रत्नवहा नगरी का स्वामी, होओ तुम सुखदाय रे।स।१४१।

मुझे मानने से तुम प्यारी, भय होवे सब दूर।
अपूर्व अवसर आज मिला यह, भोगो सुख भरपूर रे।स।१४२।

भाई भाव तुम मुझ पर रखो, तथा पुत्री लो जान।
प्राणदान के दाता मेरे, विनती करूं सुजान रे।स।१४३।

वैताढ्यगिरि की दो श्रेणी का, मैं स्वामी सुखकार।
भाग्ययोग से तुझे मिला हूँ, पटरानी पदधार रे।स।१४४।

सती सोचे मणिरथ से छूटी, ज़ंगल भागी आय।
दुख दावानल से तो छुटी, पड़ी कूप के मांय रे।स।१४५।

मृगी समान मैं हुई अभागिन, दुःख पारधी लार।
ज्यों भागू त्यों आगे आता, कठिन कर्म निरधार रे।स।१४६।

दूजा मणिप्रभ प्रगट हुआ है, रे मन धीरज धार।
पति प्राण पहले ने लीना, दूजा मम संहार रे।स।१४७।

प्राण जाय पर शील न जावे, यह सच्चा निरधार।
भौतिक तन यह नाशवान है, शील सदा सुखकार रे।स।१४८।

धन तन लाज को देते गुणीजन, एक प्राण के काज।
प्राण त्याग कर रखे धर्म को, यह सच्चा है काज रे।स।१४९।

नाशवान से अविनाशी का, बदला करना आज।
अपूर्व अवसर मिला आज यह, सिद्ध करूं निज काज।स।१५०।

कर विवेक बोली मणिप्रभ से, कहां जाते थे राय!।
किस कारण से पीछे फिरते, कहो मुझे समझाय रे।स।१५१।

'मणिचूड़' हैं पिता हमारे, लीना संजम भार।
वन्दन करने को मैं जाता, मिल गई तुम गुणधार रे।स।१५२।

महल में रखकर तुमको प्यारी, दर्शन का निरधार।
चार ज्ञान के वे हैं धारक, सुविहित गुण के धार रे।स।१५३।

सुना नाम जब मुनि का मुख से, चित्त में भई चैन।
मुनि-पुत्र तुम हो महाराया, सुनो हमारे बैन रे।स।१५४।

दर्शन का दो दान रायजी, तुम मेरे आधार।
मुनि-दर्शन से वंचित रहकर, जीवन से नहीं प्यार रे।स।१५५।

बिन प्रसन्न प्रमदा नहीं होती, वांछित फल दातार।
मुनि-दर्शन का योग दिलाकर, कर लूंगा घर-नार रे।स।१५६।

मुनि-दर्शन को चला राय तब, सती मन हर्ष अपार।
विरुद्ध-भाव को धरे रायजी, सुधरे मेरा कार रे।।स।।१५७।।

कृषी सूखते जलधारा से, कृषक मन हरषाय।
मीन के मरते सरवर भरते, महिमा कही न जाय रे।स।१५८।

रोम-रोम शीतलता छाई, मुनि-दर्शन जब पाय।
करी वंदना मेटी भरमना, बैठी शीश नंवाय रे।स।१५६।

ज्ञान-भाव से मुनि ने जाना, सती का सरल विचार।
अमृत धारा धर्म देशना, वरसाई सुखकार रे।।स।।१६०।।

रवि की रश्मि से तम नहीं रहता, मुनि उपदेशे पाप।
बोध हुआ मणिप्रभ राजा को, हिरदा हो गया साफ रे।स।१६१।

सरल भाव से सती से बोला, माफ करो अपराध।
मुनि उपदेशे बोध हुआ है, मिटा मेरा विखवाद रे।स।१६२।

प्राणदान और मुनिदर्शन के, तुम हो दाता वीर।
क्या तारीफ करूं मैं मुख से, सुखदाता बड़वीर रे।स।१६३।

मुनि उपदेशे भाई प्रेम से, मुझ आया वैराग।
सब सावज को त्याग कर कब, लूं संयम महाभाग रे।स।१६४।

पुत्र याद जब आया सती को, मुनि से पूछे बात।
महाभाग तुम मुझे बताओ, पुत्र तणा वृत्तान्त रे।स।१६५।

लाभ जाण मुनिवर यों बोले, आगमधर अणगार।
चिन्ता तजदो बाई! पुत्र की, धर्म बड़ा रखवार रे।स।१६६।

सुनो पूर्वभव तुम पुत्र के, चरम शरीरी जीव।
दीक्षित होकर केवल पाकर, पावेंगे सुख शिव रे।स।१६७।

जम्बूद्वीप के पूर्व विदेह में, 'पुक्खलवई' सुखकार।
'मणितोरणपुर' चक्री राजा, 'अमितयशा' गुणधार रे।स।१६८।

'पुष्पशिखर' अरु 'रत्नशिखर' यों, दो पुत्रों की जोड़।
चारण-मुनि से शिक्षा पा के, ली दीक्षा धर कोड़ रे।स।१६६।

स्वर्ग बारवें दोनों पहुंचे, धर्म सदा सुखदाय।
धातकी खंड के भरतक्षेत्र में, दोनों उपजें आय रे।स।१७०।

हरिषेण वासुदेव की रानी, समुद्रदत्ता नाम।
युग्म पुत्र वे दोनों जन्मे, नाम सुनो सुखधाम रे।स।१७१।

'समुद्र दत्त' हुये युवराया, सागरदत्त तस भ्रात।
स्थविर समीपे संयम लेके, किया मुक्ति का साथ रे।स।१७२।

विद्युत से दोनों मुनिवर जी, तीजे दिन कर काल।
महाशुक्र में हुये देवता, धर्म-तत्त्व के पाल रे।स।१७३।

गिरि गिरनारे नेम-प्रभु को, उपना केवल-ज्ञान।
समवसरण में दोनों देव ने, प्रश्न किया धर ध्यान रे।स।१७४।

दोनों देव तुम चरम-शरीरी, प्रभु कीना निरधार।
संयम लेके मोक्ष पावोगे, उतरोगे भव पार रे।स।१७५।

मिथिलापुर का विजयसेन नृप, क्षत्रिय-कुल अवतंस।
पद्मरथ जी पुत्र उसी का, शूर होगा निःशंस रे।स।१७६।

सुदर्शन-पुर का युवराजा, युगबाहु तस नाम।
मयणरेहा का पुत्र दूसरा, नमो नाम गुणधाम रे।स।१७७।

लघु-पुत्र की कहूं कहानी, सुनो ध्यान मन लाय।
पुण्यवान जन जहां विराजे, आनन्द रंग वधाय रे।स।१७८।

चीर-फाड़ के वृक्ष डाल पै, झोली में पुत्र सुलाय।
पुत्र-हीन मिथिलेश्वर राजा, अश्व पै आया धाय रे।स।१७९।

सुन्दर सुत को पाय राय जी, आनन्द अंग न माय।
पटरानी के महल पधारे, यों बोले हरषाय रे।स।१८०।

• •

रे सुन प्रिया हमारी, अति सुखकारी, लेवो लालजी।ध्रुवपदम्।

नाथ! लाल से काम न मेरे, मैं हूं अभागिन नार।
पुत्र लाल विन हीरे लाल सब, मेरे हैं बेकार रे।स।१८१।

धीरज धर के मेरी प्यारी, निरखो नजर लगाय।
अजब-गजब का यह तो लाल है, चिन्ता देवे मिटाय रे।स।१८२।

बहुत लाल वहु भोला लाके, मुझको सौंपे राय।
पुत्रलाल विन इस दुखने का, दुःखड़ा नहीं मिटाय रे।स।१८३।

नारी-हृदय में पुत्र-व्यथा की, चिन्ता अपरंपार।
नर नहीं जाने सुनो नाथ! मम, लाल खजाने डाल रे।स।१८४।

जीव-रहित मैं लाल न लूंगी, लीनी प्रीतम धार।
माफ करो अपराध हमारा, मैं हूं दुख दातार रे।स।१८५।

यों मत बोलो प्राण की प्यारी, यह जीवित है लाल।
सुन के दौड़ी, प्रेम को जोड़ी, दुख को दीना डाल रे।स।१८६।

अहो अनुपम पुत्र-रत्न यह, कहां से लाये नाथ।
जलदी रख दो गोद में मेरी, यह दुखिया का साथ रे।स।१८७।

हर्ष भराई हिये लगाई, चुम्बन से सुख पाय।
अन्धकार भय मेरे महल में, ज्योति दीवि लगाय रे।स।१८८।

पुत्र-रत्न यह कहां ले लाये, मुझे कहो समझाय।
अश्व के द्वारा वन में पहुंचा, वृक्ष-दृष्टि ठहराय रे।स।१८९।

कल्पवृक्ष सम उस वृक्ष से, मुझको मिल गया बाल।
क्या महिमा मैं गाऊं इसकी, गुण-संपन्न यह लाल रे।स।१९०।

मेरी खातिर किस सुभगे ने, वन में रखा निदान।
पुत्रवती मैं आज बनी हूँ, यत्न करूंगी महान रे।स।१९१।

गुप्त गर्भ था पटरानी के, जनमा सुन्दर बाल।
फैली बात यह सारे राज्य में, सब जन मंगल माल रे।स।१९२।

वैरी राय तक जब पहुँचेगी, पुत्र रत्न की बात।
नतमस्तक तब वे सब होंगे, तज के मन की घात रे।स।१९३।

गुण-संपदा तब नाम पुत्र का, 'नामि' यह देगा राय।
सुन के सतीजी साता पाई, मुनि-गुण मुख से गाय रे।स।१९४।

घननन घननन घंटा बजते, आया देव विमान।
तेज-पुंज इक देव उसी से, निकला महा गुणवान रे।स।१९५।

प्रथम वंदना सती को करके, मुनि के वन्दै पाय।
विस्मय पाया विद्याधर तब, मुनिजी भेद बताय रे।स।१९६।

भाई मार के मणिरथ राजा, महल को चला सपाप।
पाप-कर्म से मन में धूजा, यों बोला तब साफ रे।स।१९७।

हा हा कुमत ने घेरा मुझको, भाई के लीने प्राण।
अब पापी को दंड का दाता, मैं अपराधी महान रे।स।१९८।

धिग्-धिग् है इस खड्ग भुजा को, कुलका कीना छेद।
शिर को छेदूं दुख को भेदूं, यों करता मन खेद रे।स।१९९।

वीरसिंह इक वीर पुरुष ने, मयणरेहा नहीं पाई।
महल में पहुंची होगी रानी, सोच चला दिल मांही रे।स।२००।

रास्ते में मणिरथ राजा के, उसने सुन लिये वैन।
धीरज देता यों वह कहता, तजदो नृप कुचैन रे।स।२०१।

आत्मघात से सुनो राजवी! नहीं जाता तुज पाप।
चन्द्रयश से माफी मांगो, मन को रखो साफ रे।स।२०२।

मैं पापी अब चन्द्रयश के, कैसे सम्मुख जाऊं।
प्राणनाथ से दूजा मारग, दिखे न सत्य सुनाऊं रे।स।२०३।

चन्द्रयश उदार कुंवर है, कर देगा वह माफ।
इस पद के नहीं योग्य रहा मैं, छोड़ देओ मुझ साफ रे।स।२०४।

यों कह नृप जब चला वेग से, तम छाया घनघोर।
मानो पाप की दूजी छाया, राय चला चित्त चोर रे।स।२०५।

महानाग ने डंक दिया वहां, पड़ा धरणी पर आय।
दुर्बुद्धि भी आने से नृप, नीच-भावना मांय रे।स।२०६।

प्यारी प्यारी मयणरेहा तुम हो, महान चतुर सुजान।
सामंतों से मुझे बचाया, अब रखो मुझ मान रे।स।२०७।

चन्द्रयश जो विघ्न करे तो, उसके लूंगा प्रान।
तेरे खातिर हे सुन प्यारी, कार्य न कोई महान रे।स।२०८।

वैरी सांप ने विघ्न किया है, मेरे तेरे बीच।
मिथ्या मोह को धरता राजा, पहुँचा नरक के बीच रे।स।२०९।

धूम्रप्रभा में पहुंचा राजा, करणी का फल पाया।
मुनि कहते सुन राय विद्याधर, पाप महा दुखदाया रे।स।२१०।

सामन्त ने जब बात सुनाई, चन्द्रयश घबराया।
आश्वासन से धीरज धारी, नृप शव को वह पाया रे।स।२११।

रोष शोक से की अन्त्येष्टि, माता को नहीं पाय।
अति विलाप से राजा रोया, सामन्त भी घबराय रे।स।२१२।

योग्य पुरुष ने धैर्य दिया तब, नृप पद बैठे आय।
चन्द्रयश महाराज हुये पर, मात-पिता [illegible] [illegible] रे।स।२१३।

मात-पिता का ऋण है भारी, मैंने नहीं चुकाया।
राज काज यह पीड़ा देता, चन्द्रयश घबराया रे।स।२१४।

शोध करन को भेजे नृप ने, सुभट महा वड़वीर।
पता नहीं पाया माता का, आके वंधाई धीर रे।स।२१५।

रैयत की करुणा नृप लाया, सेवा भाव मन धार।
शोक रहित हो राज्य चलाता, चन्द्रयश सुखकार रे।स।२१६।

पति को सहाय दिया जो सती ने, ब्रह्मलोक में देव।
करणी-फल पाया मन भाया, आज बजाता सेव रे।स।२१७।

जिस प्रताप से देव हुआ बहै, प्रथम किया प्रणाम।
मन की शंका मेटो राजा, यह है धर्म का काम रे।स।२१८।

मुनि दर्शन का फल अति मोटा, प्रत्यक्ष देखा आज।
इस भव के महा दुख से छूटा, सुधरे मेरे काज रे।स।२१९।

कर वन्दन मुनिजी को राजा, सती के लागा पाय।
भूरि प्रशंसा करके बोला, आशीर्वाद दो माय रे।स।२२०।

मतवाले हाथी को सुधारे, महावतजी बलवान।
मुझको तुमने शुद्ध किया है, यह उपकार महान रे।स।२२१।

कहे सती सुन भाई हमारे, किया महा उपकार।
आशीर्वाद भी तुम मम देवो, मैं हूं याचन हार रे।स।२२२।

प्रेमालाप दोनों में होते, देव कहे समझाय।
सब मिलकर गुण गावो मुनि के, दिया ज्ञान का सहाय रे।स।२२३।

प्रेम भाव से मणिप्रभ को, पहुंचाया निज धाम।
देव सती से नम के बोला, कहो योग्य मम काम रे।स।२२४।

भवसागर से पार उतारे, महासती सहवास।
उनके शरणे मुझको सौंपो, यह विनती है खास रे।स।२२५।

पुत्र-स्नेह से मन व्याकुल है, दिखलाओ दीदर।
मिथिलापुरी में मुझको रखदो, मानूंगी उपकार रे।स।२२६।

मुनि वंदन कर बैठ विमाने, मिथिलापुरी को जाय।
पूर्व कथा को कहे प्रेम से, मन में हर्ष न मायरे।स।२२७।

पुत्र साध्वी स्थान दो में से, वहां जाना सुख धाम।
प्रथम साध्वी दर्शन पाऊं, जिससे सुधरे काम रे।स।२२८।

सुदर्शना सती पै वह पहुंची, नमन किया मन लाय।
बोध सुनाया मन हरषाया, संयम की चित्त चाव रे।स।२२९।

विघ्न पड़ेगा पुत्र भाव में, जो मैं देखूं जाय।
मन समझाया शीश मुंडाया, दीक्षा शिक्षा पाय रे।स।२३०।

सुव्रता है नाम सती का, देव गया निज धाम।
संयम पाले दूषण टाले, करे आत्म का काम रे।स।२३१।

पुष्पमाला अरु पद्मरथ का, सुत से अविचल प्रेम।
पंचधाय से पले लालजी, गिरि चम्पक सह खेम रे।स।२३२।

शिक्षा से यौवन वय पाया, परणाया धर प्रेम।
दो गुंधुक सुर सम सुख भोगे, धर्म कर्म के नेम रे।स।२३३।

स्थविर पधारे राय सुधारे, संयम ले निज काज।
राजन पति राजा नमिराजा, परजा जन सिरताज रे।स।२३४।

नमिराजा का करिवर छूटा, वन में धूम मचाय।
सुदर्शनपुर की सीमा में, परजा को दुखदाय रे।स।२३५।

सबल सैन्य से चन्द्रयश ने, करि को लीना घेर।
आलन थंभ पै बांधा राय ने, करि ने छोड़ा वैर रे।स।२३६।

नमिराय को खबर पड़ी तब, भेजा दूत बलवान।
जलदी देदो हाथी राजा, राय मेरा महान रे।स।२३७।

बल से मैंने हाथी पाया, नृप को दो समझाय।
नहीं माने तो फल पावेगा, करि सम तेरा राय रे।स।२३८।

सुन के कोपा नमिरायजी, युद्ध की करी तैयारी।
चतुरंग दल ले चन्द्रयश पै, निकल पड़ा बलधारी रे।स।२३९।

रात अंधेरे पुर को घेरा, खबर नृपति जब पाया।
सेना सज के चन्द्रयश भी, बदला लेना चाया रे।स।२४०।

किल्ले से तुम लड़ो राजवी, मत खोलो पुर द्वार।
सेनापति ने कहा राय को, अवसर का निरधार रे।स।२४१।

द्वार न खुलते नमिराय जी, हो गये बड़े अधीर।।
कायर नृप इस पुर का मालिक, नहीं क्षत्रिय वड्वीर रे।स।२४२।

इन शूरों के सन्मुख आकर, क्यों [illegible] क्रूर।
छिपा महल में [illegible] ने, क्यों [illegible] रे।स।२४३।

याचक आते छुपे न दाता, रणवंका रजपूत।
यह तो घुस के छुपा महल में, कायर जात कपूत रे।स।२४४।

जोश चढ़ाया नमिराय ने, सेना हो गई शूर।
अधम राय को दंडेंगे हम, खोया क्षत्रिय-नूर रे।स।२४५।

कायर से किला नहीं शोभे, शोभे हमारे राय।
इसे तोड़ के पुर में जाके, बदला लेंगे चुकाय रे।स।२४६।

युद्धवीर तुम युद्ध सिखावो, शत्रु को धर धीर।
परजा जन को अपने समझे, मत उपजाओ पीर रे।स।२४७।

उनका धन तो धूल समाना, नारी भगिनी मात।
रक्षा करना सब संतति की, क्षत्रियत्व की वात रे।स।२४८।

हृदय वीर का दया आर्द्र है, सव जन मंगल गाय।
राजनीति का परिचय देके, सब को देवो जगाय रे।स।२४९।

नमिराय के नीति-बोध को, सब ने शीश चढाया।
किला तोड़ने की तैयारी, मन में जोश भराया रे।स।२५०।

सती साध्वी संयम धारी, नृप के नजर आई।
कौतुक पाया शीश नंवाया, युद्ध में कैसे आई रे।स।२५१।

सूरत तुम्हारी संयमधारी, यहां तो मच रहा द्वन्द्व।
दुनिया का यह अजब फंद है, जिसमें होता वंध रे।स।२५२।

सत्यप्रिय होते हैं त्यागी, झूठ का करते नाश।
किस कारण यह युद्ध मचा है, कहो कारण तुम खास रे।स।२५३।

तुम त्यागी हो महासती जी, मत पूछो यह बात।
सुख सिधावो जिन-गुण गावो, करो मोक्ष का साथ रे।स।२५४।

अज्ञान अंधेरा जग में मोटा, जिससे भूले भान।
सुनो बात तुम ध्यान लगाकर, जिससे पावो ज्ञान रे।स।२५५।

मैं हूं तुम्हारी माता राजा, दोनों मेरे पूत।
अथ से इतितक कहा सती ने, बीतक साथ सबूत रे।स।२५६।

अनरथ होते जब मैं जाना, दोनों भाई बीच।
एक दूसरे का होता घाती, मचे रुधिर का कीच रे।स।२५७।

निज गुरुणी की आज्ञा लेके, आई तुम्हारे पास।
शान्ति स्थापना हेतु हमारा, और नहीं कुछ आश रे।स।२५८।

पुष्पमाला है माता हमारी, मैं हूं उसका पूत।
कैसे प्रतीतूं बात तुम्हारी, आश्चर्य है अद्भुत रे।स।२५६।

चन्द्रयश यदि सम्मुख आवे, प्रेम करन की राय।
तव तुम वैर तजो महाराजा, सुनो सीख सुखदाय रे।स।२६०।

नत हो माना वचन सती का, सतीजी चली सताव।
सुदर्शन पुर द्वारपाल को, पिछला कहा वनाव रे।स।२६१।

खवर पाय के चन्द्रयश जी, आये जननी पास।
शोकातुर हो अश्रु बहाते, बोले सती से खास रे।स।२६२।

धन्य-धन्य है भाग्य हमारा, माता दर्शन पाय।
दावानल पर मेघ वृष्टि सम, कृपा करी तुम आय रे।स।२६३।

संयमवेष किस कारण लीना, कैसे काल विताय।
गर्भ कहां पै रखा माताजी, मुझ को दो समझाय रे।स।२६४।

कही सती ने कथा पाछली, जो तुम पुर पर आय।
विग्रह करता रोष को धरता, वह है मेरा जाय रे।स।२६५।

सुन कर हरषा चन्द्रयशजी, भाई-मिलन को धाय।
नमिराय को खवर पड़ी तब, चलके सामने आय रे।स।२६६।

दोनों मिल गये भाई पियारे, आनन्द अंग न माय।
जय जयकार सभी जन वोले, पड़े सती के पाय रे।स।२६७।

दिया वोध सती ने हितकारी, सुनो सुनो तुम राय।
अज्ञानवश तुम भान भूलते, दोनों महा दुखपाय रे।स।२६८।

एक हाथी के कारण देखो, निज को वैठे भूल।
पूज्यनीक पर धावो करतां, तुच्छ को करता तूल रे।स।२६६।

मन को वश नहीं करने से नृप, जीव भमै भव मांय।
पूज्य गुणों का घातक वन कर, भव-भव में दुख पाय रे।स।२७०।

मन पछताते नमिराय जी, क्षमा याचते भूर।
मैं अपराधी भाई तुम्हारा, मदमाता भरपूर रे।स।२७१।

चन्द्रयशजी प्रेम-भाव से, गद्-गद् कंठ लगाय।
माताजी मेरे सुख के दाता, वैर विरोध भगाय रे।स।२७२।

संयमश्री मेरे मन वसगई, माताजी परताप।
सुदर्शन पुर राज-पाट को, तज के मिटाऊं ताप रे।स।२७३।

नमिराय तब नत हो बोले, यों मत बोलो भ्रात।
अपराधी को शिक्षा करना, नीति धर्म की बात रे।स।२७४।

राज-ताज अपराधी भैया! निश्चय लेवो जान।
इसको तज के संयम लेके, पाऊं मोक्ष सुख-स्थान रे।स।२७५।

परजा जन को धीर बंधाई, नमिराय समझाय।
चन्द्रयश नृप संयम लेके, परम शांति सुख पाय रे।स।२७६।

परजा जन के नम्रभाव से, नमिजी बन गये राय।
मिथिला और सुदर्शन पुर के, सब जन मंगल गाय रे।स।२७७।

कार्तिक पूनम सौम्य चांदनी, सोये सुखभर सेज।
सुखदाई थी सौध-अटारी, था नृप मन में तेज रे।स।२७८।

दाहज्वर की वेदन भारी, प्रकटी राय शरीर।
अग्नि सम काया घबराया, नमिराय बडवीर रे।स।२७९।

विधि विधि से सब सेवा करते, राजवैद्य परवीण।
तथापि शांति नृप नहीं पाता, सब जन हो गये क्षीण रे।स।२८०।

प्रेम-प्रवीणा पटरानी कहे, कहो पीड़ा महाराज।
दाझ समझ के रानी सोचे, चन्दन हैं सुखसाज रे।स।२८१।

वावन चन्दन लेप करन से, नृप पाया तब चैन।
सव अन्तेउर चन्दन घसता, राजा बौला वैन रे।स।२८२।

कंकण शब्द से मैं दुःख पाऊं, निद्रा जाती भांग।
पटरानी कहै सब रानी से, कंकण को दो त्याग रे।स।२८३।

इक इक चूड़ी रखो हाथ में, शब्द हुआ जब बन्द।
नमिराय जी मन में समझे, दो से होता द्वन्द्व रे।स।२८४।

रे रे आतम! दुइ को छोड़ो सेवो एकानन्द।
देहादिक परिवार संग से, बढ़े कर्म का फंद रे।स।२८५।

संयम मुख एकत्व-भाव में रहना, मुझे जरूर।
निर्मलभावे नृप के तन से, वेदन हो गई दूर रे।स।२८६।

सपने से पूरव भव जाना, भाव बढ़े भरपूर।
स्वजनवर्ग को शिक्षा देते, सतवादी महाशूर रे।स।२८७।

संयमश्री है सुख की दाता, विघ्न करै चकचूर।
नाथ वनाती भव-भय हरती, भर्म करे सव दूर रे।स।२८८।

पूर्व भव में इसकी सेवा, करी नहीं मनलाय।
इस भव में कोई साधन देते, जीव सदा दुःख पाय रे।स।२८६।

वीरों को कायर करने का, तजदो झूठा फन्द।
स्वजन होतो करो सहायता, मिटे कर्म का द्वन्द्व रे।स।२६०।

राजभार सव सौंप पुत्र को लीना संयमभार।
प्रत्येक बुद्धि हुये नमीजी, पाये केवल-सार रे।स।२६१।

मोक्ष सिधाये मंगल पाये, हो गया जयजयकार।
सुव्रता सती संयम पाली, पहुंची मोक्ष मंझार रे।स।२६२।

कथी कथा यह ग्रंथाधारे, सज्जन लीजो सार
आगम से विपरीत होयतो, लीजो तेने सुधार रे।स।२६३।

जो जस गावे साता पावे, आराधे भव-पार।
जामनगर के चतुर्मास में, गाया चरित्र सुखदार रे।स।२६३।

सूक्तियां

❑ डॉ. नरेन्द्र भानावत ❑ कन्हैयालाल लोढ़ा ❑

- ईश्वर का ध्यान करने से आत्मा स्वयं ईश्वर बन जाता है। पर जब तक ईश्वरत्व की अनुभूति नहीं होती तब तक प्राणियों को ही ईश्वर के स्थान पर स्थापित कर लो। संसार के प्राणियों को आत्मा के समान समझने से दृष्टि ऐसी निर्मल बन जायेगी कि ईश्वर को भी देखने लगोगे और अन्त में स्वयं ईश्वर बन जाओगे।
- मन, वाणी और क्रिया को शुद्ध करके जब परमात्मा की प्रार्थना की जाती है तो शान्ति प्राप्त होती ही है।
- परमात्मा से भेंट करने का सीधा मार्ग उसका भजन करना है।
- आत्मा में जो गुण वैभाविक हैं, जो उपाधिजन्य हैं अर्थात् काल, क्षेत्र, या पर्याय आदि पर-निमित्त से उत्पन्न हुए हैं, जो स्वाभाविक नहीं हैं, वे गुण बदल जाते हैं, परन्तु आत्मा के स्वाभाविक गुणों में परिवर्तन नहीं होता।
- आत्म-बल को प्रगटाने के लिए तुम्हें आत्मा के विकार दूर करने पड़ेंगे। आत्मा के विकार ज्यों-ज्यों हटते जाएंगे त्यों-त्यों तुम्हारी आत्म-शक्ति का आविर्भाव होता चलेगा।
- भौतिकवाद को समझने पर ही अध्यात्मवाद को और अध्यात्मवाद को समझ लेने पर ही भौतिकवाद को पूरी तरह समझा जा सकता है।
- जो विज्ञान मनुष्य की मनुष्यता नहीं बढ़ाता, बल्कि उसे घटाता है और पशुता की वृद्धि करता है, वह मानव-जाति के लिए हितकर नहीं हो सकता।
- पापी, दुष्ट और दुरात्मा को भी अपने समान मानकर, उसके भी उद्धार की भावना रखने वाला ही सद्गुरु है।
- महापुरुष अपने आचरण का आदर्श जगत् के हित के लिए उत्तराधिकार के रूप में छोड़ गये हैं।
- लौकिक धर्म से शरीर की और विचार की शुद्धि होती है और लोकोत्तर धर्म से अन्तःकरण एवं आत्मा की।
- धर्म, व्यक्ति और समाज का जीवन है। जिन्हें आनन्दमय जीवन पसन्द नहीं है वे धर्म से दूर रह सकते हैं।
- कर्मों की स्थिति नाशवान् है, इस दृढ़ विश्वास के साथ आगे बढ़ते जाओ तो आत्मा के समस्त आवरण जल्दी नष्ट हो जायेंगे। दृढ़ विश्वास वाले के प्रगाढ़ कर्म भी शिथिल पड़ जाते हैं और तीव्र रस वाले कर्म मन्द रस वाले हो जाते हैं।

- जिसे सुनने से मोह में कमी हो, वही धर्मकथा है और जिसे सुनने से मोह में कमी न हो, बल्कि मोह उलटा बढ़ जाय, वह धर्मकथा नहीं, मोहकथा है।
- जब तक धर्मवृक्ष के ग्राम धर्म रूप मूल को नीति के जल से सींचा न जायेगा, तब तक सूत्र धर्म और चरित्र धर्म रूपी मधुर फल की आशा नहीं की जा सकती।
- गरीबों के लिए जब तक पर्याप्त अन्न और वस्त्र का प्रबन्ध नहीं होता तब तक राष्ट्र धर्म अपूर्ण है।
- ईश्वर की प्रार्थना से समभाव पैदा होता है और समभाव ही मोक्ष का द्वार है।
- ज्ञानपूर्वक होने वाला समभाव ही सामायिक है।
- गुण देखकर उन्हें प्राप्त करने के लिए की जाने वाली वन्दना ही सच्ची वन्दना है।
- जो आत्मा स्व-स्थान का त्याग करके, प्रमाद के वश होकर पर-स्थान में चला गया हो, उसे फिर स्व-स्थान में लाना प्रतिक्रमण है।
- कायोत्सर्ग करने से अतीतकाल और वर्तमान काल के पापों के प्रायश्चित की विशुद्धि होती है।
- प्रत्याख्यान करने से आस्रव-द्वारों का निरोध होता है।
- सहिष्णुता कायरता का चिह्न नहीं वरन् वीरता का फल है।
- समानता का आदर्श जीवन में उतारने के लिए सबसे पहले जीवन में मानवता प्रकट करनी पड़ती है।
- बन्धुताविहीन साम्यवाद विनाश का कारण बन सकता है।
- हम अपने ही किये कर्म का फल भोगते हैं, यह जान लेने पर शान्ति ही रहती है, अशान्ति नहीं होती। अपनी आँख में अपनी ही ऊंगली लग जाय तो उपालम्भ किसे दिया जाय ?
- प्रमाद हिंसा है, विषय लोलुपता भी हिंसा का कारण है।
- अहिंसा का विधि अर्थ है—मैत्री, बन्धुता, सर्वभूत-प्रेम। जिसने मैत्री या बन्धुता की भावना जागृत नहीं की है, उसके हृदय में अहिंसा का सर्वांगीण विकास नहीं हुआ है।
- जिस विचार, बात और कार्य का त्रिकाल में भी पलटा न हो, जिसको अपनी आत्मा निष्पक्ष भाव से अपनावे, जिसके पूर्ण रूप से हृदय में स्थित हो जाने पर भय, ग्लानि, अहंकार, मोह, दम्भ, ईर्ष्या, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ आदि कुत्सित भाव निःशेष हो जावे, जो भूत में था, वर्तमान में है और भविष्य में होगा तथा जिसके होने पर आत्मा को वास्तविक शान्ति प्राप्त हो, उसी का नाम 'सत्य' है।
- अपने सिर पर लिए हुए कर्त्तव्य का पालन न करना भी एक प्रकार की चोरी है।
- ब्रह्मचर्य दिव्यशक्ति और दिव्यतेज प्रदान करने वाला महान् रसायन है। जो मनुष्य पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन कर सकता है, उसके लिए कोई भी वस्तु दुर्लभ नहीं रहती।
- जैसे मलीन कांच में मुंह नहीं दीखता, उसी प्रकार लोभ और तृष्णा से भरे हुए हृदय को न्याय नहीं सूझता।
- वह सम्पत्ति सफल है जो संसार के कल्याण का साधन बनती है।

- जव क्रिया मात्र का त्याग करना सम्भव न हो तो पहले उस क्रिया का त्याग करना उचित है, जिससे अधिक पाप होता है।
- जो मनुष्य मैत्रीपूर्ण आचार और विवेकपूर्ण विचार द्वारा कषाय को जीतने का प्रयत्न करता है, वह कषाय को जीत सकता है और विश्व में शान्ति भी स्थापित कर सकता है।
- जैसे अग्नि थोड़े ही समय में रुई के ढेर को भस्म कर देती है उसी प्रकार क्रोध भी आत्मा के समस्त शुभ गुणों को भस्म कर देता है।
- मिथ्याभिमान जीवन का अपकर्ष और धर्माभिमान उत्कर्ष करने वाला है।
- जैसे बालक कपटरहित होकर माता-पिता के सामने सब बात खोलकर कह देता है, उसी प्रकार जो पुरुष अपना समस्त व्यवहार निष्कपट होकर करता है, वही वास्तव में धर्म की आराधना कर सकता है।
- कांक्षा या कामना एक ऐसा विकार है, जिसके संसर्ग से तपस्वियों की घोर तपस्या और धर्मात्माओं के कठोर से कठोर धर्मानुष्ठान भी कलंकित हो जाते हैं।
- क्षमा के बिना वास्तव में कोई भी गुण नहीं टिक सकता। मोक्ष के मार्ग पर चलने में क्षमा पाथेय के समान तो है ही, संसार-व्यवहार में भी क्षमा की अत्यन्त आवश्यकता है।
- हे दानी ! तू दान के बदले कीर्ति और प्रतिष्ठा खरीदने का विचार मतकर। अगर तेरे अन्तःकरण में ऐसा विचार उत्पन्न हुआ है तो समझ ले कि तेरा दान, दान नहीं है; व्यापार है।
- बुरे कामों से निवृत्त होना और अच्छे कामों में प्रवृत्त होना शील है।
- तप के अभाव में सदाचार भ्रष्ट हो जाता है।
- क्रमिक रूप से अपनी भावना का विकास करते चलने से एक समय आपकी भावना प्राणी मात्र के प्रति आत्मीयता से परिपूर्ण बन जाएगी, आपका अहं जो अभी सीमित दायरे में गांठ की तरह सिमटा हुआ है, बिखर जायेगा और आपका व्यक्तित्व विराट रूप धारण कर लेगा।
- समस्त प्राणियों में ईश्वर विराजमान है। प्राणियों की सेवा करना ईश्वर की सेवा है। जिस मनुष्य में इतना ज्ञान नहीं वह पशु से भी गया बीता है।
- जो परोपकार करता है वह आत्मोपकार करता है।
- सुव्रती अन्याय के खिलाफ अलख जगाता है। वह न स्वयं अन्याय करता है और न सामने होने वाले अन्याय को टुकुर-टुकुर देखता रहता है।
- जैसा आहार वैसा विचार, उच्चार और व्यवहार।
- धर्म, परिश्रम त्याग कर परिश्रम के फल को अनायास भोगने का उपदेश नहीं देता। धर्म अकर्मण्यता नहीं सिखाता। धर्म हरामखोरी का विरोध करता है और हक के खाने का विधान करता है।
- वे गृहस्थ धन्य हैं जिनके हृदय में दया का वास रहता है और दुःखी को देखकर अनुकम्पा उत्पन्न होती है।

- अनजाने को जानना, जाने हुए की खोज करना और खोजे हुए को जीवन में उतारना, यह जीवनशुद्धि का मार्ग है।

- प्रत्येक प्राणी को अपनी आत्मा के समान समझकर आत्मौपम्य भावना की उन्नति में ही मानव-समाज की सच्ची उन्नति है।

- विवाह का उद्देश्य चतुष्पद बनना नहीं, चतुर्भुज बनना है।

- दूसरे की सहायता में शक्ति खर्च करना, दूसरे के दुःख को अपना दुःख मानना और दूसरे के सुख को अपना सुख समझना, मनुष्य का आवश्यक कर्त्तव्य है। ईश्वर से प्रार्थना करो कि आपकी प्रकृति ऐसी बन जाय।

- सुव्रती अन्याय का प्रतीकार करने के लिए कटिबद्ध रहता है। अन्याय का प्रतीकार करने में वह अपने प्राणों को हँसते-हँसते निछावर कर देता है। वह समाज और देश के चरणों में अपने जीवन का बलिदान देकर भी न्याय की रक्षा करता है।

- जब तक गरीब आपको प्यारे नहीं लगेंगे तब तक आप ईश्वर को प्यारे नहीं लगेंगे।

- बालक तो अपने माता-पिता का उत्तराधिकारी है। न केवल उनकी धन दौलत का, मगर उनके सद्गुणों एवं दुर्गुणों का भी वह उत्तराधिकारी है। यह बात अगर मां-बाप की समझ में आ जाय तो बालक का बहुत कुछ भला हो सकता है।

- मातृ-प्रेम के समान संसार में और कोई प्रेम नहीं। मातृ-प्रेम संसार की सर्वोत्तम विभूति है, संसार का अमृत है। अतएव जब तक पुत्र गृहस्थ-जीवन से पृथक् होकर साधु नहीं बना है, तब तक माता उसके लिए देवता है।

- चाहे नौकर रहो या मालिक बनो, जब तक पारस्परिक विश्वास की कमी रहेगी, काम नहीं चलेगा और पारस्परिक विश्वास दोनों की नीतिनिष्ठा से जनमता है।

- अन्त्यजों के प्रति दुर्व्यवहार करके आप धर्म का उल्लंघन करते हैं, मनुष्यता का अपमान करते हैं, देश और जाति को दुर्बल बनाते हैं, अपनी शक्ति को क्षीण करते हैं और अपनी ही आत्मा को गिराते हैं।

- परिवर्तन में ही गति है, प्रगति है, विकास है, सिद्धि है। जहां परिवर्तन नहीं वहां प्रगति को अवकाश भी नहीं है। वहां एकान्त जड़ता है, स्थिरता है, शून्यता है। अतएव परिवर्तन जीवन है और स्थिरता मृत्यु है। परिवर्तन के आधार पर ही विश्व का अस्तित्व है।

- स्त्रियां जग-जननी का अवतार हैं। इन्हीं की कूख से महावीर, बुद्ध, राम, कृष्ण आदि उत्पन्न हुए हैं। पुरुष समाज पर स्त्री-समाज का बड़ा भारी उपकार है। उस उपकार को भूल जाना, उनके प्रति अत्याचार करने में लज्जित न होना, घोर कृतघ्नता है।

- न्यायोचित व्यापार करने वाला अपने धर्म पर स्थिर रहेगा और जो अन्याय करेगा वह अधर्म की सरिता में डूबेगा।

- तुम जिस देश में जन्मे हो, जहाँ के अन्न, जल और वायु से तुम्हारा पोषण हुआ है, उसी देश में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के अतिरिक्त दूसरी वस्तुओं का तुम्हें त्याग करना चाहिए।

• जो राजा प्रजा की रक्षा के योग्य उत्तरदायित्व की परवाह नहीं करता, वह राजा नहीं, लुटेरा है; वह राजभक्ति का पात्र नहीं हो सकता।

• संघधर्म का ध्येय व्यक्ति के श्रेय के साथ समष्टि के श्रेय का साधन करना है। जब समष्टि के श्रेय के लिए व्यक्ति का श्रेय खतरे में पड़ जाता है तब व्यक्ति के श्रेय का साधन करना संघधर्म का ध्येय बन जाता है।

• स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए उत्सर्ग की आवश्यकता होती है। स्वतंत्रता का पथ फूलों से नहीं, कांटों से आकीर्ण है।

• स्वावलम्बन, स्वतंत्रता की पहली शर्त है, और दूसरों की सहायता की तिल भर अपेक्षा न रखना स्वावलम्बन है।

• सत्याग्रह का प्रभाव, मन पर पड़ता है और मन सारे शरीर का राजा है। इसलिए सत्याग्रह द्वारा जो सफलता प्राप्त होती है, वह स्थायी और शांतिप्रद होती है।

• नीति और धर्म, ये दोनों जीवन-रथ के दो चक्र हैं। दोनों में से एक के अभाव में जीवन की प्रगति रुक जाती है।

• सौ निरर्थक बातें करने की अपेक्षा एक सार्थक कार्य करना अधिक श्रेयस्कर है।

• जिस शिक्षा की बदौलत गरीबों के प्रति स्नेह, सहानुभूति और करुणा का भाव जागृत होता है, जिससे देश का कल्याण होता है और विश्वबन्धुता की ज्योति अन्तःकरण में जाग उठती है, वही सच्ची शिक्षा है।

• हिंसा के प्रयोग से या हिंसाजनक अस्त्र-शस्त्र से प्राप्त की हुई विजय स्थाई नहीं रहती। इसके विपरीत प्रेम और अहिंसा द्वारा जन-समाज के हृदय पर जो प्रभुता स्थापित की जाती है, वह सच्ची और स्थायी विजय है।

• उपवास वह है जिसमें कषायों का, विषयों का और आहार का त्याग किया जाता है। जहाँ इन सबका त्याग न हो—सिर्फ आहार त्यागा जाय और विषय-कषाय का त्याग न किया जाय, वह उलंघन है— उपवास नहीं।

• मनुष्य के साथ प्रेम करना, मैत्री स्थापित करना, यही ईश्वर के पथ के कंटकों को बीनना है। ऐसा करके ही मनुष्य अपने पुराने पापों का प्रायश्चित कर सकता है। परमात्मा के साथ मिलाप होने का भी यही मार्ग है।

• अहंकार का त्याग करके नम्रता धारण करने वाले, मनुष्य रूप में देव हैं; चाहे वे कितने ही गरीब हों। जिसके सिर पर अहंकार का भूत सवार रहता है, वह धनवान् होकर भी तुच्छ है, नगण्य है।

• पाप के प्रकाशन से मलीन आत्मा भी निर्मल बन जाती है।

• बाहर के पापों को समझना सरल है किन्तु पाप के सूक्ष्म मार्ग को खोज निकालना बड़ा ही कठिन है। बाहर से हिंसा आदि न करके ही अपने को निष्पाप मान बैठना भूल है।

• सुभट की अपेक्षा साधु और सम्राट् की अपेक्षा परिव्राट इसीलिए वन्दनीय और पूजनीय है कि सुभट और सम्राट् क्षेत्र पर विजय प्राप्त करता है जब कि साधु या परिव्राट क्षेत्री अर्थात् आत्मा पर। क्षेत्र या शरीर पर विजय पा लेना कोई बड़ी बात नहीं है परन्तु क्षेत्री अर्थात् आत्मा पर विजय पा लेना अत्यन्त ही कठिन है।

• सम्यग्ज्ञान शाश्वत सूर्य है, कभी न बुझने वाला दीपक है। उसके चमकते हुए प्रकाश से मात्सर्य, ईर्ष्या, क्रूरता, लुब्धता आदि अनेक रूपों में फैला हुआ अज्ञान-अन्धकार एक क्षण भी नहीं टिक सकता है।

- जीवन के वास्तविक उत्कर्ष के लिए उच्च और उज्ज्वल चारित्र की आवश्यकता है। चारित्र के अभाव में जीवन की संस्कृति अधूरी ही नहीं, शून्य रूप है।

- ज्ञानहीन क्रिया अन्धी है और क्रियाहीन ज्ञान पंगु है।

- भोगों में अतृप्ति है, त्याग में तृप्ति है। भोगों में असन्तोष, ईर्ष्या और कलह के कीटाणु छिपे हुए हैं, त्याग में सन्तोष की शान्ति है, निराकुलता का अद्‌भुत आनन्द है, और है आत्मरमण की स्पृहणीयता।

- आत्मा की वास्तविक शांति स्थिर होने में ही है। जहाँ तक आत्मा स्थिर न होगा वहाँ तक आत्मा को शांति-लाभ संभव नहीं है।

- एक ओर से मन को अप्रशस्त में जाने से रोको और दूसरी ओर उसे परमात्मा के ध्यान में पिरोते जाओ। ऐसा करने पर मन वश में किया जा सकेगा।

- मनुष्य की महत्ता और हीनता, शिष्टता और अशिष्टता वाणी में तत्काल झलक जाती है। अतएव संस्कारी पुरुषों को बोलते समय बहुत विवेक रखना चाहिए।

- मुँह से जैसी ध्वनि निकलेगी वैसी ही प्रतिध्वनि सुनने को मिलेगी। अगर कटु शब्द नहीं सुनना चाहते हो तो अपने मुँह से कटु शब्द मत निकालो।

- दूसरे के दोष न देखकर अपने ही दोषों को दूर करने में भलाई है।

- जैसे सोना पाने के लिए धूल त्याग देना कठिन नहीं है, उसी प्रकार परमात्मा का वरण करने और सत्य-शील को स्वीकार करने के लिए तुच्छ विषयभोगों का त्याग करना क्या बड़ी बात है?

- काले कपड़े पर लगा हुआ दाग जल्दी दिखाई नहीं देता। इसी प्रकार जिनका हृदय पापों से खूब भरा है उन्हें अपने पाप दिखाई नहीं देते।

- बाह्य सम्पत्ति के नष्ट हो जाने पर भी जिसके पास सद्विचार और धर्मभावना की आन्तरिक समृद्धि बची हुई है, वह सौभाग्यशाली है। इसके विपरीत आन्तरिक समृद्धि के न होने पर बाह्य सम्पत्ति का होना दुर्भाग्य का लक्षण है।

- मन की समाधि से एकाग्रता उत्पन्न होती है, एकाग्रता से ज्ञान-शक्ति उत्पन्न होती है और ज्ञानशक्ति से मिथ्यात्व का नाश तथा सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है।

- वस्तु स्वरूप का यथावत् और गहरा चिन्तन न करने से ही वस्तुओं के प्रति राग-द्वेष उत्पन्न होता है। वस्तुओं का स्वरूप वास्तव में इतना उद्वेगजनक है कि उनके स्वरूप की दृढ़ प्रतीति हो जाने के पश्चात् राग-द्वेष को अवकाश नहीं रहता।

- सभी धर्म महान् हैं किन्तु मानव-धर्म उन सब में महान् है।

- जहाँ निर्लोभता है वहाँ निर्भयता है।

- जिन्होंने, परम हंस की वृत्ति स्वीकार करके स्व-पर भेद विज्ञान का आश्रय लेकर अपनी आत्मा को शरीर से पृथक् कर लिया है, उन्हें शारीरिक वेदना विचलित नहीं कर सकती।

- संसार सम्बन्धी लालसाओं को बढ़ाना दुःख है और लालसाओं पर विजय प्राप्त करना सुख है।
- द्रव्य पर अपना अधिकार न समझो। द्रव्य का अपने आपको ट्रस्टी मात्र समझो और सार्वजनिक हित में द्रव्य का उपयोग करो। इसी को द्रव्य यज्ञ कहते हैं।
- अगर 'मैं' और 'मेरी' की मिथ्या धारणा मिट जाय तो जीवन में एक प्रकार की अलौकिक ऋजुता, निरुपम निस्पृहता और दिव्य शांति का उदय हो जाय।
- धर्म सत्य है और सत्य सर्वत्र एक है, फिर धर्म अनेक कैसे हो सकते हैं? अतः धर्म एक है, अनेक नहीं।
- आत्म-बल से सम्पन्न महात्मा मृत्यु का आलिंगन करते समय रंचमात्र भी खेद नहीं करते। मृत्यु उनके लिए सघन अन्धकार नहीं है, वरन् स्वर्ग-अपवर्ग की ओर ले जाने वाले देवदूत के समान है।
- जिस मनुष्य के हृदय में थोड़े-से भी सुसंस्कार विद्यमान हैं, वह गुणीजनों को देखकर प्रमुदित होता है। मानव-स्वभाव की यह आन्तरिक वृत्ति है, जो नैसर्गिक है।
- तमाखू ज्ञान-तंतुओं पर विनाशक प्रभाव डालती है। हृदय को दुर्बल बनाती है। मन को भ्रान्त करके स्मरण शक्ति की जड़ उखाड़ फेंकती है।
- शराब वह पिशाचिनी है जो मनुष्य को एक बार अपने अधीन करके उसका सत्व चूस लेती है।
- बाहरी चमक-दमक को सुन्दर रूप मत समझो। जिस रूप को देखकर पाप कांपता है और धर्म प्रसन्न होता है, वही सच्चा सुरूप है—सौन्दर्य है।
- जो अपने आपको द्रष्टा और संसार को नाटक रूप देखता है, सारी शक्तियाँ उसके चरणों की सेवा करने को तैयार रहती हैं।
- 'कण्टके नैव कण्टकम्' नीति के अनुसार कुसंग का त्याग करने के लिए सत्संग का आश्रय लेना कर्त्तव्य हो जाता है।
- मनुष्य को सद्गुणों के प्रति नम्र और दुर्गुणों के प्रति कठोर होना चाहिए। □

काव्यांजलि
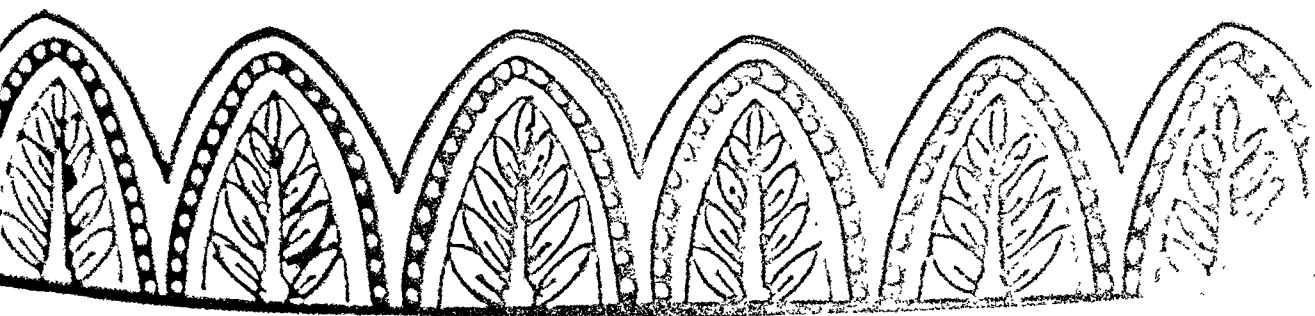
महाकाव्य अंश

□ महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया □

पूज्याचार्य

सर्ग एक

उठो लेखनी, अपने को तुम
निर्मल पावन करलो,
अपनी पतली तीक्ष्ण नोक में
शक्ति अलौकिक भरलो।

महामनुज की दिव्य शक्ति की
उन्नत गाथा गाओ;
साधु-पुरुष के शीतल पग पर
अपना शीश झुकाओ।

जीवन जहाँ पवित्र सदा है
वहाँ न रहती माया;
सभी तरह से निर्मल रहती
साधु जनों की काया।

मोह न उसको कभी सताता
गर्व न तिलभर रहता;
औरों के हित अपने तन पर
दुःख अहर्निश सहता।

साधु वही है जिसके मन में
कोई लोभ नहीं है;
किसी प्रलोभन से अन्तर में
कोई क्षोभ नहीं है।

जिसके कर्म सभी हैं सात्त्विक
जीवन सदा सरल है;
धरती पर वह उन्नत प्राणी
मिलता बहुत विरल है।

ऐसे जन ही धर्म-भाव की
रखते टेक बनाये;
ऐसे ही श्री भद्रों ने तो
रक्खी सृष्टि सजाये।

जहाँ न ईर्ष्या-द्वेष लेश-भर
वही हृदय है निर्मल,
साधु-जनों का महत तत्त्व है
परम श्रेय में अविचल।

परम शान्ति सौहार्द-ज्योति से
रहता है यह जगमग;
जिनके दृढ़ विश्वासों से ही
है आलोकित भव-मग।

परम स्वच्छ उस अन्तस्तल में
जग भी होता निर्मल;
उनके तप से, [illegible]
बनता [illegible]

गा न सके कोई संतों की
जग में महिमा पूरी,
भव की चकित वुद्धि में रहती
सीमा की मजवूरी।

फिर भी, गिरा पवित्र बने वस
उनका गीत सुनाता;
अपनी कोमल कविताओं का
पग पर फूल चढाता।

उठो लेखनी! शव्द-शव्द में
नई रोशनी भर दो;
चलने को अविराम धरा पर
जीवन उज्ज्वल कर दो।

परम-पुरूप का चरित वखानूँ
ऐसा मुझ में वल दो;
भाव हृदय के रन्ध्र-रन्ध्र में
गतिमय और विमल दो।

सर्ग दो

तप कर धरती जलती है जव
सागर-धार उवलती है तव;
नीर ताप पर चढ़ जाता है
मेघ गगन में वन जाता है।

वही घटा फिर झर्-झर् झरती
नयन धरा के शीतल करती
कारण-कार्य सभी हैं गुम्फित
इसमें ही जग रहता सीमित।

जब भी जिसकी पड़ी जरूरत
शक्ति भुवन में खिलती अविरत,
वही उपस्थित हो जाता है
दृग के सम्मुख मुस्काता है।

नियम प्रकृति का यही अटल है
इस पर आश्रित कर्म प्रबल है;
अपना पथ यह स्वयं बनाती
बाधा इसमें कभी न आती!

अपने मन की ही इच्छा से
साधु-पुरुष की ही शिक्षा से,
सृष्टि चला करती है अविरल
इस पर निर्भर है नभ-जल-थल!

जो भी आते प्रेरित आते
अपने अपना कर्म सजाते;
उससे भिन्न नहीं कुछ भी है
अग जग में वस तत्त्व यही है।

इसके कारण शुभ फल आता
सवको केवल यही नचाता,
मानव आता इस भूतल पर
शक्ति वही अपने में भर कर।

शक्ति चाहती काम कराना
मानव वुनता ताना-वाना,
मानव तो कठपुतली ऐसा
सब कुछ करता उसके जैसा!

कोई इसे अलौकिक कहता
इसके आगे नत सिर रहता;
कोई सदा उदास हृदय से
सहमे रहते रश्मि उदय से।

अपना-अपना कर्म सभी में
तरू-सा उगता शान्त मही में;
किन्तु वही फल-फूल निखरता
जिसमें दैवी तत्त्व उभरता!

ऐसे ही जन इस पर धरती पर
बनते जन-कल्याण-दिवाकर;
और बनाते सकल सृष्टि को
उन्नत जग में लीन दृष्टि को।

उनके आगे सभी एक हैं
सब में उनके शुभ विवेक हैं;
वहाँ न रहता भेद किसी में
रोदन-क्रन्दन और हंसी में।

● ●

मेरे पुण्य चरित के नायक
ऐसे ही थे शुद्ध विधायक;
अपना पैतृक घर छोड़ा था
कुटिल मोह से मुँह मोड़ा था।

किन्तु जगत कौटुम्ब बना था
सब प्राणी से प्राण जुड़ा था।
स्वयं सर्व भूतात्म भाव से
रहे सदा संश्लिष्ट चाव से।

त्याग दिया था गेह नेह का
किन्तु हृदय था रूप स्नेह का;
इसीलिए जन-जन के मन में
बसे हुए हैं प्रतिपल-छन में।

त्यागी होकर, थे अनुरागी
पर-हित में मन से बैरागी;
वाणी बात पुण्य की कहती
देवी शक्ति हृदय में रहती।

● ●

भरत-भूमि परतंत्र बनी थी
दास-भाव में घनी सनी थी;
लोग-बाग सब उच्छृंखल थे
अपने मन से दीन-निबल थे।

मन में था आडम्बर आया
अपना सच्चा ज्ञान भुलाया;
दया-धर्म का लोप हुआ था
उन्नत भाव-विलोप हुआ था।

पशु-सा जीवन लगा बीतने
सात्विकता खुद लगी रीतने।
ऐसे में ही पूज्य जवाहर
आये भू पर बनकर नर-वर।

उनका ही हम यश हैं गाते
उनकी पावन कीर्ति सुनाते;
इससे हृदय प्रसन्न रहेगा
उर्ध्व भाव आसन्न रहेगा !!

सर्ग अठारह

धर्म धरा का प्राण कि जिससे,
जीवन उन्नत हो तो
धर्म-विहीन जगत का प्राणी
बीज जहर का बोता।

इसीलिए है उचित कि अपनी
नींव धर्म पर रक्खो;
धर्म-भाव-उत्प्रेरित होकर
इसके फल को चक्खो।

जहाँ मनुज से छूट चुका है
सद्धर्मों का आश्रय;
वहाँ-वहाँ पर न्याय-नीति की
होगी सदा पराजय।

संत जवाहर की वाणी में
धर्म सदा जगता था;
बिना धर्म के [illegible] जगत का
सूना-सा लगता था।

राजनीति में धर्म-नीति की
वाणी पड़ी सुनाई;
सत्य-अहिंसा के पालन की
सबको राह बताई।

कहा कि जीवन सत्य-परक है
इसको सब अपनाओ;
अपनी रक्षा-हेतु अहिंसा
को ही ढाल बनाओ।

चाहे कुछ हो, पर असत्य को
मन में जगह न देना;
सत्य प्रकाशित परम शक्ति है
इसका आश्रय लेना।

पुनः अहिंसा की व्याख्या में
यह भी थे बतलाये;
मूढ़ वही है जो हिंसा पर
अपना ध्यान लगाये।

हिंसक शत्रु रहे पर फिर भी
हिंसा मत अपनाओ।
परम अहिंसा के पथ पर चल
उसको मित्र बनाओ।

कहा अहिंसा में जो ताकत
रहती सदा समाई;
शस्त्र-अस्त्र के निखिल पुञ्ज में
शक्ति कहाँ वह आई ?

हिंसक जग है, इसीलिए तो
उथल-पुथल है, जग में;
टिका न कोई रह पाता है
अपनी संस्कृति-मग में।

भारत का आदर्श यही है
हिंसा मन से त्यागो;
परम अहिंसा का पालन कर
दिव्य ज्योति में जागो।

दुःख किसी को पहुँचाना ही
है हिंसा का लक्षण,
इससे ऊपर खुद को रखकर
ज्योति बनो तुम चेतन।

अपने हक को किन्तु माँगना
कोई दोष नहीं है;
इसके हित अन्तर में लाना
कुछ आक्रोश नहीं है।

देश हुआ परतंत्र तो इसको
तुम आजाद कराओ;
भारत की संस्कृति का झंडा
अम्बर तक फहराओ।

● ●

राजनीति औ धर्म-नीति था
इनका शुभ अवलम्बन
इसमें ही है निहित व्यक्ति के
जीवन का आरोहण।

व्यक्ति-व्यक्ति के सद्-विचार पर
इनका ध्यान रहा है;
उच्चादर्शों का पालन ही
इनका मान रहा है।।

सर्ग उन्नीस

व्यक्ति-व्यक्ति के ही विकास से
उन्नत राष्ट्र कहाता;
विकसित होकर राष्ट्र व्यक्ति को
विकसित खुद कर जाता।

देश राष्ट्र औ व्यक्ति-व्यक्ति में
है संबंध पुराना;
एक दूसरे पर अवलंबित
है विकास का पाना।

इसीलिए है उचित की जन-जन
धर्म-नीति अपनाये;
अपने सुख से रहे; राष्ट्र को
उन्नतिशील बनाये।

इन्हीं परस्पर के संबंधों
पर है जीवन निर्भर,
यही जहाँ विच्छिन्न हुआ तो
पड़ा भाग्य पर पत्थर।

होकर के आचार्य-संत श्री
रहे यही बतलाते;
जन-जन के सात्त्विक विकास का
मार्ग रहे दिखलाते।

• •

भारत की संस्कृति जो दिन-दिन
अब तक गिरती आई;
उसे देखकर उनके मन में

हिंसा से आक्रान्त मनुज-का
अब कल्याण नहीं है।

इसीलिए हर अवसर पर थे
जन-जन को समझाते;
धर्म-भाव से भटके नर को
सच्ची राह दिखाते।

हर क्षण कहते थे जीवन में
सदा स्वच्छता लाओ;
अहंकार-आडम्बर से हट
निर्मल-मन बन जाओ।

खद्दर के भी शुभ्र वस्त्र को
बोले थे अपनाओ,
स्वच्छ-सादगी जो इसमें है
वैसा हृदय बनाओ।

जहाँ कहीं मालिन्य दीखता
कहते दूर भगाओ;
अन्तर को साधन से चमचम
शीशे-सा चमकाओ।

सर्ग इक्कीस

जीवन-भावन की यह धारा
सदा प्रवाहित कूल-किनारा,
जब से सृष्टि चली है तब से
चलती एक साथ औ ढब से।

बिन्दु-सरीखे हैं सब प्राणी
नियति डोर है सृष्टि-निशानी;
आया परमलोक से मानव
जन्म धरा पर धरकर अभिनव।

आना-जाना जीवन-क्रम है
यही मनुज की जड़ता तम है;
वह अनन्त बन खिल जाता है
उससे नर जब मिल जाता है।

यही चाह है इस आत्मा की
कटे अँधेरी घोर अमा की,
कटता है जब तम का घेरा
दिखता उज्ज्वल दिव्य सवेरा।

आना-जाना तभी छूटता
काल मनुज को नहीं लूटता
यही लक्ष्य है परम प्राप्ति का
जड़-जीवन की चरम व्याप्ति का।

इसी ओर है सबको बढ़ना
उर्ध्व-मुखी हो तम से कढ़ना;
तम से निकल मनुज जब जाता
तभी सिद्धि जीवन की पाता।

लेकिन जीवन का आरोहण
बड़ा कठिन है यह आरक्षण।
पग-पग संकट, बाधा आती
काँप हृदय की दृढ़ता जाती।

ज़िसमें है निष्ठा का दृढ़-बल
प्राप्त वही करता यह संबल;

इसीलिए आचार्य सदा ही
तत्त्व बताते साधन का ही।

सभी तरह इस मन को निर्मल
करना है जीवन को उज्ज्वल,
तभी लक्ष्य वह मिल सकता है
मुँदा कमल-दल खिल सकता है।

साधन घोर कठिन लगता है
लेकिन मानव ही चलता है
साध्य किसी का कब असाध्य है?
मनुज कर्म से सदा बाध्य है।

अपना साधन खुद करना है
मार्ग ज्योति का ही धरना है,
किन्तु हृदय इस योग्य बनाओ
दिव्य-ज्योति का ज्वार जगाओ।

मन उदार जब हो जायेगा
धर्म प्रकाश तभी आयेगा;
मन को है साधन में तपना
हृदय सहिष्णु बनाओ अपना।

अपनी आत्मा ही जगती है
देखो, सब में क्या लगती है,
कोई जग में भिन्न नहीं है
आत्म-ज्योति परिछिन्न नहीं है।

भिन्न किरण पर, एक दिवाकर
प्राण-प्राण का है ज्योतिर्धर;
यही भाव अपनाना होगा
मन को स्वयं जगाना होगा।

हित है इसमें ही इस भव का
वरण करो इस सात्विक लव का
पूज्य-पाद का जीवन दर्शन
निखिल विश्व का पावन-चन्दन।

जिसने ग्रहण किया है इसको
क्या असाध्य है जग में उसको;
सब कुछ तुरत वही है पाता
भव का जीवन सुखी बनाता

इसी डाल पर हम सब जायें
नव प्रकाश जीवन में लायें
स्वयं सुखी रहकर हम अपने
सत्य बनायें मन के सपने।

तभी विकास हृदय का होगा
अन्त तिमिर के भय का होगा;
सात्विकता का वरण करें हम
निर्मल जीवन ग्रहण करें हम!

मंजिल तो निर्दिष्ट रही है
मुँदी-मुँदी पर दृष्टि रही है;
मुँदे नयन को खोल जगाओ
निश्चित पथ पर पाँव रुकाओ!

इसमें ही कल्याण भरा है
जीवन का उत्थान भरा है;
यहाँ न कोई डर रहता है
भार न कोई मन सहता है।

जो भी है सब खुला-खिला है
सब को परमानन्द मिला है;
जो भी इसमें आ जाता है
सुख सौभाग्य सभी पाता है।

दिखता है जो कठिन-कठिन-सा
कष्ट-साध्य औ क्रूर मलिन-सा;
उसमें अद्भुत ज्योति निहित है
प्रतिपल अक्षय मोद-भरित है!!

ज्योतिर्धर जवाहराचार्य

❑ सा. सुदर्शना श्रीजी ❑

जवाहिराचार्य का स्वर्ग दिवस है, श्रद्धा सुगन चढ़ाऊं मैं।
निष्ठा की अनुपम ज्योति से, जीवन दीप जलाऊं मैं।।

धन्य धरा वह धन्य मात है, धन्य जात और धन्य तात है।
दिया लाल जवाहर जैसा, उनकी बलि-बलि जाऊँ मैं।।

सद्भावमयी मन मुरली ले, समतामयी सुस्वर लहरी ले।
हे लोकोत्तम! तुम दुनियाँ में, इतिहास बनाने आये थे।।

युग पुरुष युगद्रष्टा तुमने, नूतन राह दिखाई थी।
कर्त्तव्यपथ से च्युत जगत् ने, नई चेतना पाई थी।।

संस्कृति के सजग प्रतिहारी, करुणा के सच्चे अवतारी।
तुम जन मन में सद्निष्ठा का, विश्वास जगाने आये थे।।

नभ को छूकर भी हिमगिरि, नहीं पा सका तव ऊँचाई।
तल में जाकर भी जलनिधि, नहीं पा सका तव गहराई।।

अनमाप गगन सा अपनापन और 'चाँद' सा विमल पावन मन।
हे संघमाली तुम पतझड़ को मधुमास बनाने आये थे।।

❑

अमर-जवाहर

नथमल लूणिया

आज नहीं तुम, यश-काया पर ही श्रद्धानत हो जाती।
जैन जगत् के अमर जवाहर, याद तुम्हारी है आती।।

प्रफुल्ल-पद्म सा वदन अरुण तव शांति-सुधा बरसाता था।
देख देख अभिलषित जगत् का मन-मिलिंद मुसकाता था।
ऊषा की बिखरी सुषमा में, बालारुण जब खिलता था।
ध्यान मग्न तव मंजु-मूर्ति लख, तन का ताप बिसरता था।

अब उस दीपित मुखमंडल की कांति हृदय अकुला जाती।
जैन जगत् के अमर जवाहर, याद तुम्हारी है आती।

जड़-चेतन की, पाप-पुण्य की, ईश्वर-ब्रह्म, चराचर की।
दर्शन-सम्मत दी व्याख्याएं, ज्ञान, भक्ति, तप, संवर की।
कल्याणी वाणी में जब तुम सृष्टि-स्वरूप बताते थे।
नत मस्तक श्रोता गद्‌गद् हो, अश्रु बिन्दु ढलकाते थे।

अब उन बीती बातों पर ही आँखें नम [illegible] हो जातीं।
जैन जगत् के अमर जवाहर, याद तुम्हारी है आती।

ग्राम, नगर और राष्ट्रधर्म का जब करते थे विश्लेषण।
जन जीवन में सिमट विहँसती, सुरुचि-पूर्ण आध्यात्म किरण।
वस्तु स्वदेशी, खादी-चरखा, रेशम-त्यागी, गोपालन।
कृषि, वाणिज्योद्योगों पर थे, आगम सम्मत संभाषण।

अल्पारंभ महारंभों की कतर-व्योंत सी हो जाती।
जैन जगत् के अमर जवाहर, याद तुम्हारी है आती।

आतम-ज्ञाता, युग-निर्माता, सेवाभावी सुखकारी।
सत्य, अहिंसा के प्रतिपालक, आगम-ज्ञाता, अविकारी।
पंडितरत्न, प्रखर वक्ता थे, त्यागी और विरागी थे।
आत्म-बली, साहसी, संयमी, वीर वचन अनुरागी थे।

पुण्य-दिवस की अर्द्धशती पर तन, मन, वाणी झुक जाती।
जैन जगत् के अमर जवाहर, याद तुम्हारी है आती। □

गवाक्ष
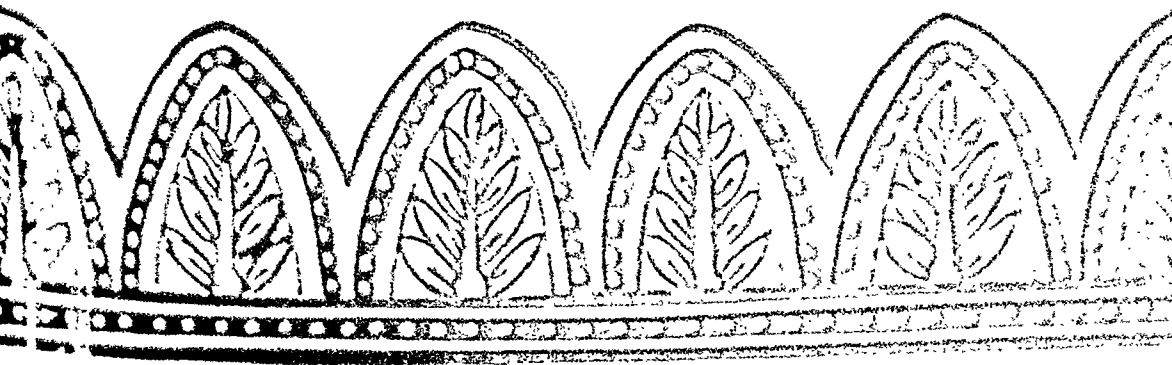
अजमेर में सम्पन्न होने वाले वृहत् साधु सम्मेलन में आपश्री पधारे थे। अपनी मौलिक तर्कणा शक्ति के द्वारा उन्होंने एकता में सैद्धान्तिक मौलिकता पर ही जोर दिया। उन्होंने औपचारिक एकता की कोताही स्वीकार नहीं की। आज एकता की गूँज अनुगूँज प्रतिस्थल में श्रुतिगोचर हो रही है। जिसकी सफलता की कामना श्रेयस्करी है।

महात्मा गाँधीजी की दृष्टि में भी आपका महत्त्वपूर्ण स्थान था। वे आपको नेहरूजी के समकक्ष मानते थे। आपने अपने पथप्रदर्शनों से समाज को स्वस्थ परम्परा प्रदान की थी। जिस पर चलकर वह अपूर्व उन्नति प्राप्त कर सकता है। ऐसे प्रेरणाप्रदीप, प्रवचन प्रवीण, आदर्शधर्मोन्नायक, राष्ट्र निर्माता ज्योतिर्धर आचार्य देवश्री जवाहरलाल म.सा. स्वर्ण जयन्ती के प्रेरक प्रसंग पर पावन शत-शत भावाञ्जलि। □

आचार्य बनकर आपने अपने संघ को अनेक विधि समृद्ध किया, सम्पन्न किया। आपके तत्त्वावधान में अनेक दीक्षाएँ सम्पन्न हुई। आपके कुशल निर्देशन में श्रमण, संतों की इस सुदीर्घ परम्परा ने स्व-पर कल्याण हेतु अपनी जीवन-शाला में प्रयोग कर जीवंत उदाहरण प्रस्तुत किए। कथनी और करनी में इकसारता का उदाहरण प्रस्तुत कर सफल प्रयोक्ता की भूमिका का उदाहरण प्रस्तुत किया है।

जैन संत सदा पद-यात्री होते हैं। यात्रा से जीवन में सातत्य जीने की शक्ति का संवर्द्धन होता है। यदि प्रवाह मंद और मंथर होने लगे तो उसमें अनेक प्रकार के प्रदूषण जन्म लेने लगते हैं। आपकी विरल विशेषता रही है कि आपने मात्र स्थूल प्रदूषण के परिहार की कोशिश नहीं की, अपितु वैचारिक प्रदूषण को शान्त और समाप्त करने का बेजोड़ प्रयास भी किया है। उनके इस प्रयास में भीतर और बाहर उत्पन्न होने वाले समग्र द्वेष और द्वन्द्व निर्मूल हो गए और उनके चरित्र चरण अनेकान्त धर्मी प्रमाणित हो उठे। आपने राजस्थान, मध्यप्रदेश तथा महाराष्ट्र आदि प्रान्तों की अनेक बार पद-यात्राएँ सम्पन्न कीं। अपने यात्रा-प्रवास में जनसाधारण को आपने संयम के संस्कार दिये थे।

आगम के वातायन से जो अध्ययन और अनुशीलन कर मंथन किया गया, उसके फलस्वरूप सैद्धान्तिक विषयों का बार-बार अवर्तन, परावर्तन तथा प्रत्यावर्तन होता रहा। आपके द्वारा सतत चिन्तन, मनन और निघासन से संत समाज में ज्ञान के क्षेत्र में पर्याप्त प्रगति हुई। लोकजीवन इस सारस्वत परम्परा से अतिरिक्त लाभान्वित हुआ। समाज के विद्वानों को भी जैन दर्शन का सूक्ष्म ज्ञान और भेद-विज्ञान का अवबोध हु आ।

आचार्यश्री के तत्त्वावधान में सूत्रकृतांग जैसे विशद और गम्भीर ग्रंथ का हिन्दी में सार्थ सम्पादन किया गया। इस सत्प्रयास से धार्मिक एवं विद्वत् समाज को तत्विषय का स्पष्ट बोध हो सका। बीकानेर जिलान्तर्गत भीनासर नामक नगर में एक जिन वाणी भण्डार की स्थापना की गयी जिसमें प्राचीन और अर्वाचीन शत-सहस्र ग्रंथों का संकलन किया गया। विद्या के क्षेत्र में इस ग्रंथागार की परम उपयोगिता है। आचार्य श्री के इस अद्वितीय कार्य को अमरता प्रदान करने के लिए भक्तों ने इस ग्रंथागार का नाम 'जवाहर पुस्तकालय' की संज्ञा प्रदान की।

अजमेर राजस्थान में एक श्रमण सम्मेलन आहूत किया गया, जिसमें स्थानकवासी संघों की एकता के लिए आचार्यश्री ने अपने श्रम और समय का यथेष्ट योगदान दिया था। इस प्रकार साहित्य, समाज और संस्कृति के क्षेत्र में आचार्य श्री का योगदान महत्त्वपूर्ण है। उनके द्वारा निर्दिष्ट मार्ग का आज भी संचालन हो रहा है।

जैन संत धर्म और संस्कृति की प्रयोगशाला होते हैं। वे प्राणी कल्याणकारी धर्मतत्त्वों का स्वयं प्रयोग कर जीवन-आदर्श की स्थापना करते हैं। आचार्यश्री जवाहरलालजी जैन धर्म और दर्शन के सफल प्रयोक्ता थे। वे कथनी और करनी के सेतु थे। उन्होंने मनुष्य मात्र को खान-पान में शुद्धि और सात्त्विकता का निर्देश दिया था। उनकी मान्यता रही है कि यदि मनुष्य का खान-पान स्वच्छ और शुद्धिपूर्वक है तो उसका प्रभाव विचारों पर पड़ा करता है। शास्त्र स्वाध्याय की अपनी उपयोगिता है उससे विचार और व्यक्ति सधा करते हैं किन्तु यदि कथनी प्रयोगवंत नहीं होगी तो जीवन में सदाचार का प्रवर्तन सम्भव नहीं।

लगभग तीस वर्षों तक निर्बाध आचार्य पद का दायित्व निर्वाह करते हुए पूज्य श्री जवाहरलालजी आषाढ़ शुक्ला अष्टमी वि.सं. २००० में दिवंगत हो गए। आपके उपरान्त जैन संघ के आचार्य पद पर क्रमशः श्री गणेशीलालजी तथा आचार्य श्री नानालालजी म.सा. प्रतिष्ठित होकर उनकी परम्परा का प्रवर्तन कर रहे हैं। ऐसे महान् आचार्य की सेवा में शाब्दिक श्रद्धाञ्जलियां अर्पित कर अपनी सादर शत-सहस्र वंदनाएं प्रस्तुत करता हूँ। □

संघ ऐक्यता के आदर्श

❑ डॉ. सुभाष कोठारी ❑

ज्योतिर्धर जैनाचार्य, युग-प्रवर्तक महान् क्रांतिकारी आचार्य थे। आपने दीक्षा अंगीकार करने के बाद वर्षों तक गहन अध्ययन, मनन, चिंतन एवं स्वाध्याय में अपना समय व्यतीत किया। जैसे आग में तप कर सोना कुन्दन हो जाता है वैसे ही ज्ञान रूपी अग्नि में तपकर आप अद्भुत ज्ञानी हो गये। आचार्य श्री श्रीलाल जी म.सा. ने सर्वगुण सम्पन्न देख कर आपको अपना उत्तराधिकारी बना दिया।

आप निर्भीक वक्ता, ओजस्वी प्रवचनकार, अद्‌भुत साहसी, अहिंसा एवं खादी प्रेमी, राष्ट्रभक्त, संघ एकता के पक्षधर, शास्त्रज्ञ, साहित्यप्रेमी, जिज्ञासु, अनुशासनप्रिय थे।

संघ एकता के पक्षधर —आचार्य जवाहर सदैव ही विविध जैन संघों के एकीकरण पर सदैव ही जोर देते रहे। उन्होंने शरीर को संघ की उपमा देते हुए कहा कि मस्तक में ज्ञान, भुजा में बल, पेट में पाचन शक्ति एवं जंघाओं में गतिशीलता हो तो कुछ भी कार्य असंभव नहीं हो सकता, उसी तरह यदि संघ में भी एकता हो, संगठन में सर्वस्व होम कर देने वाले यशस्वी लोग हों, संगठन के लिए अपने प्राणों का उत्सर्ग करना पड़े तो भी पीछे हटने की भावना न हो तो संघ में चार चांद लग सकते हैं। संघ तो इतना महान् है कि आवश्यकता पड़ने पर पद और अहंकार का मोह नहीं रखते हुए जो भी त्याग हो वह करने को तैयार रहना चाहिए।

संघ की एकता एवं अखंडता हेतु उनके दिये गये उपदेश आज भी प्रासंगिक हैं। उन्होंने कहा —'समस्त संगठन के विकास के श्रेय में हम अपना श्रेय समझने लग जाएं और जहां तक मेरा प्रश्न है मैं तो इस पवित्र एवं महान् लक्ष्य की प्राप्ति के लिए पद मर्यादा का भी त्याग करने को तैयार हूँ। संघ की सेवा में पारस्परिक भेद कदापि बाधक नहीं बनना चाहिए।'

ऐक्य भंग पाप है

भगवान महावीर ने संघ एकता में बाधा उत्पन्न करना बहुत बड़ा पाप बताया है। संघ की शांति और एकता भंग करके अशांति एवं विघटन फैलाने वाला, संघ को छिन्न-भिन्न करने वाला दसवें प्रायश्चित का अधिकारी माना जाता है।

एकता के कुछ प्रेरक प्रसंग—१. आचार्य जवाहर का विक्रम संवत् १९८० का चातुर्मास बम्बई में हुआ। इस चातुर्मास में आपने श्री श्वे. स्थानकवासी जैन सकल श्री संघ की बम्बई की ओर से अपना यह वक्तव्य प्रसारित किया। प्रत्येक समाज अपनी अपनी स्थिति को सुधारकर आगे बढ़ने का प्रयत्न कर रहा है। साधुमार्गी

समाज में सैंकड़ों की संख्या में पांच महाव्रतधारी साधुओं के होते हुए भी समाज की अवनति हो रही है। हम साधुओं पर भी इसका वड़ा उत्तरदायित्व है। अतः मैं अपना कर्तव्य समझकर श्री संघ को निवेदन करता हूं कि सव समाज और सम्प्रदाय परस्पर प्रेमभाव रखें। परस्पर निन्दात्मक लेख, हैंडविल पुस्तक वगेरह किसी प्रकार का छापा न छपावें।

हम अपनी तरफ से प्रतिज्ञा पूर्वक आज्ञा करते हैं कि हमारी आज्ञा में चलने वाले संघ में किसी भी तरह का निन्दाजनक लेख, जिससे दूसरे का दिल दुखें, नहीं छापा जाय। दूसरे पक्ष वाले यदि इस प्रकार के लेखादि छपावें तो भी इस सम्प्रदाय के संघ की तरफ से प्रत्युत्तर के रूप में कुछ भी न छपेगा। किसी दूसरे से छपवाकर कह देना कि हमने नहीं छपाया, यह मायामृषावाद है। सत्य को आदरणीय समझ कर इसे भी स्थान नहीं दिया जायेगा। यदि कोई व्यक्ति साधुओं पर झूठा कलंक लगायेगा तो योग्य मध्यस्थों द्वारा खुलासा करने में कोई आपत्ति नहीं है।'

२. इसी के दो वर्षों वाद विक्रम संवत १९८२ में एक ऐसी ही घटना हो गयी जिससे आपकी साम्प्रदायिक एकता की प्रवल इच्छा का पता चलता है। हुआ यों कि कुछ आपसी मतभेद से पूज्य हुक्मीचंद जी म. सा. के कुछ सन्त अलग हो जाने से दो आचार्य हो गये। एक आचार्य मुन्नालाल जी म. सा. एवं दूसरे आ. जवाहरलाल जी। एक ही सम्प्रदाय के दो टुकड़े कोई भी विवेकवान कैसे पसन्द कर सकता है यही स्थिति आपके साथ भी थी। जलगांव से आप चातुर्मास पूर्ण कर रतलाम पधार रहे थे कि रास्ते में मुनि देवीलाल जी म. सा. आपसे मिले उन्होंने आपके समक्ष साम्प्रदायिक प्रेम की स्थापना का प्रस्ताव रखा। आप तो शांति के प्रेमी थे ही। रतलाम में एकता सम्वन्धी वार्ता करना निर्धारित हुआ। आप अत्यन्त दूरदर्शी एवं संयम के सच्चे प्रेमी थे, आपने वार्ता प्रारम्भ होने के पूर्व पांच मुख्य श्रमणों को पंच नियुक्त कर दिया कि अव तक के समस्त दोषों की शुद्धि एवं प्रायश्चित कर लिया जावे।

इस प्रकार इन पंचों के नेतृत्व में सव प्रकार से शुद्धि कर ली गयी। इस समय तक कोई भी साधु दोषी नहीं रहा। अव श्रावकों ने एकता के लिए वातचीत प्रारंभ की परन्तु दुर्भाग्य से सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। संकल्प पूरा हो जाने से आचार्य श्री ने विहार कर दिया। तव कुछ संघ प्रमुखों ने पुनः वार्ता प्रारम्भ करने का वचन दिया। आप 'संघम् श्रेयम' को मानकर चलने वाले थे अतः कुछ दिन और रुक गये। फिर भी प्रयल सफल नहीं हुए। आपने पुनः विहार कर दिया डेढ़ मील भी नहीं चले होंगे कि श्रावकों का शिष्टमण्डल पुनः आ पहुँचा, अनुनय विनय के कारण आपको पुनः रुकना पड़ा। इस प्रकार ३-४ वार विहार रोक-रोक कर आप आशावादी वने रहे और उस धैर्यपूर्ण प्रतीक्षा का फल निकला फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा विक्रम संवत १९८२ को जव कुछ शर्तों के साथ हुक्मीचंद जी म. सा. के दोनों आचार्य एकता के सूत्र में वंध गये।

दोनों आचार्य जव रामवाग में व्याख्यान स्थल पर पधारे और जनता ने जव प्रवचन में एकता की वात सुनी तो जय-जयकारों से पाण्डाल गूंज उठा। अन्त में जवाहराचार्य ने फरमाया कि एकता का द्वार आज खुल गया है। साधुओं में प्रेम वढाने का अवसर प्राप्त हुआ है। यदि इसी प्रकार प्रेम एवं स्नेह में वृद्धि होती रही तो दोनों को एक होने में देर नहीं लगेगी हम सवको शांति एवं प्रेम की वृद्धि के लिए प्रयलशील रहना है।

३. इसी प्रकार जव आप जावरा पधारे तव ओसवाल पंचायत ने ८ ओसवालों को जाति से वहिष्कृत कर रखा था। आपने एकता पर मार्मिक उपदेश दिया और आठों ही व्यक्ति पुनः जाति में शरीक कर लिये गये।

४. नगरी में भटेवरा जाति के दो परिवारों में अनेक वर्षों से आपस में वैमनस्य फैला हुआ था। जिसका प्रभाव आसपास के गांवों पर भी पड़ रहा था। आपके एकता के उपदेश से सारा वैमनस्य समाप्त हो गया और दोनों ही परिवारों के मन साफ हो गये।

इस प्रकार के अनेक प्रसंग आपके जीवन में आये, जिसका आपने बहुत ही सुन्दर एवं यथोचित समाधान किया। अतः हमें भी हमारे पूज्य जवाहराचार्य के उपदेशों को ध्यान में रखते हुए संघ की शांति एवं एकता के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए। संघ में एकता रहने पर संघ की सभी बुराइयां स्वतः नष्ट हो जाती है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

१. आ. जवाहरलाल जी म. सा. की जीवनी

२. जवाहर विचारसार

३. जवाहर किरणावलियां-विभिन्न भाग

४. जैन जगत के ज्यार्तिधर आचार्य

५. अष्टाचार्य गौरव गंगा

६. साधुमार्गी की पावन सरिता

७. जैन धर्म के प्रभावक आचार्य

□

एक कालजयी विचारक

❑ चम्पालाल डागा ❑

युग प्रवोधक थे आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा.। उनका चिन्तन का दायरा वहुत व्यापक था। उन्होंने जैन समाज को विश्वधारा में जोड़ने के लिये एक युगांतरकारी आध्यात्मिक नेतृत्व दिया।

आचार्यश्री की महान देन

युगप्रधान आचार्यश्री ने अहिंसा को शूरवीरों का धर्म सिद्ध किया और कहा कि जैन कायर नहीं होते। वे होते हैं—आत्मवली। आचार्यश्री ने आजीवन निर्भीकता का सन्देश दिया। वे अन्धविश्वारों से सदा परे रहे। उन्होंने गृहस्थ के लिये सूत्र वांचने के निषेध को अमान्य किया। 'वांचे सुतर तो मरे पुतर' की अंध सामाजिक रूढ़ि से श्रावक समाज को मुक्त कर अनेक साधकों को उन्होंने न केवल सूत्र-वाचन की प्रेरणा दी वल्कि उन्हें व्याख्यान हेतु ऐसे स्थानों पर जाने के लिये अभिप्रेरित किया जहाँ मुनिवृन्द नहीं पहुँच पाते। इस युग-पहल ने संघ की विचार शक्ति का मार्ग प्रशस्त किया। यह महान देन थी आचार्यश्री की जैन समाज को।

समाज सुधार कौन करें ?

आचार्यश्री की दृढ़ धारणा थी कि व्यवहार से गया गुजरा समाज, धर्म की मर्यादा को कायम नहीं रख सकता। पारलौकिक व्यवहार सुधार से पहले लौकिक व्यवहार की शुद्धता पर वल देते हुए उन्होंने कहा—

'जो समाज लौकिक व्यवहार में विगड़ा हुआ होगा उसमें धर्म कि स्थिरता किस प्रकार रह सकेगी ?'

आचार्यश्री ने कहा 'समाज सुधार का प्रश्न उपेक्षणीय नहीं है।' उन्होंने एक प्रश्न उठाया 'समाज का सुधार कौन करे ?' इस सार्थक सवाल के सन्दर्भ में ही वात उठी कि समाज सुधार श्रावक करे कि साधु ? निःसन्देह इस प्रश्न ने एक सर्वव्यापी विचार-मंथन और मंत्रणा का माहौल खड़ा कर दिया।

महापुरुष प्रस्तुत करते हैं प्रश्न। गहराते हैं अपना चिन्तन। वे रखते हैं संवाद में समाज को। जड़ता को तोड़ते हैं। रूढ़ि-मुक्त और धर्म संयुक्त समाज की रचना-संकल्पना का आचार्य श्री का आधार विचार था—धर्म साधना की निर्मल पृष्ठभूमि के निर्माण का। उनका चिन्तन साफ था। उनके विचारानुसार धर्म-साधना के लिये सामाजिक व धार्मिक वातावरण की शुद्धि परमावश्यक है। उन्होंने समाज सुधार के प्रश्न का समाधान देते हुए ११ अक्टूबर १९३१ तिथि में दिल्ली में, स्थानकवासी जैन कान्फरेंस की आम सभा में अपने युगीन सम्बोधन को प्रस्तुत किया—

'हमारे समाज में मुख्य दो मार्ग है—साधुवर्ग और श्रावक वर्ग। समाज सुधार का भार साधुओं पर पड़ने का परिणाम क्या हो सकता है। यह समझने के लिये यति समाज का उदाहरण मौजूद है—रहा श्रावक वर्ग, सो इसी वर्ग को समाज सुधार की प्रवृत्ति करनी चाहिए। मगर हमारा श्रावकवर्ग दुनियादारी के पचड़ों में इतना फंसा रहता है और उसमें शिक्षा का इतना अभाव है कि वह समाज सुधार की प्रवृत्ति को यथावत संचालित नहीं कर सकता। श्रावकों में धर्म संबंधी ज्ञान भी इतना पर्याप्त नहीं है, जिससे व धर्म का लक्ष्य रखकर, धर्म मर्यादा को अक्षुण्ण बनाये रखकर तदनुकूल समाज सुधार कर सके।

इस स्थिति में किस उपाय का अवलम्बन करना चाहिये ?'

आचार्यश्री ने साधु व श्रावक वर्ग की वस्तु स्थिति को सामने रख कर जो समाधान समाज को दिया वह आज भी उपयोगी है—

'मेरी सम्मति के अनुसार इस समस्या का हल एक ऐसे तीसरे वर्ग की स्थापना करने से हो सकता है जो साधुओं व श्रावकों के मध्य का हो। यह वर्ग न तो साधुओं में परिगणित होगा न गृहस्थी श्रावकों में। इस कार्य में वे ही व्यक्तिं समाविष्ट किये जाय जो ब्रह्मचर्य का पालन करें, अकिचन हों अर्थात् अपने लिये धन-संग्रह न करें। वे लोग समाज की साक्षी से, धर्माचार्यों के समक्ष इन दोनों व्रतों को ग्रहण करें। इस प्रकार के तीसरे त्यागी श्रावक वर्ग से समाज सुधार की समस्या भी हल हो जाएगी और धर्म का भी विशेष प्रचार होगा। साथ ही निर्ग्रन्थ वर्ग भी दूषित होने से बच जायेगा।'

आचार्यश्री बहुत दूरदर्शी थे। उनके चिन्तन का मूल सूत्र था 'धर्म प्रभावना के लोक प्रसार का सूत्र सुदृढ़ हो, धर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन हो। इस बात को स्पष्ट करते हुए आपने कहा —अगर अमेरिका या किसी अन्य देश में सर्वधर्म सम्मेलन होता है तो वहाँ सभी धर्मों के अनुयायी अपने-अपने धर्म की श्रेष्ठता का प्रतिपादन करते हैं। ऐसे सम्मेलनों में मुनि सम्मिलित नहीं हो सकते। अतः धर्म प्रभावना का कार्य रूक जाता है। यह तीसरा वर्ग ऐसे अवसरों पर उपस्थित होकर जैन धर्म की वास्तविक उत्तमता का निरूपण करके धर्म की बहुत सेवा कर सकता है।'

समय साक्षी है कि आचार्यश्री के इस युगांतरकारी समाज सुधार व धर्म प्रसार के समाधान से देश-विदेश में जैन धर्म के प्रचार-प्रसार का, जनसेवा व चेतना का कार्य यह चेतनावान तृतीय वर्ग आज सजगता के साथ संघ मर्यादानुकूल कर अशांत विश्व की असहाय जनता के बीच 'धर्मपाल प्रतिबोध' का समता ज्ञान कर्मयोग प्रतिफलित करता हुआ आचार्यश्री की धर्म प्रभावना के सपने को साकार कर रहा है।

समाज हेतु तृतीय वर्ग की इस अद्वितीय उद्भावना पर विचार करते हुए आज हृदय प्रसन्नता एवं गर्व का अनुभव करता है।

संसार का कल्याण मात्र वचन से नहीं व्यवहार धर्म से होता है। आचार्यश्री जवाहरलाल जी म.सा. जैसे कालजयी विचारक ने तृतीय आध्यात्मिक शक्ति को जैन जगत से संघ बद्धकर, समतामूलक अहिंसक समाज का अपूर्व सन्देश पूरे देश और विश्व को दिया है। □

जैन संस्कृति के सजग प्रहरी

❑ राजीव प्रचंडिया, एडवोकेट ❑

इस वसुन्धरा में अध्यात्मधारा आरम्भ से ही प्रवहमान रही है। समय-समय पर आचरण-समता, तप-साधना तथा ज्ञान-आराधना के माध्यम से सन्त-महात्माओं, ऋषि-मुनियों ने इस पवित्रधारा को जन मानस तक पहुँचाया है। भारत वर्ष सन्त प्रधान देश है। यहाँ की सन्त परम्परा अर्वाचीन नहीं है। सन्त परम्परा में जैन सन्तों और उनमें भी अध्यात्म योगी श्रीमद् जवाहराचार्यजी का योगदान सर्वविदित है। उन्होंने ज्ञान-विवेक तथा ध्यान योग के माध्यम से समाज में व्याप्त अज्ञानता को दूर कर ज्ञान-प्रकाश को चारों ओर फैलाया। उन्होंने सोते को जगाया, अबोध को जीने की एक नई दिशा दी, पीड़ितों को सुखशान्ति की राह बतायी और उद्बोधन दिया संसार को कषायों से वियुक्त-निसंग होने का। भगवन्तों की वाणी का सम्यक् पारायण तथा चिन्तन-मनन करते हुए उन्होंने सतत साधना से जो कुछ अनुभूत किया उसे ही अपने जीवन का अंग बनाया। उसी सत्य को कृतियों में निबद्ध भी किया जो वर्तमान के लिए ही नहीं, अपितु आने वाली पीढ़ियों के लिए भी एक सम्पुष्ट-सञ्जीवनी का कार्य करेगा।

आचार और विचार, जीवन आयाम को निर्धारित किया करते हैं। जैन संस्कृति का आचार पक्ष अहिंसा, समता, सहिष्णुता तथा अपरिग्रह पर टिका है जबकि उसका विचार पक्ष अनेकान्त-स्याद्वाद दर्शन से अनुस्यूत है। जैन संस्कृति में प्रदीक्षित होने के कारण आचार्य श्री ने पहले अपने जीवन को अहिंसामय बनाया तदुपरान्त उन्होंने समाज को इस ओर प्रवृत्त होने के लिए उद्बोधित किया, जिसका व्यापक प्रभाव जन-साधारण पर पड़ा। यह एक प्रायोग सिद्ध बात है कि बड़े आदमी जैसा आचरण करते हैं, सामान्य लोग उसी का अनुसरण करते हैं, 'यद्यदाचरति श्रेष्ठः लोकस्तदनुवर्तते।' आचार्यश्री का बड़प्पन इससे नहीं कि वे बड़े थे या किसी उच्च जाति-वर्ग-धर्म से सम्बन्धित थे अपितु उनका बड़प्पन इस बात से चरितार्थ होता है कि उन्होंने इस सत्य-तथ्य को पहिचाना कि 'अप्पा सो परमप्पा' अर्थात् आत्मा ही परमात्मा है अर्थात् प्रत्येक मनुष्य में जो आत्मतत्त्व है उसमें परमात्मा के बीज समाये हुए है। यदि वह अंकुरित हो जाए तो अनन्त आनन्द को अनुभूत किया जा सकता है। इसी उद्देश्य से अनुप्राणित होकर वे आत्म साधना की ओर अग्रसर हुए। सतत् साधना से उन्होंने इस रहस्य को जाना कि जो मैं हूँ वही दूसरा है और जो दूसरा है वही मैं हूँ। जीवों में परस्पर जो भेद भासता है उसका आधार है अज्ञानता, मोह का आवरण। इस आवरण के हटते ही यह सूक्ति सार्थक हो जाती है 'जे एगं जाणइ, से सव्वं जाणइ।' इसी चिरन्तन सत्य को उन्होंने अपने पाद-विहार के समय प्राणी मात्र को बताया कि निद्रा में बहुत सो लिये अब यत्किंचित् जाग जाओ, अंधविश्वासों, रूढ़ियों परम्पराओं से मुख मोड़ लो, मानव तन मिला है बड़े भाग्य से इसका सही-सही उपयोग कर, एक बार स्वयं देख लो।

आचार्यश्री क्रान्ति के अग्रदूत थे। उन्होंने लोगों में श्रम तथा सद्संस्कारों को जगाया। उन्हें प्रमाद रहित जीवन जीने के लिए प्रेरित किया। उन्होंने कहा कि सुखद जीवन का पहला सूत्र है कि हम अपने अधिकारों की अपेक्षा कर्त्तव्य पर जोर दें। दूसरों में बुराइयों की अपेक्षा अच्छाइयों को ढूंढें। आलोचना तो करें किन्तु वह दूसरों की नहीं स्वयं अपनी करें। वास्तव में इन सबके प्रति वही सचेष्ट रहता है जो विनयशील हो, और यह विनयशीलता गुणों की वंदना से प्राप्त होती है। आज हमारे जीवन से विनय गायव होता जा रहा है, उसका मूल कारण है कि हम अपनी संस्कृति, अपने आदर्शों से विमुख हो गए हैं। यह विमुखता हमारे असन-वसन तथा आचरण पर निर्भर करती है। हमारे भोजन में सात्विकता की अपेक्षा राजसिक तथा तामसिक अंश अत्यधिक हैं। इसलिए हम विनाश के कगार पर खड़े हैं। विचार करें, हम जहाँ एक ओर अपनी आध्यात्मिक सम्पदा से वंचित हैं वहीं अपनी भौतिक सम्पदा का भी निरन्तर विनाश करते जा रहे हैं।

आचार्यश्री की यह सीख कि मनुष्य को स्वाध्यायी होना चाहिए, बड़ी सटीक थी। स्वाध्याय से व्यक्ति में भीतर का ज्ञानमुखर होता है। जब तक भीतर का ज्ञान सुप्त-प्रसुप्त रहता है तव तक परिवार में, समाज में, देश और राष्ट्र में अनेक विद्रूपताएँ अपना ताण्डव नृत्य करती है। जिसका परिणाम होता है कि छोटी सी छोटी इकाई भी दिग्भ्रमित हो टूटने लगती है। आचार्यश्री ने अपनी लेखनी और प्रवचनों के माध्यम से समाज में व्याप्त बुराइयों को समाप्त करने का एक अनुकरणीय प्रयास किया। वास्तव में वे सच्चे समाज सुधारक थे। अन्त्योदयी तथा पतितोद्धारक थे। सचमुच वे एक में अनेक थे, अद्भुत थे। जो कुछ वे कहते उसके पीछे उनका अनुभव बोलता था। वे उपदेश के साथ-साथ उपाय भी बताते चलते थे।

आचार्यश्री पुरुषार्थ पर सदा बल देते थे। उनकी दृष्टि में समाज में फैली अर्थ-वैषम्य-जनित समस्या का सुन्दर समाधान है कि व्यक्ति परिग्रह के व्यामोह से विमुक्त रहे अर्थात् अपरिग्रह के सिद्धान्त को जीवन में साकार करे। अपरिग्रह जैन संस्कृति का प्रतिमान है। अपरिग्रहीवृत्ति के अभाव में संग्रह करने की प्रवृत्ति आज वेगवती होती जा रही है, जिसे देखो वह ही कम समय में बिना सम्यक् पुरुषार्थ के धनपति बनने की चाह संजोये बैठा है। धनपति तो बनें पर, वह धन किस काम का जो बिना श्रम-पुरुषार्थ के अर्जित किया गया है; वह तो निश्चय ही जीवन को सुख और सन्तोष की अपेक्षा विभिन्न तनाव ही देगा। ये तनाव ही तो हैं जो व्यक्ति को यथार्थ से दूर रखते हैं। वास्तव में तनाव से सम्पृक्त जीवन में वसन्त का सर्वदा अभाव रहता है। जीवन में वसन्त हर क्षण छाया रहे इस हेतु आचार्य श्री सहज और अनासक्त जीवनचर्या को अधिक सार्थक तथा उपयोगी मानते थे। वास्तव में वे किसी एक के नहीं, सबके प्रेरणा-स्रोत थे।

जन्म और जीवन दो जागतिक शब्द हैं। जन्म लेना एक बात है और जन्म लेकर जीना यह दूसरी बात है। जन्म तो सभी लेते हैं किन्तु जीवन को सही अर्थों में जीना विरले ही जान पाते हैं। कितनी भारी विडम्बना है कि जो जीवन अनन्त आनन्द, अनन्त शक्ति का स्रोत है, वह जीवन सामान्यतः बोझ सा लगता है। यह सच है जीवन जीना एक कला है और जो इस कला से परिचित हो जाते हैं, वे महानता विराटता के अभिदर्शन कर लेते हैं। निश्चय ही वे और कोई नहीं सन्त होते हैं। ऐसे ही एक दिव्य सन्त श्रीमद् जवाहराचार्यजी हुए हैं जिन्होंने अपने तप-त्याग के बल से धर्म को, संस्कृति को जन-जन तक सुलभ कराया। सम्यक्-दर्शन, ज्ञान-चारित्र की थगा में निरन्तर अवगाहन करने वाले श्रीमद्जवाहराचार्य जी सचमुच जैन संस्कृति के एक सजग प्रहरी थे। □

राष्ट्रधर्मी आचार्य

❑ डा. शान्तिलाल बीकानेरिया ❑

विश्व के इतिहास में समय-समय पर ऐसे अनेक महापुरुष हुए हैं जिन्होंने मानव को कल्याणकारी मार्ग की ओर चलने को प्रेरित किया एवं मनुष्य को पाशविक दासता से मुक्त करा ऊर्ध्वगामी बनने का साहस दिलाया। श्रमण भगवान महावीर ने साधु, साध्वी, श्रावक, श्राविका रूप चार तीर्थ की स्थापना की जिसे 'चतुर्विध संघ' के रूप में जाना जाता है तथा आचार्य संघ के प्रमुख नायक होते हैं।

श्रीमद् जवाहराचार्य बीसवीं शताब्दी के ऐसे ही एक महान् तपोनिष्ठ, युग-प्रर्वतक, युग-दृष्टा, क्रांतिकारी विचारक एवं दृढ़धर्मी, संयमाराधक राष्ट्र संत हुए हैं जिनका व्यक्तित्व बड़ा आकर्षक एवं प्रभावशाली था। आपकी दृष्टि बड़ी पैनी, भाव उदार, सोच प्रगतिशील तथा विचार विश्वमैत्री-भाव और राष्ट्रीयता से ओतप्रोत थे।

महापुरुषों के जीवनकाल में अनेक प्रकार की बाधाएं एवं कठिनाईयां आती है किन्तु वे पर्वत की भांति अचल धैर्य के साथ जीत लेते हैं। श्री जवाहराचार्य का जीवन बचपन से लेकर वृद्धावस्था तक अनेक प्रकार के संघर्षों एवं बाधाओं के बीच से गुजरा, किन्तु जवाहर इन संघर्षों की दुर्लभ घाटियों को दृढ़तापूर्वक पार करते हुए आगे बढ़ गये। ज्यों-ज्यों संघर्ष आये त्यों-त्यों आपके जीवन में अधिकाधिक निखार आया। उन्हें इस श्रेणी तक पहुंचाने का श्रेय महाभाग श्री मोतीलाल जी महाराज साहब को है।

आपने ग्रामधर्म, समाजधर्म और राष्ट्रधर्म के महत्त्व को पहचाना एवं बताया कि व्याख्यान देने मात्र से ही समाज का श्रेय नहीं हो सकता इसके लिये रचनात्मक एवं ठोस कार्य करने की आवश्यकता है। योजनाबद्ध कार्य करने से ही समाज का उत्थान होगा। आपके राष्ट्रधर्मी, आत्मलक्षी, स्वदेशी, संस्कृति प्रेम एवं स्वातंत्र्य निष्ठा से प्रभावित होकर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, लोकमान्य तिलक, पंडित मदनमोहन मालवीय, सरदार पटेल, विनोबा भावे, जमनालाल बजाज जैसे महान् नेता सम्पर्क में आये। राणपुर (काठियावाड़) के प्रसिद्ध पत्र 'फूलछाब' के सम्पादक एवं गुजराती लेखक 'श्री मेघाणी' ने लिखा 'हिन्दुस्तान में जवाहर एक नहीं दो हैं, एक राष्ट्रनायक एवं दूसरा धर्म नायक' भारत में जवाहरलाल जी के संरक्षक मोतीलाल जी भी दो थे, एक पंडित मोतीलाल नेहरू एवं दूसरे तपस्वी मुनि श्री मोतीलाल जी महाराज।

युग-प्रवर्तक आचार्य

❑ अमृतलाल मेहता ❑

आपका व्यक्तित्व आकर्षक एवं प्रभावशाली था। लोकमान्य वालगंगाधर तिलक, महात्मा गांधी, जवाहर लाल नेहरू आदि अनेक राष्ट्रीय नेता आपके संपर्क में आए। आपने जन मानस में व्याप्त कुव्यसनों भ्रान्त धारणाओं कृषि आदि को महा आरंभ के स्थान पर अल्पारंभ निरूपित कर सम्यक् उद्‌वोधन दिया।

आप श्री ने थली प्रान्त में सुदूर क्षेत्रों में विचरण कर भ्रांत धारणाओं का निराकरण कर, जैन-दर्शन का सम्यक् विवेचन कर अनेक लोगों को उत्प्रेरित किया। 'सद्धर्म मंडनम्' आपकी एक अमर कृति है जो युगों-युगों तक आपकी कीर्ति को सुवासित करती रहेगी।

जवाहर किरणावलियों में प्रकाशित आपके संकलित प्रवचन आपकी गौरवगाथाओं में चार चांद लगाये हुए हैं।

आपने स्व-पर कल्याण हेतु विभिन्न प्रान्तों शहरों में ५१ चातुर्मास कर सुदूर क्षेत्रों में पदयात्रा कर जन-जन को आध्यात्मिकता का रसास्वादन कराते हुए राष्ट्रीयता, सामाजिकता पर प्रकाश डालते शैक्षणिक वातावरण का निर्माण किया। कानजी शिवजी ओसवाल जैन बोर्डिंग हाऊस जलगांव (महाराष्ट्र) आपही के सद् उपदेशों से उद्घाटित वर्षों से छात्रों के चरित्र निर्माण की दिशा में सेवारत है।

भीनासर (वीकानेर) राजस्थान में आप काल धर्म को प्राप्त हुए। आपकी पुण्य स्मृति में माननीय चम्पालाल जी वांठिया ने जवाहर विद्यापीठ की स्थापना अपने निजी अतिथि गृह में कर नव-निर्मित भवन में स्थानान्तरण कर अनेक छात्रों के जीवन-निर्माण में सक्रिय सहयोग दे पुण्य अर्जित किया है।

ऐसे महामहिम जैनाचार्य की मानव मेदिनी सदा ऋणी रहेगी। ❑

रूढ़िमुक्त समाज के प्रेरक

❑ ओंकारश्री ❑

धर्म क्षेत्र के लोकनायक थे जवाहराचार्यजी म.सा.। मर्यादाओं की कठोर पालना के बीच वे रहे निर्भीक—सदा बोले सटीक — लीक पीटी नहीं। साधुवर्ग व श्रावक संवर्ग में ही नहीं आम तौर पर समाज में व्याप्त रूढ़ परम्पराओं कुरीतियों व कुप्रथाओं का उन्मूलन करने में शताब्दियों की जड़ता तोड़ी युगाचार्य जवाहराचार्यजी ने।

स्वदेशी वस्त्र क्रान्ति

चिर ऋणी रहेगा भारत देश उनका कि उन्होंने जैन साधु सम्प्रदाय में, अपने समय में स्वदेशी आंदोलन की मुक्ति मुहीम को आगे बढ़ाते हुए खादी भेष स्वयं धारा और इस खद्दर परिधान परिवेश को प्रचलित किया साधु-श्रावकवर्ग में। न केवल जैन साधु ही बल्कि देश के विभिन्न साधु सम्प्रदायों में रेशमी परिधान का बोलबाला था जूने जमाने में। ग्रंथों तक को रेशमी वस्त्रों की लपेट चपेट में देख क्रान्तिचेता जवाहराचार्य की करुणा जागी कि इन रेशमी परिधानों में कारण असंख्यों कीटों की हत्या-हिंसा ओढ़े हुए है यह रूढ़ समाज। यह वस्त्र-रूढ़ि मुक्ति की क्रान्ति उस दकियानूस युग में। बहुत बड़ी बात थी।

अछूतों द्धार का उद्घोष

भारतीय समाज के पतन का प्रथम कोई कारण था और है तो छुआछूत की भावना, रूढ़ि का पापाचार। आचार्य श्री से किसी ने पूछा एक बार—

'आचार्य देव! जैन धर्म तो जातिवाद को नहीं मानता फिर आप लोग हरिजनों की बस्ती में पधार कर गोचरी क्यों नहीं लेते? बहुत तीखा। सीधा और चुटीला सवाल था यह। पर जननायक जवाहर की वाणी और व्यवहार कभी पराजित हुआ ही नहीं ऐसे संक्रमण पूर्ण अवसरों पर। उन्होंने उत्तर देकर पूरे जमाने को निरन्तर कर दिया—वे बोले —प्रश्नकर्ता से—

'तुम ठीक कहते हो। जैन धर्म जातिवाद नहीं मानता। वह गुणपूजक रहा है। अगर आप लोगों (ब्राह्मण वर्ग को)! एतराज नहीं हो तो हमें इसमें कोई आपत्ति नहीं —सिर्फ शर्त एक कि गोचरी दाता निरामिष भोजी हो।'

कोई और साधु होता तो इस चुनौती भरे प्रश्न पर चुप्पी ही साध लेता।

जवाहराचार्य जी म.सा. कोरे वाणीशूर नहीं थे वे कर्मवीर थे। उन्होंने जो कहा वह कर दिखाया। मानव मानव एक है। उनकी यही भावना आज फल रही है हरिजन वर्ग में—म.प्र. में 'धर्मपाल प्रतिबोध क्रान्ति' के रूप में आचार्य नानेश की युगांतरकारी पहल पर।

एक प्रश्न आचार्य का

भारतीय समाज में अछूत कहे जाने और अपमानित जीवन भोगने वाले समुदायों के प्रति आचार्य श्री बहुत संवेदनशील रहे अपने जीवन काल में।

रतलाम चातुर्मास का एक प्रसंग। नित्य कर्म निवृत्त हो आप एक वार चांदनी चौक से मुकाम पर पधार रहे थे कि उनकी नजर टाट पट्टी पर सोए एक बीमार कुत्ते पर पड़ी। मौहल्ले के लोग उसकी टहलटेव में लगे थे।

पूज्य श्री ने अपने व्याख्यान में कहा 'बीमार कुत्ते की सेवा में तल्लीन देखा इस नगर के लोगों को तो लगा कि यहाँ के लोगों में जीवदया के भाव दृढ़ हैं। पर यदि कोई हरिजन भाई वहिन बीमार पड़ जावे तो क्या इस नगरी के आप सज्जन उसकी भी सेवा इसी भाव से करेंगे ? आप लोगों की चुप्पी वता रही है कि—नहीं करोगे सेवा आप हरिजन की क्योंकि वह तो अछूत है। मेरा एक सवाल है—मनुष्य की पुनवानी वड़ी है या पशु की ? कुत्ता आपके आंगन तक ! हरिजन का पल्ला लगे तो आपको पाप !'

आचार्य श्री का यह सवाल आज भी समाज में खड़ा है।

आचार्य श्री ने फिर किया सवाल !

अजमेर में एक वहिन लखारे की दुकान पर चूड़ा पहिन रही थी। महाराज सा. को देख उसने घूंघट निकाला। पूज्य श्री ने अपने व्याख्यान में—पर्दाप्रथा की रूढ़ि पर प्रहारक प्रश्न प्रस्तुत कर दिया 'आज एक चूड़ा पहिनने वाली वहिन को सवसे वुरी दृष्टि वाला में ही दिखाई पड़ा ?'

एक सिलसिला सवाल का और

एक काठियावाड़ी वहिन से पूज्यश्री पूछ वैठे—'आप तो मील का आटा नहीं खाती होगी ?' वहिन ने कहा 'मने तो कोई हरकत नथी। पर ये म्हारी वहुएं करे छे। अमी तो वम्वई नी सेठानिया थई एटल पीसवानो काम पीसवानो दुख बीजाने आपो।' पूज्य श्री ने कहा 'संतान नो जन्म देना महा दुख कहावे। बीजा ने सुपर्द कई ने करो !'

समाज हठ भी एक प्रवल हठ है। वाल हठ, राजहठ और जोगी हठ की टक्कर का। इस हठ से मर्यादाशील रहकर भारत का कोई क्रान्तिचेता आध्यात्मिक आचार्य-प्रचेता ले सका 'मधुर एक टक्कर' तो जीवटवान जवाहराचार्य ही ! जैन समाज को हिलाकर रख दिया। उन्होंने कृषि कर्म को युग धर्म सम्मत करार देकर। तपस्या के साथ जुड़े आडम्वर को झटका देने वाला यही महान संत था। रूढ़ि एक दिन में नहीं पनपती। पर एक दिन आता है जब उसकी चूल हिलाने वाला कोई मर्यादा पुरुषोत्तम खड़ा हो जाता है—जवाहराचार्य सरीखा जननायक। □

क्रान्तिकारी आचार्य

❑ केशरीचन्द सेठिया ❑

भारतवर्ष ऋषि मुनियों का धर्म-प्रधान देश रहा है। अनेकानेक महापुरुष इस पावन धरा पर अवतरित हुए हैं। करुणा मूर्ति श्रमण भगवान महावीर उनमें से एक थे। उन्हीं की श्रमण परम्परा में आचार्य श्री हुक्मीचन्दजी म.सा. के सम्प्रदाय के छठे आचार्य श्री जवाहर अद्वितीय प्रतिभा के धनी थे। युग प्रधान इतिहासविद् श्रमण संघ के गौरव जैन जगत् के देदीप्यमान सूर्य श्री जवाहराचार्य ने अपने साधु जीवन में अनेक उपलब्धियां प्राप्त की थी।

दुग्ध धवल गौरववर्ण विशाल काया, भव्य एवं तेजस्वी मुखमण्डल, सौम्य स्मित हास, ब्रह्म तेज से दीप्त ललाट, साधुत्व और साधना की दिव्य-प्रभा से वलित देहयष्टि। बालकों सी सरलता पर अनुशासन में वज्र सी कठोरता। हृदय-स्पर्शी अमृतमयवाणी। संयम और शौर्य से ओत-प्रोत। वात्सल्य और प्रेम की प्रतिमूर्ति। आत्मदृष्टि और न जाने कितनी कितनी भावनाओं का अनोखा समन्वय एक ही स्थान पर हो गया था। उनका सागर सा गहन गंभीर व्यक्तित्व था। जो भी इनसे एक बार मिल लेता वही उनका श्रद्धालु भक्त बन जाता था।

अपने संरक्षक पूज्य मामाजी की अकाल मृत्यु ने आपके जीवन को झकझोर दिया। संसार के दुःख एवं उसकी नश्वरता को आपने समझा। इस अनहोनी घटना ने आपके जीवन का ध्येय ही बदल दिया। भौतिक सुखों से विरक्त होकर आध्यात्मिक कल्याण की वात सोचने लगे। फलस्वरूप आपने मुनिश्री बड़े लालजी म.सा. से जैन प्रवज्या अंगीकार की। अपने गुरु श्री मगनलालजी म.सा. के सानिध्य में जैन आगमों का गहन अध्ययन किया। साथ-साथ में उपनिषद, गीता तथा अन्य धर्मों का तुलनात्मक अध्ययन किया।

आचार्य श्रीलालजी म.सा. का स्वर्गारोहण आषाढ़ शुक्ला तीज संवत् १९७७ को हो गया। उस समय आप भीनासर में विराजते थे। अतः वहीं पर आपको आचार्य पद की चादर ओढ़ा कर इस गौरवशाली पद पर हजारों-हजारों की जनमेदनी की साक्षी में आसीन किया।

शासन की वागडोर संभालते ही आपने भारतवर्ष के अनेक प्रान्तों को फरसा। राजस्थान, गुजरात, काठियावाड़, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश आदि में आपके चातुर्मास हुए।

राजस्थान के रेतीले थली प्रान्त में उस समय एक सम्प्रदाय द्वारा भ्रांतिपूर्ण गलत मान्यताओं की प्ररूपणा जो जैन धर्म के मूलभूत अहिंसा पर ही कुठाराघात करती थी, का प्रचुर मात्रा में प्रचार किया जा रहा था। आचार्य श्री को इससे मार्मिक पीड़ा पहुँची। उनके हृदय में करुणा का स्रोत उमड़ पड़ा और आपने रजोहरण कंधे पर रखा और निकल पड़े उसका परिष्कार करने। गांव-गांव में पद यात्रा द्वारा दुरूह परिषहों को सहकर भी गलत धारणाओं का पुरजोर खंडन किया। दान-दया पर आपके विचार प्रमाणिक आधार माने जाते हैं। प्रतिपादन के लिये

'सद्धर्म-मण्डनम्', 'अनुकम्पा विचार' जैसे शास्त्र-सम्मत ग्रन्थ तैयार किये। जैन साहित्य के भण्डार में अपूर्व कृतियों के रूप में इन ग्रन्थों का अपना महत्त्व है।

उस समय पंडितों से साधु-साध्वियों को अध्ययन करवाने की परम्परा नहीं थी। आपने इस कमी को अनुभव किया। अपने साधु-साध्वियों को संस्कृत, प्राकृत आदि का अध्ययन करवाया। पंडित रत्न श्री गणेशीलालजी म.सा. घासीलालजी म.सा. आदि विद्वान साधु तैयार किये। यद्यपि प्रारम्भ में उन्हें समाज व साधु समाज का विरोध भी सहना पड़ा। उनकी मान्यता थी कि जब तक साधु समुदाय खुद तैयार नहीं होंगे अन्य साधु-साध्वियों को विद्याध्यन कराने में कैसे सहायक हो सकते हैं। और न ही वे उपदेश देने के अधिकारी हो सकते हैं।

स्त्री समाज को उपेक्षा की दृष्टि से देखा जाता था। अनेक रूढ़िया घर किये हुए थी। पति की मृत्यु के पश्चात् उसे एक कोने से एक स्थान पर महीनों बैठना पड़ता था। काले वस्त्र पहनने पड़ते थे। अनादर और हीन भावना थी। इन पर होने वाले अन्याय व अत्याचारों का घोर विरोध किया। आपने कहा—इस समय उन्हें धर्म की ओर मोड़ने की आवश्यकता है। प्रेम और साहनुभूति की जरूरत है। काले वस्त्रों के स्थान पर सफेद वस्त्रों का प्रतिपादन किया। एकान्तवास के स्थान पर धर्म स्थानों में आने की प्रेरणा दी। उनका अभिमत था कि अगर गाड़ी का एक पहिया कमजोर होगा तो गाड़ी गतिशील कैसे हो सकती है।

अल्पारम्भ और महारम्भ पर उन्होंने विस्तारपूर्वक अपनी बात रखी। समाज में अनेक गलत धारणाएं फैली हुई थी। आदि तीर्थंकर भगवान ऋषभ देव ने जन जाति को जीने की कला सिखाई। उन्हें कैसे जीना चाहिये गृहस्थ धर्म को चलाने के लिये क्या कुछ करना चाहिये उसका प्रतिबोध दिया। आपश्री ने भी समाज को सही ढंग से जीने की कला का प्रतिबोध और मार्ग-दर्शन किया। खेती को महापाप बताने की मिथ्याधारणा पर अपने स्पष्ट तर्क-संगत विचार रखे। निर्भीक रूप से अपनी मनस्थ भावनाओं को रखा। आपने कहा—अल्पारम्भ और महारम्भ के लिये अन्तर के विवेक की आवश्यकता है। विवेक द्वारा महारम्भ से बचा जा सकता है। अविवेक से अल्पारम्भ भी महारम्भ हो सकता है। अल्पारम्भ-महारम्भ की इतनी विशद सुन्दर अकाट्य व्याख्या आपके गहरे चिन्तन का फल थी।

उन्होंने देखा कि जैन धर्मावलम्बी अहिंसा पर आस्था रखने वाले लोग चर्बी लगे वस्त्रों का उपयोग करते हैं, जो श्रावक धर्म के सर्वथा विरुद्ध है। साधु-साध्वियां भी वे ही वस्त्र लेती थी जो उन्हें गृहस्थों से मिल जाते। आपने अपने प्रवचनों में इसका विरोध किया। परिणाम स्वरूप सामूहिक रूप से श्रावक श्राविकाओं ने चर्बी लगे वस्त्रों का त्याग किया। रेशमी वस्त्र तो किसी रूप में भी ग्राह्य नहीं। लोगों ने खादी को अपनाया। यही कारण है कि आज उनकी सम्प्रदाय के साध-साध्वी शुद्ध खादी के वस्त्र ही लेते हैं।

से प्रभावित थे। दैनिक व्याख्यान में धार्मिक, नैतिक, सामाजिक, राजनीतिक आदि विषयों पर अधिकार पूर्ण विश्लेषण करते थे।

आपने विपुल साहित्य का सृजन किया। ग्रामधर्म, नगरधर्म, राष्ट्रधर्म पर लिखा साहित्य आपकी अनुपम देन है। साथ ही अपने 'सद्धर्म मण्डनम्' 'अनुकम्पा विचार' जैसे महान ग्रन्थों की रचना की। आगमों पर आपकी टीका बेजोड़ है। आपके व्याख्यानों का संग्रह श्री जवाहर किरणावलियों के ५० भागों में प्रकाशित है। उनका साहित्य जैन साहित्य के भण्डार की अमूल्य निधि है।

आपका दैनिक जीवन अत्यन्त व्यस्त रहता था। प्रातः वे व्यायाम, ज्ञान-ध्यान, प्रार्थना व साधुत्व की अन्य क्रियाओं में व्यस्त रहते थे। प्रतिबोध, आगन्तुकों से भेंटवार्ता के लिये भी समय निकाल लेते थे। कथनी करनी में इतना एकाकार था कि छोटे से छोटे साधु के दिल में भी नहीं आता था कि इतनी बड़ी सम्प्रदाय के आचार्य का जीवन साधु मर्यादा से भिन्न है।

आप श्री की हमारे परिवार के प्रति अनन्य कृपा थी। पूज्य बाबूजी श्री भैरोदानजी व पूज्य पिता श्री जेठमलजी सेठिया उनके अनन्यभक्त व श्रुद्धालु श्रावक थे। सेठिया ग्रन्थालय द्वारा जैन साहित्य सम्बन्धित करीब डेढ़ सौ पुस्तकें प्रकाशित हुई, जिनके वे प्रेरणा-स्रोत थे। पूरा परिवार उनके प्रति निष्ठावान था। मेरा अहोभाग्य है कि उनके दर्शन, प्रवचन, सान्निध्य का शुभावसर मिलता रहा। इतिहास साक्षी है कि लोकाशाह के बाद संत परम्परा में क्रान्तिकारी के रूप में श्री जवाहर का नाम ही सर्वोपरि आएगा।

अंतिम समय में आप अस्वस्थ रहे। वि.सं. २००० की आसाढ़ शुक्ला अष्टमी को भीनासर में इस नश्वर शरीर को त्याग कर महाप्रयाण किया। युगों-युगों तक जनमानस उनके महान उपकार को नहीं भूल सकता। अपने जीवन काल में ही आपने अपने उत्तराधिकारी के रूप में श्री गणेशीलालजी म.सा. के सशक्त कंधों पर यह भार सौंप दिया था। जिन्होंने संगठन धर्म और समाज हित में अपनी पदवी, सम्प्रदाय तक समर्पित कर दी। आप श्रमण संघ के उपाचार्य वने पर अनुशासन प्रिय आचार्य ने जब शिथिलाचार, को वढ़ावा मिलते देखा तो आपने सांप की केंचुली की तरह इस पद का भी परित्याग कर दिया। आपने भी अपने उत्तराधिकारी के रूप में श्री नानालालजी म.सा. को अधिकृत किया। आचार्य श्री नानेश के शासन में सैंकड़ों मुमुक्षु चरित्र आत्माओं ने आपसे जैन प्रवज्या अंगीकृत की। हजारों अछूत जाति के लोगों को सुसंस्कारी बनाकर उन्हें धर्मपाल की संज्ञा दी।

आचार्य श्री जवाहर हमारे वीच में नहीं है, पर आज भी उनकी जन कल्याणकारी सेवाएं इतिहास के पृष्ठों में स्वर्णाक्षरों में अंकित है। उनके ज्ञान का प्रकाश भू-मण्डल पर प्रकाशमान है।

स्वर्ण जयन्ती के इस पावन प्रसंग पर हम उनके चरणों में कोटि-कोटि वन्दन कर श्रद्धा के पुष्प अर्पित करते हैं। ☐

समाज और श्रावक : आचार्य दृष्टि में

❑ डॉ. वहादुरसिंह कोचर❑

युग-प्रधान, क्रान्तिदर्शी, ज्योतिर्धर, प्रेरणास्रोत, वहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, सामाजिक चेतना के उन्नायक, सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलक जैनाचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज की ५० वीं स्वर्गारोहण तिथि आषाढ़ शुक्ला अष्टमी विक्रम सम्वत् २०५० का दिन हम सवके लिए उनकी निर्मल, निश्छल एवं निडर विचार-धारा में गहरे गोते लगाने और अनुयायी श्रावक के रूप में स्वयं का मूल्यांकन करने का एक सर्वोत्तम समय है।

आचार्यश्री ने दहेज-प्रथा, वाल-विवाह, वृद्ध-विवाह, अनमेल-विवाह, मृत्यु-भोज, फैशन-परस्ती, ऐय्याशी, हरामखोरी, धार्मिक ढोंग-आडम्वर, सूदखोरी, विदेशी संस्कृति की मोहांधता, छुआछूत, निर्धनता, गन्दगी, कायरता, गुलामी, अभिमान, मोह, वैर तथा नारी और विशेष रूप से विधवा नारी के प्रति दुर्भावमूलक वातावरण आदि अनेकानेक सामाजिक प्रश्न-प्रसंगों पर अपनी ओजस्वी, प्रखर एवं निडर वाणी एवं लेखनी से समय-समय पर जन-जन को जागृत करने का अथक प्रयास किया था। समय आ गया है जव हम सोचे कि हम कहाँ तक जागृत हुए हैं? हम अपना मूल्यांकन करें कि हम इन सामाजिक वुराईयों से प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष रूप से कितना मुक्त हो पाये हैं?

अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय एवं साधु समुदाय का सम्यक्-ज्ञान, सम्यक्-दर्शन एवं सम्यक्-चारित्र साधु-साध्वी, श्रावक एवं श्राविका चतुर्विध संघ के लिए सदा सर्वदा सहयोगी एवं पथ-प्रदर्शक प्रमाणित होता है, और भूले-भटके व्यक्ति एवं समुदायक को सही समय में सही स्थल पर पहुँचाने वाला होता हैं, समाज की विभिन्न धार्मिक एवं कार्मिक इकाइयों को मार्मिक भावनाओं से स्पंदित कर देने वाला तथा लोक संचेतना को संचालित कर देने वाला होता है। ऐसी ही एक दिव्यात्मा, भव्यात्मा, लोकात्मा और विश्वात्मा थे आचार्यश्री, जिन्होंने १६ वर्ष की किशोरावस्था से लेकर ६८ वर्ष की जरावस्था तक अपने जीवन के ५२ वर्ष विक्रम सम्वत् १६४८ दीक्षा वर्ष से विक्रम सम्वत् २००० स्वर्गारोहण वर्ष तक देश के कोने-कोने में शहर-शहर में गाँव-गाँव और गली-गली में घूम-घूम कर जन-जन को सामाजिक अन्धरूढ़ियों से मुक्त करने, उन्हें सही मार्ग पर चलने, [illegible] को त्यागने जीव हिंसा को छोड़ने और समाज के दीन-दुर्वलों की सेवा साधना में समस्त जीवन लगाने [illegible] एवं प्रोत्साहन अपने प्रवचनों और निवन्धों से प्रदान किया उससे मानव समाज तव तक उऋण नहीं हो [illegible] जव तक कि उनके विचारों को अपने जीवन में नहीं उतारेगा।

समाज पर हावी हैं। आप और हम सभी स्वयं को टटोलें कि हम इन सामाजिक बुराइयों को सदा सर्वदा के लिए समूल नष्ट करने के लिए समुचित, सतत और सच्चे प्रयास कितना कर पा रहे हैं।

चिन्तन, मनन और अनुकरण के लिए आचार्य श्री के कतिपय विचार प्रस्तुत हैं —

'अगर आप समाज में प्रतिष्ठा पाने के उद्देश्य से सामायिक करते हैं, कीर्ति के लिए उपवास करते हैं और सम्मान पाने के लिए भक्ति करते हैं तो समझ लीजिए कि अभी मोह की ग्रन्थि नहीं खुली है।'

(बीकानेर के व्याख्यान : २५३)

आइये हम सोचें हमारे सामायिक, उपवास और भक्ति के उद्देश्य क्या हैं?

'दान के साथ अगर अभिमान आ गया तो समझ लीजिए आपकी पवित्र वस्तु को चांडाल स्पर्श हो गया।'

(भक्ताम्बर व्याख्यान : २१४)

'राम या अर्हन्त का वेश धारण करके पापाचरण करने वालों के समान और कोई नीच नहीं हो सकता।'

(सम्यक्त्व पराक्रम भाग १ पृष्ठ ५८)

'धनवंत को आदर करे, निर्धन को करे दूर
ते साधु जाणो मती, रोटी तणा मजूर'

(जामनगर व्याख्यान १३८)

ऐय्याशी और आलसीपन के विरुद्ध आचार्यश्री की चेतावनी वाणी इस प्रकार है —

'अब ऐय्याशी के दिन नहीं रहे। मौज-मजे उड़ाने के दिन लद गये, इसलिए सादगी धारण करो। विलासिताओं को तिलांजलि दो।'

'लोगों के दिल से हराम नहीं गया है। उसके निकाले बिना व्यक्तियों का सुधार नहीं हो सकता, और व्यक्तियों के सुधार के अभाव में समाज-सुधार का अर्थ ही क्या है?'

(जीवन धर्मः कहाँ से कहाँ : २८६)

आचार्यश्री के जोधपुर में दिए धर्म-प्रवचनों की एक कृति है 'जीवन-धर्म' जिसमें 'परमात्मा प्राप्ति के सरल साधन' नामक अध्याय में सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन के लिये और समाज को रूढ़ियों से मुक्ति दिलाने के लिए आचार्यश्री ने २० सूत्र प्रस्तुत किये थे जो आज भी हम श्रावकों के सम्मुख स्व-मूल्यांकन के लिए कसौटी ... रूप में खड़े हैं। प्रत्येक सूत्र पर हमें स्वयं की स्थिति आंकनी है जैसे पहला सूत्र है जुआ-निषेध। हमें स्वयं से ...ना है क्या आज मैंने जुआ खेला है, खिलवाया है, या अनुमोदन किया है। ठीक इसी प्रकार से आचार्यश्री के ...ताये अन्य सूत्रों के सम्वन्ध में स्वयं से प्रश्न पूछकर और स्वयं के उत्तर एक कागज पर लिखकर रोजाना रात्रि सोने से पहले अपने उत्तर के आधार पर अपना मूल्यांकन करें और सुवह उठते ही इन २० सूत्र का मनन ...ते हुये संकल्प करें कि बीत गये कल की अपेक्षा आज इन सूत्रों के रात्रि समय चिन्तन में स्वयं के मूल्यांकन में ...धिक अंक अर्जन करूंगा।

आचार्यश्री के प्रतिपादित २० सूत्र

१. जुआ निषेध
२. मांसाहार निषेध
३. मद्यपान निषेध
४. वेश्यागमन निषेध
५. पर-स्त्री-गमन निषेध
६. शिकार-त्याग
७. चोरी का त्याग
८. विवाहों में अश्लील नाच-गान निषेध
९. मृत्यु पर दिखावटी रोना-धोना नहीं
१०. भय-मुक्ति
११. मृत्युभोज निषेध
१२. अन्न की रक्षा
१३. दहेज-निषेध
१४. वैवाहिक उम्र निर्धारण (बालविवाह निषेध)
१५. नर्तकियों का नाच रंग-निषेध
१६. अष्टमी चतुर्दशी उपवास विधान
१७. अस्पृश्यता उन्मूलन
१८. आलसीपन का त्याग
१९. संयमित जीवन यापन
२०. चर्बी वाले वस्त्रों के पहिनने का निषेध

इन रूढ़ि मुक्ति के बीस सूत्रों के बारे में स्वचिन्तन और मूल्यांकन से परमात्म प्राप्ति की सरल साधना साधी जा सकती है, भारतीय समाज आज भी दुःखी है। निर्धनता, अशिक्षा, अराजकता और अनैतिकता से ग्रसित है। हम सबको हम में से प्रत्येक को अपने राष्ट्र की पाई-पाई बचानी चाहिए। मद्यपान, जुए, ऐय्याशी, हरामखोरी, आडम्बर, मृत्युभोज, दहेज, विदेशी मोहान्धता, मुकदमेबाजी, फैशन-परस्ती व अन्य ज्ञात-अज्ञात रूढ़ियों और व्यसनों से बचकर इस गरीब देश की अरबों-खरबों की सम्पत्ति बचानी है। मन, वचन और कर्म से हम सबको एक और नेक होकर आचार्यश्री जैसे ज्ञानी-पुरखों की वाणी और लेखनी से व्यक्त विचारों और भावनाओं का समादर, अपने नित्य प्रति के जीवन आचरण में उतारकर उनके प्रति सच्ची श्रद्धा अर्पित करनी चाहिए □

धर्म एवं धर्मनायक : एक अनुचिन्तन

❑ राजेन्द्र सूर्या ❑

युगदृष्टा, युगपुरुष, श्रमण संस्कृति के जाज्वल्यमान नक्षत्र स्व. श्रीमद् जवाहराचार्य के उदय से समाज में नवजागरण के युग का शुभारम्भ हुआ। उन्होंने अपनी अनूठी सूझबूझ एवं बौद्धिक प्रतिभा से सूक्ष्मता में गहरे उतरकर सैद्धान्तिक क्रान्ति का बीजारोपण किया। तीर्थकरों से सुमेल बैठाने वाला उनका अद्‌भुत चिंतन बेजोड़ है। उनकी प्रखर इतिहास-दृष्टि, उनका गूढ़ साहित्य-चिन्तन, उनकी निर्मल आध्यात्मिक अनुभूतियाँ, एवं उनका तर्क-सम्मत शास्त्रीय विवेचन उनके प्रवचनों के रूप में एक अनमोल थाती की तरह हमारे पास उपलब्ध है। इन सब बातों का सम्यक् विवेचन एक छोटे से निबंध में सम्भव नहीं है, अतः यहां हम उनके 'धर्म और धर्मनायक' से सम्बन्धित विवेचन पर ही विशेष रूप से विचार करेंगे।

आचार्य श्री जवाहर ने 'धर्म एवं धर्मनायक' की बड़ी मार्मिक विवेचना की है। उन्होंने धर्म के स्वरूप, परिभाषा व्याख्या उसकी उपयोगिता, सार्थकता एवं वैज्ञानिक महत्व के अतिरिक्त उसके प्रयोगों के मुख्य-मुख्य बिन्दुओं पर विवेचन किया है। इसके साथ ही धर्मनायकों के गुणों एवं उसकी क्षमताओं पर विस्तृत प्रकाश डाला है।

आचार्य प्रवर ने 'धर्म एवं धर्मनायक' पुस्तक में गहरे उतरकर जो अनूठी व्याख्या अपनी अद्‌भुत सूझबूझ से प्रस्तुत की है उस पर खुलकर स्पष्ट रूप से चर्चा क्यों नहीं की जाती है? आखिर हमारे सारे गुण तो धर्म से ही अभिव्यक्त होते हैं।

धर्म की जिस व्यापक दृष्टिकोण के आधार पर उन्होंने परिभाषा की है उसके विस्तृत आयामों पर विवेचना प्रदान की है उसके महत्त्व को लोगों के सामने लाना चाहिए। यद्यपि सैद्धान्तिक मामलों में भिन्न-भिन्न व्यक्तियों की प्रतिक्रियाएं अलग-अलग रूप से प्रकट हो सकती है, परन्तु जिस अभिव्यक्ति से शास्त्र-सम्मत दृष्टिकोण सर्वमान्य रूप से उभर कर आए उसके लिये तो कम से कम प्रत्येक प्रबुद्ध बुद्धिजीवी वर्ग को विश्व मंगल-एवं विश्वहित की भावना से उसके महत्त्व को सर्वत्र प्रसारित करने के लिए कटिबद्ध हो जाना चाहिये। परन्तु ऐसा नहीं है वल्कि व्यर्थ के मतभेदों को उभार कर विवाद को गहराया जाता है तथा उन आध्यात्मिक, मूल्यपरक एवं मानवतावादी दृष्टिकोणों की उदार विचारधारा को अपनी क्षुद्र संकीर्णताओं के दायरे में रखकर कल्याणकारी एवं मंगलकारी परम पावन विचार विन्दुओं से दुनियां को वंचित रखा जाता है। धर्म कल्पवृक्ष है और उसके वैज्ञानिक महत्त्व को समझकर जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में समाविष्ट करना चाहिये, परन्तु धर्म की परिभाषाओं से उसकी व्याख्याओं एवं उसके आयामों से लोग कितने अनभिज्ञ एवं अपरिचित से हैं, लोगों को इसकी कितनी जानकारी है, इसका पता तव चलता है जव राष्ट्रीय स्तर के शीर्पकों का ऐसा दृष्टिकोण उभर कर सामने आता है, जिसे कहना

उन लोगों के लिए शोभा नहीं देता। यह बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण है कि हमारी संस्कृति जो विश्व की महानतम संस्कृतियों में से एक है परन्तु हम उसके महत्त्व को नहीं समझते। शायद हम उसके आदर्शों से अपरिचित-अनभिज्ञ हैं। इसीलिए इसमें ढीलापन एवं शिथिलता भी आई है। यही वजह है कि अपनी जमीन, संस्कृति एवं परम्पराओं से हम अनभिज्ञता की ओर जा रहे हैं। हम एक ऐसे नाजुक मोड़ पर खड़े हैं जहां हमारी सेहत ठीक नहीं है और नब्ज की पहचान भी नहीं है इसका मुख्य कारण है कि धरातल संतुलित एवं समतल नहीं अपितु असंतुलित एवं असमतल है, हम पटरी पर नहीं है किन्तु भटक गये हैं। और इन समस्त परिस्थितियों का जवाबदेह मानव समाज ही है।

लोगों को मालूम होना चाहिए कि जिस विशाल भवन में उनका निवास है यदि उस भवन की नींव का आधार गड़बड़ाया हुआ हो तो उसका कभी भी खिसकना तय है, और जब भी खिसका तो उस भवन में निवास करने वालों का जीवन खतरे में पड़े बिना नहीं रहेगा तो ऐसी परिस्थितियों में समय के पूर्व कोई बुद्धिमान पुरुष सावधानी एवं चेतावनी दिलाकर सुरक्षित स्थान में पहुंचने का उपाय बताए तो वह पुरुष कितना उपकारी होगा कहा नहीं जा सकता ?

ठीक इसी प्रकार आचार्य प्रवर ने सावधानी दिलाते हुए कहा था कि लोगों को धर्म का स्वरूप ठीक से समझ में आ जाए तो दुनिया के किसी भी व्यक्ति की यह हिम्मत नहीं हो सकती कि वह धर्म के नाम पर विवाद की परिस्थितियों को खड़ी करके अपनी निरंकुशता एवं स्वच्छन्दता का साम्राज्य फैलाने का साहस कर सके।

आज संविधान में से धर्म हटाने की बात कही जाती है— आखिर धर्म को राजधर्म बनाकर राज्य नहीं करना चाहते तो क्या अधर्म को कायम करके राज चलाना चाहते हैं ?

धर्म के स्वरूप को समझने में फर्क हो सकता उसके अनुपालन में अन्तर हो तो उसको अस्वीकार या नकारा कौन कर सकता है।

हमारे सारे गुणों की अभिव्यक्ति धर्म से होती है। जब हमारा संविधान बना तो 'सेकुलर' नाम का कोई शब्द नहीं था। हमारे देश में राज सेकुलर रहे सब चाहते हैं, लेकिन उसकी परिभाषा क्या हो ? उसके आयाम क्या होंगे ? यह किसी ने नहीं सोचा। उसका अनुवाद 'धर्म-निरपेक्ष' किया गया।

'धर्म-निरपेक्ष' के अर्थ को समयोचित समझ के राजनीतिज्ञ पंडित उसकी अपने अपने ढंग से व्याख्या करते हैं और इसको लेकर विवाद एवं मतभेद की दीवारें जिस तरह से लोगों के बीच में खड़ी की जा रही हैं वह बेहद दुर्भाग्यपूर्ण है। लेकिन युगदृष्टा-युगपुरुष आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. के दृष्टिकोणों को [illegible] संविधान के व्याख्याकारों के समक्ष रखा जाता तो आज जो 'धर्म-निरपेक्षता' को लेकर देश में [illegible] रही है, उसे आसानी से मिटाया जा सकता था।

लेकिन हमारे पारलौकिक धर्म को या यो कहें कि अपने उपासना धर्म को इहलौकिक धर्म के साथ जोड़ा नहीं है और न ही उसे इहलौकिक धर्म का अंग बनाया है वरन् इस पारलौकिक धर्म को इस इहलौकिक धर्म से अन्तिम क्रम में रखा है उसे अलग रखकर भी उसे भिन्न नहीं किया है बल्कि उसे संपूरक बनाया है। सांकल की कड़ी की तरह प्रत्येक धर्म को जोड़ा तो है परन्तु अंग नहीं बनाने पर जोर दिया है क्योंकि प्रत्येक धर्म दूसरे धर्म से भिन्न है। जीवन शुद्धि और सिद्धि के लिए स्थानांग सूत्र के आधार पर जिन दस धर्मों का विवेचन आचार्य प्रवर ने धर्म और धर्मनायक पुस्तक में किया है, उसमें प्रत्येक धर्म को लक्ष्य करके उसी का विधान किया जबकि दूसरे के लिए अलग धर्म की योजना पर प्रकाश डाला है। उन्होंने प्रत्येक धर्म का विवेचन किया है उसमें उसकी यथोचित रक्षा, विभिन्न आवश्यक कर्तव्यों के पालन के साथ उसके विकास के लिए कार्य योजना हेतु कार्यक्रम बनाने का विधान जरूर किया गया है परन्तु प्रत्येक धर्म का मुख्य कार्य दूसरे धर्म से अलग है। जिस प्रकार शरीर के प्रत्येक अवयव के अंगों का कार्य दूसरे अवयव के अंगों से भिन्न होकर भी उसका प्रत्येक कार्य शरीर हित में होता है, परन्तु किसी अवयव के मुख्य अंगों के कार्य को उसके दूसरे अवयवों के अंगों के साथ जोड़ा नहीं जा सकता उसे हिस्सा नहीं बनाया जा सकता तभी शरीर स्वस्थ रूप से सुचारू रीति से कार्य कर सकता है।

आचार्य श्री जवाहर ने प्रभु ऋषभदेव द्वारा स्थापित संस्कृति की सार्थकता एवं उसके वैज्ञानिक महत्त्व को उजागर करके मानव जाति को उस अवस्था से सुमेल बैठाने वाली संस्कृति विकसित करने हेतु प्रेरित किया।

ऋषभदेव परमात्मा द्वारा स्थापित दार्शनिक चिन्तन प्रणाली से ही परिवार का संगठन, समाज की व्यवस्था, राष्ट्रनीति और विश्व रचना का सही दिशा निर्धारण संभव हो सकता है।

विश्व संरक्षण उनकी दार्शनिक चिन्तन प्रणाली और पद्धति में ही अन्तर्निहित है।

धर्म का स्वरूप उसकी परिभाषा व्याख्या और उसके विभिन्न आयाम आदि उनकी स्थापित प्रणाली में ही अन्तर्निहित हैं। वहां धर्म को बड़े व्यापक अर्थ में ग्रहण किया है और वहां उसके दायरे की हद को सुनिश्चित न करके धर्म की समग्रता का बोध कराया है।

आचार्य श्री जवाहर ने उसे किस प्रकार परिभाषित किया इसे बताने के पूर्व प्रभु ऋषभदेव की स्थापित व्यवस्थाओं को समझने का प्रयास करें।

प्रभु ऋषभदेव जैन परम्परा में तीर्थंकर माने गये हैं तो वैदिक परम्परा में अवतार माने जाते हैं। उनको इस भूतल पर हुए युग-युगान्तर काल बीत गया है। इतिहास वहां पहुंच नहीं सकता।

भगवान ऋषभदेव ने इस भूतल पर अवतरित होकर मानव-जाति के लिये ऐसे-ऐसे महान उपकार के कार्य किए हैं जिसकी कल्पना नहीं की जा सकती है।

मानवीय या इष्ट वहीं माना जाता है जो आवश्यकताओं की पूर्ति करता है। जो छोटी आवश्यकताओं पूर्ति करता है वह थोड़ा इष्ट होता है और जो बड़ी आवश्यकताओं को पूर्ण करता है वह अधिक इष्ट होता है। जब कोई व्यक्ति अपने आपको किसी कार्य की सिद्धि के लिए असमर्थ समझता है तब वह दूसरों की सहायता है और उस सहायता की न्यूनता एवं अधिकता के अनुसार ही वह सहायता देने वाले का आदर करता है।

जगत् के जीवों का भगवान ने किस प्रकार उपकार किया है, यह उज्ज्वल कथा आगमों के पृष्ठों पर हुई पाई जाती है।

कारीगर के प्रत्यक्ष दिखाई न देने पर भी उसकी कलाकृति को देखकर उसके कौशल का अनुमान किया जा सकता है।

आगमों में प्रभु ऋषभदेव की महिमा का बड़े विस्तार से विवेचन किया है उसमें कितना गूढ़ रहस्य भरा है, इसका विचार तो कोई पूर्ण पुरुष ही कर सकता है, मगर हमें भी अपनी बुद्धि के अनुसार विचार करना चाहिये। पक्षी को विमान प्राप्त नहीं है तो भी वह अपने पखों की शक्ति के अनुसार ही उड़ता है।

यौगलिक सभ्यताकाल में जब मनुष्य अपनी वैयक्तिक सीमाओं में बद्ध होकर भोगभूमि में निर्द्वन्द्व विचरण कर रहा था तब उसके पुरुषार्थ को भौतिक एवं आध्यात्मिक प्रगति की दिशा में प्रेरित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य भगवान ऋषभदेव ने किया।

प्रकृति परिवर्तनशीला है, फलस्वरूप कल्पवृक्ष के समान मनुष्य की आवश्यकताओं की संपूर्ति करने वाले वृक्ष फल-फूल कम देने लगे। तत्कालीन समाज की जटिलताएं बढ़ने लगी ऐसे विकट समय में वहां संघर्ष, कलह, लड़ाई, झगड़ा एवं संग्रह बुद्धि होने से निःस्पृहता एवं उदारता की कमी हुई। श्री नाभिराजा ने जन नेतृत्व का भार अपने पुत्र प्रभु ऋषभदेव को सौंप दिया।

मानवीय चेतना को उद्भुत करने वाले प्रभु ऋषभदेव ने ग्रामधर्म, नगरधर्म, राष्ट्रधर्म की स्थापना की थी। प्रभु ने अपने सुदीर्घ जीवन के ८३ भाग जनता को धर्म का पात्र बनाने के प्राथमिक कार्य में लगाये। अ[illegible] उन्होंने अपने जीवन का एक भाग सूत्र—चरित्र धर्म के प्रचार में लगाया था।

मानव-जाति को विनाश से बचाने के लिये प्रभु ऋषभदेव ने जीवनोपयोगी साधनों के उत्पादन एवं संरक्षण का क्रियात्मक उपदेश दिया।

नए वृक्ष रोपना, वृक्ष सींचना, अन्न पकाना, व्यापार करना मिट्टी एवं अन्य धातुओं के पात्र बनाना, कपड़ा बुनना, रोगों की चिकित्सा करना एवं संतान के पालन-पोषण संबंधी अनेक पद्धतियां सबसे पहले प्रभु ऋषभदेव द्वारा ही परिचित कराई गई।

गांवों एवं नगरों का निर्माण, गर्मी-सर्दी एवं वर्षा से बचने के लिए घर निर्माण आदि कलाएं ऋषभदेव की ही देन है।

प्रभु ऋषभदेव ने मनुष्यों को निस्सहाय एवं प्रकृतिमुखापेक्षी रहने के बदले पुरुषार्थ का पाठ पढ़ाया और प्रकृति को अपने नियंत्रण में कर उससे मनचाहा काम लेना सिखाया। प्रभु ने न सिर्फ जीवन सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति का मार्ग बतलाया वरन् रचनात्मक कार्य करके सबके सामने आदर्श रखा। उन्होंने बहत्तर पुरुषों की और चौंसठ स्त्रियों की कलाओं की शिक्षा दी थी।

मानव जाति का हित जिन आवश्यकताओं की पूर्ति से होता है उसी के प्रयोजन को लक्ष्य में रखकर ही प्रत्येक धर्म के विधि-विधान, नियमोपनियम, व्यवस्थाओं आदि का विवेचन आचार्य प्रवर ने धर्म एवं धर्मनायक पुस्तक में किया है।

इसके साथ ही प्रत्येक धर्म की रक्षा और उसके विकास को लक्ष्य में रखकर ही उसके सिद्धान्तों के आधार पर मार्ग-दर्शन के लिए नीति-निर्देशक विन्दु उसमें सुनिश्चित किये गये हैं तथा प्रत्येक धर्म से उसके उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए जिन निर्धारित प्रक्रियाओं का उसकी मर्यादाओं का एवं उसके मानदंडों के कारकों का उल्लेख उसकी सुव्यवस्था उत्पन्न करने के लिए किया है।

प्रत्येक धर्म को प्रभु ने जीवनदायी व्यवस्थाओं की प्रक्रियाओं के साथ जोड़ा है और उसके स्वरूप को टिकाये रखने के लिए उस धर्म के विधि-विधानों एवं नियमोपनियम के अनुसार व्यवहार करने पर जोर दिया है ताकि कोई भी जीवनदायी व्यवस्थाओं को गड़वड़ा कर धर्म के स्वरूप को विकृत न कर सके।

आचार्य प्रवर ने 'धर्म और धर्मनायक' पुस्तक में ठाणांग सूत्र नामक तीसरे अंगसूत्र से निम्नांकित दस धर्मों का विधान किया है—

(१) ग्रामधर्म (२) नगरधर्म (३) राष्ट्रधर्म (४) व्रतधर्म (५) कुलधर्म (६) गणधर्म (७) संघधर्म (८) सूत्रधर्म (९) चारित्र धर्म (१०) अस्तिकाय धर्म

इन दस धर्मों का यथावत् पालन करने के लिए तथा अन्य प्रकार की नैतिक एवं धार्मिक व्यवस्था की रक्षा करने के लिए दस प्रकार के धर्म-नायकों की योजना भी की गई है।

धर्म-नायकों के नाम इस प्रकार है

(१) ग्राम स्थविर (२) नगर स्थविर (३) राष्ट्र स्थविर (४) प्रशास्ता स्थविर (५) कुल स्थविर (६) गण स्थविर (७) जाति स्थविर (८) संघ स्थविर (९) सूत्र स्थविर (१०) दीक्षा स्थविर।

यहां पर आचार्य प्रवर ने दस धर्मों के महत्व के बारे में उल्लेख करते हुए कहा है कि इन दस धर्मों की शृंखला को ठीक तरह से समझने वाला व्यक्ति ही दुर्व्यवस्था और सुव्यवस्था का वास्तविक अन्तर समझ सकता है, क्योंकि प्रकृति के नियमों की सुन्दर से सुन्दर व्यवस्था करने वाला धर्म ही है। जहां धर्म नहीं वहां व्यवस्था नहीं और जहां व्यवस्था नहीं वहां सुख-शांति नहीं। इसलिए ग्राम, नगर या राष्ट्रधर्म आदि धर्मों का यथावत् क्रमबद्ध ज्ञान धर्मनायक को होना चाहिये, जो मनुष्य एकांगी दृष्टि से धर्म का विचार करता है तो वह दुर्व्यवस्था और सुव्यवस्था का भेद नहीं समझ सकता। अतएव सुव्यवस्था और सुख-शांति स्थापित करने के लिए विवेक दृष्टिपात करना नितान्त आवश्यक होता है।

आचार्य प्रवर ने अपनी बात को स्पष्ट करते हुए कहा है कि प्रत्येक धर्म के विधि-विधानों को दूसरे धर्मों विधि-विधानों से जोड़ने से कार्यों में सुव्यवस्था उत्पन्न न होकर दुर्व्यवस्था हो जाती है। अतः उसके हस्तक्षेप को जाना चाहिए।

आचार्य प्रवर कहते हैं कि प्रत्येक व्यक्ति अपने अधिकार मर्यादा के अनुसार कार्य आरम्भ करता है तो उसे पार उतार सकता है। अधिकार मर्यादा का उल्लंघन करने वाला कार्य में सफलता नहीं पाता।

इस बात को उदाहरण से स्पष्ट करते हुए कहा है कि ग्राम-स्थविर ग्राम की मर्यादा में रहता हुआ ग्राम के अभ्युदय का कार्य आरम्भ करके नगर का उद्धार करने चल पड़े तो वह दोनों में से एक भी कार्य सम्पन्न न कर

करेगा अतएव यह आवश्यक है कि ग्राम-स्थविर अपनी ही मर्यादा में रहकर ग्राम-सुधार का कार्य करे और नगर स्थविर नगर की सुव्यवस्था की ही और ध्यान दें।

यहां पर जैन-दर्शन का स्पष्ट मन्तव्य है कि प्रत्येक धर्म दूसरे धर्म का संपूरक बनकर सहायक बने न कि एक दूसरे में हस्तक्षेप करके उसी इकाई को असंतुलित बनाने का कार्य करे, नहीं तो उपरोक्त धर्मों में से किसी भी धर्म को असंतुलित बनाने से उसकी पूरी श्रृंखला पर प्रतिकूल असर पड़े बिना नहीं रहेगा।

आचार्य प्रवर ने आवश्यक बातों पर चेतावनी दिलाते हुए कहा है कि प्रत्येक धर्म के विधि-विधानों के अनुसार अर्थात् जिस धर्म का प्रयोग किया गया है उसी अर्थ में शब्द को ग्रहण करके धर्म को राजधर्म बनाकर प्रचार-प्रसार करने में कोई कठिनाई नहीं आती है, तथा इस प्रकार जीवन की बुनियादी संरचना का आधार कायम रखते हुए मूलभूत संस्कृति को सुरक्षित किया जा सकता है तथा संविधान में वर्णित 'सेकुलर' शब्द को राजनेता जिस 'धर्म निरपेक्षता' के अर्थ में अनुवाद करते हैं उस आपत्ति को मिटाकर विभिन्न उपासना पद्धति वाले धर्म के अनुचित हस्तक्षेप को राज-प्रणाली से पृथक् किया जा सकता है।

आचार्य प्रवर द्वारा प्रतिपादित प्रभु ऋषभदेव की उपरोक्त स्थापित व्यवस्था को कौन सा धर्म उल्लंघन नहीं करता कि दुनिया की कौन सी शासन व्यवस्था समर्थन नहीं करती, किस संविधान में इस व्यवस्था का वर्णन नहीं है ? कौन सा धर्मनेता या राजनेता उपरोक्त व्यवस्था को नकारता है ?

परन्तु लोगों की धर्म के स्वरूप पर इतनी अनभिज्ञता है कि उन्होंने धर्म को मात्र उपासना पद्धति के अर्थ में ग्रहण किया है और उसे इहलौकिक धर्म से भिन्न भी नहीं समझा है। आवश्यकता है आत्मधर्म से राष्ट्रधर्म को जोड़ने की। □

नारी जागरण के उद्घोषक

❑ मिट्ठालाल मुरड़िया 'साहित्यरत्न' ❑

आचार्य जवाहर गांधी युग और स्वातन्त्र्य संग्राम के क्रांतिकारी संताचार्य थे। वे बड़े दूरदर्शी, प्रगल्भ बुद्धि वाले चतुर, जागरूक, ओजस्वी वक्ता, प्रवुद्ध चिन्तक, महान विचारक और प्रभावशाली आचार्य थे। संत मर्यादाओं में रहते हुए भी उनमें देशप्रेम और देशभक्ति छलकती थी। उनकी रग-रग में और रक्त के कण-कण में राष्ट्रीयता भरी हुई थी। वे जैनत्व के उपासक और भारतीय धर्म-दर्शनों के मर्मज्ञ विद्वान थे। चतुर्विध संघ के माने हुए आचार्य, गणमान्य युगदृष्टा और युगसृष्टा थे।

आचार्य जवाहर सचमुच जवाहर के रूप में चमकते हुए हीरे थे। जैन गगन और धर्माकाश के उज्ज्वल नक्षत्र थे। उनकी वाणी केवल मरुधरा की वाणी न रहकर राष्ट्र की शाश्वत वाणी बन गई।

उनके संतत्व, आचार्यत्व और यशस्वी व्यक्तित्व पर स्वातन्त्र्य संग्राम का और देश काल की परिवर्तित परिस्थितियों का समुचित प्रभाव पड़ा था। वे युग को बनाने वाले प्रतापी पुरुष थे। वे लोक जीवन को जागृत करने वाले, जनजीवन को आन्दोलित करने वाले कीर्तिपुरुष थे। उनका साहित्य देशप्रेम और देशभक्ति से भरा हुआ है। धन्य है आचार्य जवाहर तुम्हें! धन्य है यह धरा! भारत की पावन धरा आज भी तुम्हारा नाम स्मरण कर स्वयं को कृतकृत्य अनुभव कर रही है।

नारी-जागरण और नारी उत्थान में आचार्य जवाहर की महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। आज से ५० वर्ष पूर्व नारी कई बन्धनों से जकड़ी हुई थी। उसका घर से बाहर निकलना बड़ा कठिन था। वह अपमान, अन्याय, अत्याचार और संकीर्ण भेदभावों से संत्रस्त थी। ऐसे समय में आचार्यश्री ने नारी को शिक्षा और साहित्य के माध्यम से जगाया। उसमें उत्साह और साहस भरा और उसका आत्मबल बढ़ाया।

आचार्यश्री का कहना था कि नारी वन्दनीय है, महापुरुषों की जननी है, माता है, बहन है, बेटी है, बहू है। नारी का दिल दया और करुणा से भरा हुआ होता है। उसमें आत्मीयता, सहृदयता, क्षमा, धैर्य और विवेक है। नारी प्रेम और एकता की प्रतीक है। कला, शील और सौंदर्य की देवी है।

आचार्य भी मानते थे कि नारी सहना जानती है, कहना नहीं। पुरुष के अत्याचार सहकर भी कभी का अपमान नहीं करती। यह इस देश की संस्कृति है। यह इस देश की मिट्टी का प्रभाव है। उसकी महक धर्म का प्रभाव है। क्या ऐसी नारियाँ किसी अन्य देश में हुई हैं? विदेशों में सामान्य बात पर तलाक। नारी पुरुष का अपमान नहीं करती। वह तो पुरुष को पूजती है। सभी कष्टों और दुःखों को भूलकर पुरुष सम्मान करती है। क्योंकि पुरुष उसका स्वामी है। दुःख-सुख का साथी है, धर्म-कर्म का चितेरा है। नारी स्नेह है, उदासी में प्रसन्नता के पुष्प खिलाती है, महक बिखेरती है। नारी कष्ट सहिष्णु है।

आचार्यश्री कहा करते थे कि नारी ने मानव जीवन का निर्माण किया है, उसे पाल-पोस कर बड़ा किया है, उसका चरित्र बनाया है, बढ़ाया है और उसे फलने-फूलने का अवसर दिया है। गांधी, जवाहर, विवेकानन्द को जन्म देने वाली नारियां ही थीं। इसीलिए आचार्यश्री ने कई सतियों के जीवन का बड़ा सुन्दर और हृदयस्पर्शी चित्र खींचा है।

अपने पुत्र को स्तनपान कराने वाली नारी समय पड़ने पर अपने पति और पुत्र को रणांगण में भेजकर विजयश्री का अभिनन्दन करने के लिए सदा तैयार रहती थी। रानी दुर्गावती, हाड़ी रानी, लक्ष्मीबाई, [illegible], [illegible] ने अपने हाथ में तलवार उठाकर अंग्रेजों के छक्के छुड़ाये थे। आचार्यश्री नारी के सभी रूपों का सम्मान करते थे।

आचार्यश्री की मान्यता थी कि नारी लक्ष्मी है, सरस्वती है, दुर्गा है। कभी वह खड्ग उठाकर वीरता का प्रदर्शन करती है, कभी थके-हारे पति को बड़े प्रेम के साथ छाती से लगाकर उसे धैर्य देती है।

कई बार आचार्यश्री भी अपने व्याख्यानों में नारी के गुणों की सराहना करते हुए कहते थे—भारतीय नारी का जीवन तप, त्याग, बलिदान और संकटों से भरा हुआ है। दमयन्ती को, सीता को, अंजना को, कुन्ती को अपने जीवन में कठोर परीक्षा देनी पड़ी फिर भी वे नहीं घबराई। नारी का जीवन कर्त्तव्य, सेवा, धर्म, [illegible] और समर्पण का पर्याय रहा है। नारी श्रद्धा और भक्ति की प्रतीक है। तभी तो कामायनी में प्रसादजी कहते हैं :

नारी ! तुम केवल श्रद्धा हो

पीयूष स्रोत सी बहा करो, जीवन के सुन्दर समतल में।

भारतीय नारी पति के बिना अपने अस्तित्व की कोई कल्पना भी नहीं करती। पति के खान-पान, रहन-सहन और स्वास्थ्य के लिए वह सदैव चिन्तित देखी गई है। पति की कुशलता के लिए, पति के उत्तम स्वास्थ्य के लिए, पति की दीर्घायु के लिए वह व्रत, उपवास करती हुई परमेश्वर से मंगलकामना करती है। पति ही भारतीय नारी का सर्वस्व है। पति के बिना उसका कोई अस्तित्व नहीं। वह हर समय अपना सारा [illegible] पति को देती रही है।

सीता, गांधारी, राजमती, मदनरेखा जैसी नारियां भारत में ही हो सकती हैं ! गांधारी ने धृतराष्ट्र जैसे अंधे पति को वरण कर देश का भाल ऊंचा उठाया था। गांधारी को इस उदार त्याग की शिक्षा कहां मिली थी ? उसे आत्मबलिदान का पाठ किसने पढ़ाया था ? पति के जंगल में छोड़कर चले जाने के बाद भी [illegible] में नहीं निकालने वाली दमयन्ती को कौन नहीं जानता ? हाड़ी रानी और पन्ना धाय का अद्भुत त्याग [illegible] है। जीजाबाई साहस और वीरता भरी कहानियां शिवाजी को क्यों सुनाती थी ?

जवाहराचार्य की प्रासंगिकता

❑ प्रो. सतीश मेहता ❑

महापुरुष अनागतदर्शी होते हैं। वे अपने समय से आगे चलते हैं। उनकी कही सदा सही सिद्ध होती है। आचार्य प्रवर जवाहरलाल जी म. सा. ऐसे ही युग-मनीषी थे।

देह तो सदा किसी की कायम रहती नहीं पर आत्मा रूप महान दीर्घदर्शी सदैव अमर रहते हैं। पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. ने अपने जमाने में जो कुछ कहा, साधुओं व श्रावकों के हित के लिए जो जो चेतावनियां दीं—शताब्दी से ऊपर के काल परिवेश में उनका युगबोध आज भी प्रासंगिक और प्रेरक प्रतीत हो रहा है।

समाज सुधार की गति का संचरण कभी मंद कभी तीव्र चलता रहता है। जिस समय के दौर में आज हम हैं, यह समय मामूली नहीं है। चारों और अशांति है। भय ही भय है। विषमता का बोलबाला है। नित्य नई पनपती रीतियां तथा प्राचीन कुरीतियां समाज को भीतर से खोखला कर रही हैं। दिखावा, ढोंग और शान-शौकत की चपेट से कोई वर्ग, कोई क्षेत्र अछूता नहीं है।

युगाचार्य जवाहरलाल जी म. सा. ने उन स्थितियों को बरसों पूर्व भांप लिया था। उन्होंने विकट से विकट समस्या का समाधान हमें दिया है। समाज के दीनजनों के प्रति उन का हृदय करुणामय स्वरों में बोलता है—उन्हें मार्गदर्शन, दिलासा और दिलेरी दिलाता हुआ —

'हे गरीब ! तूं क्यों चिन्ता करता है ? जिसके शरीर में अधिक कीचड़ लगा होगा। वह उसे छुडाने का अधिक प्रयत्न करेगा। तूं भाग्यशाली है कि तेरे पैर में कीचड़ अधिक नहीं लगा है। तूं दूसरों से ईर्ष्या क्यों करता है ? उन्हें तुझ से ईर्ष्या करनी चाहिये। पर देख सावधान रहना, अपने पैरों में कीचड़ लगने की भावना भी तेरे दिल में नहीं होनी चाहिए। जिस दिन, जिस क्षण यह दुर्भावना पैदा होगी उसी दिन और उसी क्षण से तेरा सौभाग्य पलट जाएगा। तेरे शरीर पर थोड़ा सा भी मेल है तो उसे छुड़ाता चल।'

कितनी बड़ी बात कह दी आचार्य प्रवर ने !

यह कीचड़—परिग्रह का, पाप बोध का, शोषण का, दिखावे और तृष्णा का, कदाचार का। गरीब उससे बचे। गरीबी कल भी थी, आज भी है। गरीब के नाम पर दया-मया का, उद्धार का मिथ्याचार कल भी था और आज तो गरीबी के उन्मूलन को लेकर राज और समाज के लोग नाना प्रकार के प्रपंच अपने-अपने मंचों पर धुआंधार प्रसारित कर रहे हैं।

आचार्यश्री ने ऐसे मिथ्याचारों का जिस दृढ़ता से प्रतिवाद किया है उन स्वरों का घोष आज बहुत ..री है।

'मैं किसी पर सख्ती नहीं करता। मेरा कर्तव्य आपके कल्याण की बात बता देना
... लो वही कर सकते हो पर मैं आपको चेतावनी देना चाहता हूं कि अब पहले जैसा ज...
...कर आंधी आ रही है। यह आंधी उठकर सभी ढोंगों को अपने साथ उड़ा ले जायेगी।'

[ज...

● ●

'लोग अपनी अपनी जातियों में सुधार के लिए कानून बनाते हैं। जातीय-सभाओं मे...
...। लेकिन जब तक हृदय में हराम आराम से बैठा है तब तक तुमसे क्या होना जाना है...
...सुधार-सुधार' चिल्ला रहे हैं। सुधार कहीं नजर नहीं आता। इसका कारण ? लोगों के दिलों से ...

[कहां से...

उक्त दोनों विचारों में युग क्रांति की प्रचण्ड ध्वनि है। आज पहले से ज्यादा ढोंग है ...
...लों में 'हरामी' पहले से अधिक मजबूती से आसन जमाए बैठा है।

पूज्य आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. ने पराधीनता को पाप माना और र...
...न्त्रता के स्वरों को दृढ़ता पूर्वक गुंजाया। आज स्वतन्त्रता काल में हम मानसिक, सांस्कृ...
...आर्थिक पराधीनता की मानसिकता का कष्ट पा रहे हैं। त्राण का एक ही मार्ग है पराधी...
...स्वीकार करो। आचार्य पद की मर्यादा अटकती नहीं पराधीनता के विरोध में। जवाहरल...
...मारे हृदय को झकझोर रही है।

'कर्तव्यपालन में डर कैसा ? साधु को तो सभी उपसर्ग परिषह सहने चाहिए, ...
...नहीं होना चाहिए। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है। यदि क...
...जैन समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज के लिए किसी प्रकार...
...। क्यों अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने आ जाता है।'

युग-पुरुष

❑ हजारीमल बांठिया ❑

युग-प्रवर्तक, ज्योतिर्धर आचार्य श्री जवाहरलालजी अपने समय के युगद्रष्टा, गांधीवादी, क्रान्तिकारी जैन आचार्य हुए हैं। समस्त भारत में गांधी-लहर चल रही थी स्वदेशी अपनाओ का नारा बुलन्दी पर था। गांधीजी ने सत्य और अहिंसा का सन्देश श्रीमद् राजचन्द्र से हृदयंगम किया था वे इसी को आधार मानकर भारत को आजादी दिलाना चाहते थे और इसी पथ पर चल कर देश ने आजादी पाई। आचार्य श्री जवाहरलालजी भी सत्य और अहिंसा के मार्ग से समाज में नई चेतना दे रहे थे। वे भी गांधीजी से प्रभावित हुए और वे पहले जैनाचार्य थे जिन्होंने स्वदेशी वस्तुएं अपनाने की समाज को प्रेरणा दी और स्वयं ने खद्दर का वस्त्र अपनाया।

मुझे आज से पचास वर्ष की दुःखद घटना अच्छी तरह याद है जब किसी ने सुना पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज साहब का वि.सं. २००० आसाढ़ शुक्ला अष्टमी को देवलोक हो गया, हजारों नर-नारियों के पैर भीनासर की ओर चल पड़े और मैं भी गया। पूज्य आचार्य महाराज को वैकुंठी बनाकर बिठाया गया था। दर्शनार्थियों का तांता बंध गया। मैंने भी अपनी मूक श्रद्धाञ्जलि पूज्यश्री के चरणों में दी। वैकुंठी में बैठे आचार्यश्री का केमरे से फोटू खिंचवाया जाय कि नहीं, यह चर्चा जोरों से वाद-विवाद का विषय बनती जा रही थी। फिर भी किसी ने फोटू खींच ही लिया और उसने फोटू से बड़े चित्र बनाये और घर-घर में बेचकर लाभ उठाया और उस वक्त के फोटू आज भी लोगों के घरों में दर्शनीय है। धूमधाम से वैकुंठी उठी —'जय जवाहरलालजी महाराज साहब' के जय-घोष से आसमान गूंज उठा। जैन समाज के सभी वर्ग के प्रबुद्ध नागरिक और प्रमुख पुरुषों ने पूज्यश्री को अश्रु मिश्रित नेत्रों से श्रद्धाञ्जलि अर्पित की। आचार्यश्री स्वर्गारोहण के कार्यक्रम की सारी वागडोर स्व. सेठ चम्पालालजी बांठिया के हाथों में थी। आचार्य श्री देवलोक से भीनासर 'तीर्थधाम' वन गया। आज भी जवाहर किरणें वहाँ से अपनी आभा सर्वत्र बिखेर रही हैं।

श्रीमद् जवाहराचार्यजी अपने समकालीन जैन आचार्यों में एक प्रभावक आचार्य थे। मंदिर-मार्गी आचार्यों में प्रभावक आचार्य श्री विजय वल्लभ सूरिजी महाराज साहब का सर्वोच्च स्थान था तो साधु-मार्गी समुदाय में श्री जवाहरलालजी महाराज साहब का। वे आदर्श साधु-परिचर्या के पक्षधर थे। शिथिलता उन्हें स्वीकार थी। स्वयं आडम्बर से कोसों दूर थे। जैन संस्कृति के सजग प्रहरी और जैन सिद्धान्तों के व्यावहारिक [illegible] थे। इसलिये उस वक्त यह उक्ति प्रसिद्ध हो गई थी—'ढूंढ़िया धर्म पक्को, पैसो लागे ना टक्को'। कठोर जीवन के पक्षपाती थे, समाज को भी संयमित जीवनयापन करने का उनका दिशा-निर्देश था। इसीलिये [illegible] समुदाय में आचार्यश्री के समुदाय का अपना अलग ही विशिष्ट स्थान है। वे सचमुच जैन जगत के [illegible] GEM थे। आचार्य श्री ने अपनी पैनी दृष्टि से अपना उत्तराधिकारी भी प्रज्ञा-पुरुष, समता रस भंडार [illegible] श्री [illegible]लालजी महाराज को अपने जीवनकाल में ही आसीन कर दिया था। ❑

जैन धर्म के प्रभावक आचार्य

❑ प्रो. सुमेर चन्द जैन❑

जैन धर्म के प्रभावक आचार्यों में एक नाम, जिसे बड़े आदर से लिया जाता है, वह है क्रान्तिकारी श्री जवाहरलालजी म.सा. का नाम। स्वतन्त्र व्यक्तित्व के धनी, मौलिक विचारधारा के प्रवाहक, चोट विवेचक और राष्ट्रीय भावना के प्रेरक के रूप में आचार्यवर युगों-युगों तक स्मरणीय रहेंगे। विशाल तल-स्पर्शी अध्ययन, दृढ़ निश्चय और जन उत्थान के प्रति तीव्र भावना किसी महापुरुष के आवश्यक गुण । आचार्यवर सच्चे अर्थ में धर्माचार्य, तपस्वी और उपदेशक थे।

वक्ता

आचार्यवर एक प्रखर वक्ता थे। श्रोताओं पर उनके प्रवचन की गहरी छाप पड़ती थी। लेकिन वर के प्रवचनों का उद्देश्य न तो अपना वक्तृत्व-कौशल प्रगट करना था और न ही विद्वत्ता का प्रदर्शन करना द्यपि उनके प्रवचनों से उपर्युक्त दोनों विशेषताएँ स्वतः ही प्रकट हो जाती थी, वे तो चाहते थे कि श्रोताओं वन धार्मिक एवं नैतिक दृष्टि से ऊँचा हो। उनकी बात दिल में गहरी पैठ जाए इसके लिए गूढ़ विषय को बनाने के लिए वे कथा का आश्रय लेते थे। वे प्रायः पुराणों और इतिहास में वर्णित कथाओं का ही प्रवचन थे पर अनेकों बार सुनी हुई कथा भी उनके श्रीमुख से एकदम मौलिक लगती थी, ऐसे थे वे प्रभावोत्पादक

निर्माण कर्ता

स्वयं के जीवन को सफल बनाना और दूसरों का जीवन निर्माण करना, इन दोनों में बहुत अन्तर है। में आत्म-साधना और आत्मकल्याण करने वाले और उसी में लीन रहने वाले निवर्तक साधु पुरुष बहुत मिल । लेकिन निवृत्ति धर्म की पालना करते हुए भी मानव समाज का जीवन निर्माण करना अर्थात् मनुष्य को सही में मनुष्य बनाना, उसे ज्ञानी और चरित्रवान बनाना, उसे सद्धर्म का मर्म समझाकर धर्मनिष्ठ-नीतिनिष्ठ बनाना उसी के लिए सम्पूर्ण जीवन को खपा देने वाले बिरले ही होते हैं और ऐसे बिरले महापुरुष थे आचार्य श्री रलालजी म.सा.।

सुधारक

एक समाज सुधारक के रूप में आचार्यश्री सदैव याद किए जाते रहेंगे। गुजरात, काठियावाड़, मारवाड़, मालवा, थली, दक्षिण, खानदेश, बम्बई, दिल्ली आदि क्षेत्रों में पैदल भ्रमण करके जैनों में से अज्ञानजन्य

रुढ़ियां दूर कराई। रूढ़िच्छेद करने से समाज उद्धार की प्रवृति को बल मिला। विधवाओं की दशा देखकर आपकी आत्मा पुकार उठी—'विधवा वहनें आपके घर की शील देवियां हैं। इनका आदर करो, ये पावन हैं। मंगल रूप हैं इनके शकुन अच्छे हैं। शील की मूर्ति क्या कभी अमंगलमयी हो सकती है ?'

नैतिकता के अग्रदूत

आचार्यवर ने नैतिकता पर विशेष जोर दिया। वे कहते थे कि जीवन की विशुद्धि हुए बिना धार्मिक जीवन का गठन नहीं हो सकता। परन्तु लोग नीति की नहीं, धर्म की ही बात सुनना चाहते हैं। आचार्यवर उन्हें साफ-साफ कहते थे—'लाचारी है मित्रां! नीति की बात तुम्हें सुननी होगी। इसके बिना धर्म की साधना नहीं हो सकती।' नैतिकता पर वे उतना ही जोर देते थे जितना धर्म पर।

सर्वधर्म सद्भाव प्रणेता

एक सम्प्रदाय के गणीधर नायक होने पर भी उनका हृदय विशाल था। वे मानते थे कि मतमतान्तर तो केवल तरंगें हैं। उसका विकार है। बुदबुदे हैं। आध्यात्मिक रहस्य एक ही है। विभिन्न परिस्थितियों के कारण ऊपरी विरोध खड़े होते हैं और परस्पर टकराकर एकता में लीन हो जाते हैं। आप मानवता के परमपुजारी थे। मानवता आपकी दृष्टि में सबसे बड़ा धर्म था। आपके व्याख्यानों में जैनदर्शन के साथ-साथ अन्य दर्शनों की तुलनात्मक प्रक्रिया और साथ ही सर्वधर्म समन्वय की पद्धति दृष्टिगोचर होती है।

आचार्यवर ने विशाल व्यक्तित्व एवं कृतित्व को शब्दों में बांधना दुष्कर कार्य है। उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि। □

विवाह और दाम्पत्य : आचार्यश्री की नजर में

❑ डॉ. अजय जोशी ❑

विवाह एक सामाजिक संस्था है। यह मानव जीवन का आवश्यक अंग भी है। विवाह के द्वारा ही पुरुष एवं नारी एक इकाई के रूप में जीवन-यापन करते हैं तथा परिवार व समाज के निर्माण में सहायक होते हैं। प्रारम्भिक काल में विवाह संस्था एक पवित्र कार्य था। इसमें कन्या की भी राय का पूरा सम्मान किया जाता था। जैनाचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज इस बात का समर्थन करते हुए कहते हैं कि 'प्राचीन काल में विवाह के सम्वन्ध में कन्या की भी सलाह ली जाती थी और उसे वर खोजने की स्वतन्त्रता थी। माता-पिता इसी उद्देश्य की पूर्ति हेतु स्वयंवर रचा करते थे।'

श्री जवाहरलालजी महाराज विवाह के लिए स्त्री-पुरुष के स्वभाव में समता पर भी जोर देते हैं; उनके अनुसार—'स्त्री व पुरुष के स्वभाव में जहाँ समता नहीं होती वहाँ शान्तिपूर्वक व्यवहार नहीं चल सकता। विवाह का उत्तरदायित्व अगर माता-पिता समझते हों तो प्रतिकूल स्वभाव वाले पुत्र या पुत्री का विवाह उन्हें नहीं करना चाहिये।' वर्तमान संदर्भों में आचार्यश्री का यह कथन काफी प्रासंगिक है। व्यवहार में हम देखते हैं कि जहाँ कहीं भी पति-पत्नी में गृह-कलह की स्थिति है वह पारस्परिक स्वभाव नहीं मिल पाने का ही परिणाम है। यह स्थिति न केवल पति-पत्नी के लिए घातक है वरन् उनके पूरे परिवार व समाज के लिए भी उतनी ही घातक है।

पाणिग्रहण का उद्देश्य खान-पान तथा भोग-विलास नहीं है। यह एक पवित्र धार्मिक कार्य है। इस संदर्भ में आचार्यश्री का कहना है कि 'आपने पत्नी का पाणिग्रहण धर्मपालन के लिए किया है। इसी प्रकार स्त्री ने भी आपका। जो नर या नारी इस उद्देश्य को भूल कर खान-पान और भोग-विलास में ही अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझते हैं वे धर्म के पति-पत्नी नहीं वरन् पाप के पति-पत्नी हैं।' यदि हम चाहते हैं कि हम आदर्श दाम्पत्य जीवन जीकर वास्तविक धर्म पति-पत्नी बनें तो श्री जवाहराचार्य की इस शिक्षा का अनुकरण ही हमें सही मार्ग दिखा सकता है।

आचार्यवर ने दाम्पत्य जीवन में पारस्परिक कर्त्तव्यों के निर्वाह पर बहुत बल दिया है। उनका कहना है कि—'पति-पत्नी की विडम्बना देख कर किसका हृदय आहत नहीं होगा? जिन्होंने पति और पत्नी वनने का उत्तरदायित्व स्वेच्छा से अपने सिर लिया है वह भी पति-पत्नी के कर्त्तव्य को नहीं समझें, यह कितनी खेद की वात है?' उन्होंने पति-पत्नी के कर्त्तव्यों का अधिक खुलासा करते हुए कहा, कि —'दम्पत्ति का सम्वन्ध एक-दूसरे को सहायता देकर आत्म कल्याण की साधना के समर्थ बनाने के लिए है। जहाँ इस उद्देश्य की पूर्ति होती है वहीं सात्विक दाम्पत्य सम्बन्ध समझा जा सकता है।'

श्री जवाहरलालजी महाराज साहब के दाम्पत्य जीवन एवं विवाह सम्बन्धी विचार वर्तमान संदर्भों में बहुत ही उपयोगी व प्रासंगिक हैं। यदि इन विचारों के अनुरूप पति-पत्नी अपना दाम्पत्य जीवन ढाल लें तो वे सही मायने में सुखी दम्पत्ति का दर्जा पा सकते हैं। वर्तमान में जब दाम्पत्य जीवन कलह, तनाव तथा टूटन के दौर में है वहाँ महाराज साहब के विचार दाम्पत्य जीवन को नई राह दिखाने वाले हैं। अपना दाम्पत्य जीवन सुखमय चाहने वाले प्रत्येक पति-पत्नी को अपना जीवन महाराज साहब के दिशाओं के अनुरूप ढालना चाहिये तभी वे एक सुखी परिवार तथा समृद्ध समाज की रचना कर सकते हैं। □

क्रान्तिदर्शी आचार्य

❑ लच्छीराम पुगलिया ❑

युगपुरुष वह होता है, जो अपने युग को नया संदेश सुनाता है। उसके विचार में युग का विचार मुखर होता है। उसकी वाणी में युग बोलता है, उसकी क्रिया-शक्ति से युग को नयी चेतना, नयी स्फूर्ति और नई प्रेरणा मिलती है। वह अपने युग की जनता को सही दिशा की ओर प्रयाण करने की प्रेरणा ही नहीं देता, भूले-भटके लोगों को सही मार्ग पर भी लाकर छोड़ता है। जिस गुरु ने हम सबको विमल विवेक और विचार दिया, जिसने पवित्र आचार और व्यवहार दिया, जिसने अडिग और अडोल आस्था एवं निष्ठा दी, उसी गौरवमय गुरु आचार्यश्री जवाहरलाल जी के पचासवें वर्ष के पुण्य अवसर पर मन के कण-कण से श्रद्धा सुमन समर्पित हैं।

हमें ऐसे महान गुरुदेव मिले, जिन पर हम जितना भी नाज करें वह थोड़ा है।

वे हमारे इस जैन सम्प्रदाय के आचार्य जरूर थे, लेकिन उनमें साम्प्रदायिकता बिल्कुल नहीं थी। वे एक महान् राष्ट्रसेवी संत थे। उन्होंने राष्ट्रीयता के पक्ष में मानव जाति की भलाई के लिए ही जीवनपर्यंत कार्य किया व सेवा की। उनका चिन्तन व अध्ययन इतना गहरा था कि औरों की अपेक्षा वे पचास वर्ष पहले वह कार्य करने में समर्थ थे जिसके बारे में हम आज सोच रहे हैं।

साहित्य साधना—गुरुदेव अपने युग के एक प्रकाण्ड विद्वान, प्रभावक प्रवचनकार एवं यशस्वी साहित्यकार थे। जैन और अजैन जनता से उन्हें सर्वत्र एक दिव्य पुरुष जैसा सत्कार और सम्मान, प्रतिष्ठा और जयजयकार मिलता था। कुछ ऐसे विचारक होते हैं जिनके चित्त में चिन्तन की ज्योति तो जगमगाती है, परन्तु उनमें वाणी द्वारा प्रकाशित करने की क्षमता ही नहीं होती और कुछ ऐसे भी हैं जो चिन्तन तो कर सकते हैं और अच्छी तरह बोल भी सकते हैं, परन्तु अपने चिन्तन एवं प्रवचन को चमत्कारपूर्ण शैली में लिखकर साहित्य का रूप नहीं दे सकते।

लेकिन आचार्य श्री जवाहर को इन तीनों ही विधाओं में कमाल हासिल था। जहां उन का चिन्तन और प्रवचन गंभीर एवं तत्वस्पर्शी था, वहां उनका साहित्य-सृजन भी उत्तम कोटि का था। आचार्य श्री जी के साहित्य में उनकी आत्मा बोलती है। उनकी रचनाएँ केवल रचना के लिए ही रचना नहीं है, अपितु उनमें शुद्ध पवित्र एवं संयमी जीवन का अन्तर्नाद मुखरित है। साहित्य समाज का दर्पण होता है। ठीक है, परन्तु इतना ही नहीं, वह स्वयं लेखक के अन्तर्जीवन का दर्पण होता है। गुरुदेव का साहित्य आत्मानुभूति का साहित्य है, व्यक्ति और समाज के चरित्र निर्माण का साहित्य है। गुरुदेव राष्ट्र को ऐसा अनुपम साहित्य दे गये जिसका बहुत बड़ा मूल्य आज भी कायम है। स्थानकवासी जैन समाज के लिए यह एक बड़ा गौरव का प्रसंग है। श्री चंपालाल जी बांठिया ने गुरुदेव

के अमर साहित्य को जिस सुन्दर रूप से प्रकाशित कराया वह अपने आप में एक अनुपम मिसाल है। श्री शोभाचन्द्र जी भारिल्ल व प्रज्ञाचक्षु प्रोफेसर इन्द्रचन्द्रजी जैसे योग्य पंडितों के सहयोग से साहित्य प्रकाशन कराकर वाँठिया जी ने अपनी गहरी भक्ति व सेवा का परिचय समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। बाँठिया जी की साहित्य प्रकाशन की सेवा एक ऐसा अनोखा प्रसाद है जो कभी भी घटने वाला नहीं है। यह समाज के लिए सदा कायम रहने वाला अमृत है।

सत्ता लिप्सा की भूख मानव सत्ता का दास है, अधिकार लिप्सा का गुलाम है। गृहस्थ जीवन में ही क्या साधु-जीवन में भी सत्ता मोह के महारोग से छुटकारा नहीं हो पाता है। ऊँचे से ऊँचे साधक भी सत्ता के प्रश्न पर पहुँच कर लड़खड़ा जाते हैं। जैन धर्म की एक के बाद एक होने वाली शाखा प्रशाखाओं के मूल में यही सत्ता लोलुपता ओर अधिकार लिप्सा रही है। आचार्य आदि पदवियों के लिये कितना कलह और कितनी विडम्बना होती है यह किसी से छिपा नहीं है। परन्तु श्री जवाहराचार्य इस अधिकार लिप्सा के गुलाम नहीं थे। वे सत्ता और अधिकार के मोह के महारोग से सर्वथा निर्लिप्त थे।

गुरुदेव जितने महान् थे, उतने ही विनम्र थे। आप एक पुष्पित एवं फलित विशाल वृक्ष के समान ज्यों-ज्यों महान् यशस्वी हुए, प्रख्यात प्रतिष्ठित हुए, त्यों-त्यों अधिकाधिक विनम्र होते चले गये। अहंकार उनको छू भी नहीं गया था। बड़ों के प्रति श्रद्धा और छोटों के प्रति प्रेम-स्नेह कैसा होना चाहिए वह गुरुदेव के जीवन की अपनी अलग पहचान थी। दोहरे-तिहरे गुलामी वाले क्षेत्र में, अशिक्षित और पिछड़े समाज में आपने राष्ट्रप्रेम की जो वीन बजाई, जन जागरण के लिए जो नाद किया वह काबिले तारीफ है। आपने स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़ने के लिए जिस रूप में समाज के सामने बातें रखी एवं उस आंदोलन में प्रविष्ट होने की प्रेरणा जिस तरह से दी वह पूरी तरह अपनी साधु मर्यादा के अनुरूप एवं विवेकपूर्ण थी। जैन श्रमणों के लिए यह बहुत बड़ी बात थी। समाज के लिए नयी क्रांति का संदेश था। उन्होंने राष्ट्र की अमूल्य सेवा की। बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेताओं-गांधीजी, नेहरूजी, सरदार पटेल आदि ने आपकी इस सेवा की खुले रूप से भूरि-भूरि प्रशंसा की।

साठ-सत्तर वर्ष पहले का उनका चिन्तन, उनके प्रवचनों में कहीं बातें आज के इस विकसित वैज्ञानिक युग में भी यदि बौद्धिक कसौटी पर कसकर उनका मूल्यांकन करें तो वैज्ञानिक धरातल पर भी वे बहुत कुछ उपयोगी और सही जान पड़ती हैं। उनके साहित्य को पढ़ने से आज भी वे बातें सारयुक्त और नई मालूम पड़ती हैं। कलकत्ते की जैन सम्प्रदायों की सम्मिलित सभाओं में तेरापंथ के विद्वान संत श्रद्धेय श्री बुद्धमल जी व नगराज जी जैसे महान दार्शनिक मुनि आचार्यश्री जी के साहित्य की खुले हृदय से प्रशंसा करते थे और यहां तक कहने में नहीं हिचकिचाते थे कि 'हमने आचार्य श्री जवाहरलाल जी के साहित्य व प्रवचनों से बहुत कुछ प्रेरणा ली और सीखा है।'

पूज्य जवाहराचार्य जी के साहित्य में आज भी जनसाधारण को कुछ न कुछ ज्ञान की प्रेरणा मिलती है। एक दिन वाँठिया हॉल में कॉलेज के कुछ विद्यार्थी गुरुदेव के पास आये। परोक्ष की मान्यताओं को लेकर कुछ तर्क की बातें कही।

गुरुदेव ने उनकी बातों का ऐसा तर्कसंगत एवं सटीक जवाब दिया कि वे सब नतमस्तक होकर गहरी [illegible] प्रकट करते हुए गये। परोक्ष विषयों के प्रति उनकी अवधारणा सही और यथार्थ थी। इह लोक और परलोक [illegible] विषय में उनका चिन्तन वैज्ञानिक कसौटी पर आज भी खरा लगता है। विश्व का स्वरूप क्या है? आत्मा क्या [illegible]? जीव क्या है? ईश्वर है अथवा नहीं है? ईश्वर का स्वरूप क्या है? ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण क्या है?

जीवन का चरम लक्ष्य क्या है ? सत्ता का स्वरूप क्या है ? ज्ञान का साधन क्या है ? सत्य ज्ञान का स्वरूप और सीमाएँ क्या है ? शुभ-अशुभ क्या है ? नैतिक निर्णय का विषय क्या है ? व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध क्या है ? इन लौकिक व परोक्ष के विषयों पर उन्होंने जो समाधान अपने प्रवचनों में किया है। वह आज भी उतना ही प्रासंगिक प्रतीत होता है। भारतीय दर्शन का उन्हें मौलिक ज्ञान था।

धर्म की परिभाषा उनकी अपनी मौलिक थी। स्वामी विवेकानन्दजी, आचार्य नरेन्द्रदेव जी व डाक्टर राम मनोहर लोहिया ने धर्म की जो व्याख्या की, उसकी जो परिभाषा दी, लगभग वैसा ही धर्म के सम्बन्ध में गुरुदेव का चिन्तन था। धर्म के विषय में उनका मानना था—'जहां धर्म अर्थ का मार्ग दर्शक नहीं है, वहां धर्म अर्थ का अनुचर बन जाता है'। लोक को सुधारने के लिए ही परलोक की कल्पना करने में भी उनका विश्वास झलकता है। उन्होंने जनसाधारण को गुमराह होने एवं भटकने से बचाने में पूरी ईमानदारी का परिचय दिया है। उन्होंने दर्शन की उन बातों को ही अधिक महत्त्व दिया जो व्यक्ति के वर्तमान जीवन के लिए विशेष उपादेय है। उन्होंने दर्शन के साथ जुड़े कर्मकाण्ड, रीति-रिवाज, रूढ़ियाँ, अन्धविश्वास व मिथकीय बातों को धर्म का अंग नहीं माना। वे सत्य के महान् उपासक थे। उन्होंने अपने काल में समाज को प्रगतिशील बनाने के लिए अथक प्रयास किया। उनके हर प्रवचन में इसकी झांकी है।

समाज ही हमारा अयोग्य था, ऐसे धर्मगुरु को पाकर भी जहां का तहां अटका रहा, यह बड़े दुर्भाग्य की बात ही है। आज भी यह सम्प्रदाय वर्तमान आचार्य के सान्निध्य में वहीं पिछड़ा बैठा है, रूढ़ियों से जकड़ा पड़ा है। कुंभकरण की सी गहरी निद्रा में सो रहा है जागने का नाम नहीं लेता है, तो फिर कैसे क्या हो ? उस क्रांतिकारी युगपुरुष के अर्धशताब्दी पुण्यतिथि पर यदि हमारा सम्प्रदाय कुंभकरणी निद्रा को त्याग कर जाग जाये तो, बस उस महायोगी श्री जवाहराचार्य के प्रति सच्ची और उपयोगी हार्दिक श्रद्धांजलि आज भी सही साबित हो सकती है। आज अर्थ के पाश में फंसे धर्मगुरुओं की विचित्र दशा देखकर बड़ी हैरानी होती है। क्या इनके अध्यात्म के प्रभाव का यही नतीजा है। इनके पीछे जो लाखों-करोड़ों समाज खर्च कर रहा है क्या यह राष्ट्र के लिये अभिशाप नहीं बनता जा रहा है ? क्या हमारे सामर्थ्य व शक्ति का दुरुपयोग नहीं हो रहा है ? हमें उस महान पुरुष की पुण्यतिथि पर क्रांतिकारी कदम उठाना जरूरी है। □

के अमर साहित्य को जिस सुन्दर रूप से प्रकाशित कराया वह अपने आप में एक अनुपम मिसाल है। श्री शोभाचन्द्र जी भारिल्ल व प्रज्ञाचक्षु प्रोफेसर इन्द्रचन्द्रजी जैसे योग्य पंडितों के सहयोग से साहित्य प्रकाशन कराकर बाँठिया जी ने अपनी गहरी भक्ति व सेवा का परिचय समाज के समक्ष प्रस्तुत किया है। बाँठिया जी की साहित्य प्रकाशन की सेवा एक ऐसा अनोखा प्रसाद है जो कभी भी घटने वाला नहीं है। यह समाज के लिए सदा कायम रहने वाला अमृत है।

सत्ता लिप्सा की भूख मानव सत्ता का दास है, अधिकार लिप्सा का गुलाम है। गृहस्थ जीवन में ही क्या साधु-जीवन में भी सत्ता मोह के महारोग से छुटकारा नहीं हो पाता है। ऊँचे से ऊँचे साधक भी सत्ता के प्रश्न पर पहुँच कर लड़खड़ा जाते हैं। जैन धर्म की एक के बाद एक होने वाली शाखा प्रशाखाओं के मूल में यही सत्ता लोलुपता ओर अधिकार लिप्सा रही है। आचार्य आदि पदवियों के लिये कितना कलह और कितनी विडम्बना होती है यह किसी से छिपा नहीं है। परन्तु श्री जवाहराचार्य इस अधिकार लिप्सा के गुलाम नहीं थे। वे सत्ता और अधिकार के मोह के महारोग से सर्वथा निर्लिप्त थे।

गुरुदेव जितने महान् थे, उतने ही विनम्र थे। आप एक पुष्पित एवं फलित विशाल वृक्ष के समान ज्यों-ज्यों महान् यशस्वी हुए, प्रख्यात प्रतिष्ठित हुए, त्यों-त्यों अधिकाधिक विनम्र होते चले गये। अहंकार उनको छू भी नहीं गया था। बड़ों के प्रति श्रद्धा और छोटों के प्रति प्रेम-स्नेह कैसा होना चाहिए वह गुरुदेव के जीवन की अपनी अलग पहचान थी। दोहरे-तिहरे गुलामी वाले क्षेत्र में, अशिक्षित और पिछड़े समाज में आपने राष्ट्रप्रेम की जो बीन बजाई, जन जागरण के लिए जो नाद किया वह काविले तारीफ है। आपने स्वतंत्रता आन्दोलन से जुड़ने के लिए जिस रूप में समाज के सामने बातें रखी एवं उस आंदोलन में प्रविष्ट होने की प्रेरणा जिस तरह से दी वह पूरी तरह अपनी साधु मर्यादा के अनुरूप एवं विवेकपूर्ण थी। जैन श्रमणों के लिए यह बहुत बड़ी बात थी। समाज के लिए नयी क्रांति का संदेश था। उन्होंने राष्ट्र की अमूल्य सेवा की। बड़े-बड़े राष्ट्रीय नेताओं-गांधीजी, नेहरूजी, सरदार पटेल आदि ने आपकी इस सेवा की खुले रूप से भूरि-भूरि प्रशंसा की।

साठ-सत्तर वर्ष पहले का उनका चिन्तन, उनके प्रवचनों में कहीं बातें आज के इस विकसित वैज्ञानिक युग में भी यदि बौद्धिक कसौटी पर कसकर उनका मूल्यांकन करें तो वैज्ञानिक धरातल पर भी वे बहुत कुछ उपयोगी और सही जान पड़ती हैं। उनके साहित्य को पढ़ने से आज भी वे बातें सारयुक्त और नई मालूम पड़ती हैं। कलकत्ते की जैन सम्प्रदायों की सम्मिलित सभाओं में तेरापंथ के विद्वान संत श्रद्धेय श्री बुद्धमल जी व नगराज जी जैसे महान दार्शनिक मुनि आचार्यश्री जी के साहित्य की खुले हृदय से प्रशंसा करते थे और यहां तक कहने में नहीं हिचकिचाते थे कि 'हमने आचार्य श्री जवाहरलाल जी के साहित्य व प्रवचनों से बहुत कुछ प्रेरणा ली और सीखा है।'

पूज्य जवाहराचार्य जी के साहित्य में आज भी जनसाधारण को कुछ न कुछ ज्ञान की प्रेरणा मिलती है। एक दिन बाँठिया हॉल में कॉलेज के कुछ विद्यार्थी गुरुदेव के पास आये। परोक्ष की मान्यताओं को लेकर कुछ तर्क की बातें कही।

गुरुदेव ने उनकी बातों का ऐसा तर्कसंगत एवं सटीक जवाब दिया कि वे सब नतमस्तक होकर गहरी श्रद्धा प्रकट करते हुए गये। परोक्ष विषयों के प्रति उनकी अवधारणा सही और यथार्थ थी। इह लोक और परलोक के विषय में उनका चिन्तन वैज्ञानिक कसौटी पर आज भी खरा लगता है। विश्व का स्वरूप क्या है? आत्मा क्या है? जीव क्या है? ईश्वर है अथवा नहीं है? ईश्वर का स्वरूप क्या है? ईश्वर के अस्तित्व का प्रमाण क्या है?

जीवन का चरम लक्ष्य क्या है? सत्ता का स्वरूप क्या है? ज्ञान का साधन क्या है? सत्य ज्ञान का स्वरूप और सीमाएँ क्या है? शुभ-अशुभ क्या है? नैतिक निर्णय का विषय क्या है? व्यक्ति और समाज का सम्बन्ध क्या है? इन लौकिक व परोक्ष के विषयों पर उन्होंने जो समाधान अपने प्रवचनों में किया है। वह आज भी उतना ही प्रासंगिक प्रतीत होता है। भारतीय दर्शन का उन्हें मौलिक ज्ञान था।

धर्म की परिभाषा उनकी अपनी मौलिक थी। स्वामी विवेकानन्दजी, आचार्य नरेन्द्रदेव जी व डाक्टर राम मनोहर लोहिया ने धर्म की जो व्याख्या की, उसकी जो परिभाषा दी, लगभग वैसा ही धर्म के सम्बन्ध में गुरुदेव का चिन्तन था। धर्म के विषय में उनका मानना था—'जहां धर्म अर्थ का मार्ग दर्शक नहीं है, वहां धर्म अर्थ का अनुचर बन जाता है'। लोक को सुधारने के लिए ही परलोक की कल्पना करने में भी उनका विश्वास झलकता है। उन्होंने जनसाधारण को गुमराह होने एवं भटकने से बचाने में पूरी ईमानदारी का परिचय दिया है। उन्होंने दर्शन की उन बातों को ही अधिक महत्त्व दिया जो व्यक्ति के वर्तमान जीवन के लिए विशेष उपादेय है। उन्होंने दर्शन के साथ जुड़े कर्मकाण्ड, रीति-रिवाज, रूढ़ियाँ, अन्धविश्वास व मिथकीय बातों को धर्म का अंग नहीं माना। वे सत्य के महान् उपासक थे। उन्होंने अपने काल में समाज को प्रगतिशील बनाने के लिए अथक प्रयास किया। उनके हर प्रवचन में इसकी झांकी है।

समाज ही हमारा अयोग्य था, ऐसे धर्मगुरु को पाकर भी जहां का तहां अटका रहा, यह बड़े दुर्भाग्य की वात ही है। आज भी यह सम्प्रदाय वर्तमान आचार्य के सान्निध्य में वहीं पिछड़ा बैठा है, रूढ़ियों से जकड़ा पड़ा है। कुंभकरण की सी गहरी निद्रा में सो रहा है जागने का नाम नहीं लेता है, तो फिर कैसे क्या हो? उस क्रांतिकारी युगपुरुष के अर्धशताब्दी पुण्यतिथि पर यदि हमारा सम्प्रदाय कुंभकरणी निद्रा को त्याग कर जाग जाये तो, बस उस महायोगी श्री जवाहराचार्य के प्रति सच्ची और उपयोगी हार्दिक श्रद्धांजलि आज भी सही सावित हो सकती है। आज अर्थ के पाश में फंसे धर्मगुरुओं की विचित्र दशा देखकर बड़ी हैरानी होती है। क्या इनके अध्यात्म के प्रभाव का यही नतीजा है। इनके पीछे जो लाखों-करोड़ों समाज खर्च कर रहा है क्या यह राष्ट्र के लिये अभिशाप नहीं बनता जा रहा है? क्या हमारे सामर्थ्य व शक्ति का दुरुपयोग नहीं हो रहा है? हमें उस महान पुरुष की पुण्यतिथि पर क्रांतिकारी कदम उठाना जरूरी है। □

प्रज्ञा-पुरुष

❑ चाँदमल वावेल ❑

'करोड़ों रोज आते हैं धरा का भार वनने को,
अनेकों जन्म लेते हैं जनों के पाश वनने को।
कई हैं जन्मते पण्डित, जवा से ब्रह्म वनने को,
उपजते हैं यहाँ कितने, शरीरी सन्त वनने को।।'

इस नश्वर संसार में असंख्य प्राणी प्रतिदिन जन्म धारण करते हैं और प्रतिदिन काल के विकराल गाल में विलीन हो जाते हैं। जन्म-मृत्यु का यह कालचक्र अनादिकाल से चला आ रहा है। एक दिन जन्म लेना, एक दिन मरण को प्राप्त करना, यह विश्व का अबाध सनातन नियम है। जन्म- मरण इस दृष्टि से अपने परिवेश में कोई विशेष घटना नहीं रह गयी है। पता ही नहीं चलता कि इस जन्म-मरण के चक्रव्यूह में कौन कब और कहाँ जन्म लेता है, और इस संसार से कब चला जाता है। इस जन्म-मरण के चक्र को क्या कभी ऐतिहासिक बनाया जा सकता है? यह प्रश्न विचारणीय है?

विश्व के इतिहास में बड़े-बड़े धनपति व सत्ताधीश हो चुके हैं जिनके प्रासाद गगन से टकराते थे, जिनके विशाल भवनों में लक्ष्मी नृत्य करती थी, जिनके शौर्य बल के सामने अनेक योद्धा हाथ जोड़े खड़े रहते थे। किन्तु आज विश्व में किस कोने में उनके स्मृतिचिह्न अवस्थित हैं?

विश्व के उदयाचल पर विराट व्यक्तित्वसम्पन्न दिव्यात्माएँ समय-समय पर उदित होती रही हैं जिनके आचार-विचार, ज्ञान और चारित्र का भव्य प्रकाश देश, धर्म और समाज के सभी अंचलों को आलोकित करता रहा है, जन-जन के जीवन में ज्योति भरता रहा है।

वस्तुतः भारत की शस्य श्यामला वसुन्धरा में युगों-युगों से धर्म-धारा प्रवाहित होती रही है। बुद्ध, महावीर, राम, कृष्ण ने अपने अध्यात्म ज्ञान एवं धर्मोपदेश से इस देश के धर्ममय स्वरूप को बचाये रखकर उसे विश्व में विशिष्ट स्थान दिलवाया है। इस धरा पर प्रेम और त्याग, संयम और सदाचार की धाराएँ सदा बहती रही हैं जिसकी शीतलता में सारी मानवता आत्मविभोर हो अध्यात्म रंग में रंगी रही हैं।

आदितीर्थंकर ऋषभदेव से महावीर तक के शासनकाल में हजारों-हजारों संयमी मुमुक्षु आत्माएँ धर्म पथ पर चल कर आत्मकल्याण करती हुई जन-जन को सद्‌बोध देती रही हैं। इसके बाद भी पावन धर्म सलिला निरन्तर प्रवाहित होती रही है। यह क्रम आज तक चला आ रहा है। इस क्रम में महान् ज्योतिर्धर, युग-प्रधान आचार्य १००८ श्री जवाहरलालजी म.सा. आये। वैसे मानव की महिमा जन्म से नहीं है बल्कि स्वयं की साधना एवं

कार्यकलापों पर निर्भर करती है। कृष्ण का जन्म कंस के कारावास में और जरासंध का जन्म रत्नजटित राजप्रासादों में। हम देखते हैं कि इनमें कौन महान् है ? दो-चार नहीं ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो कि जन्मे किस स्थिति में और पहुँचे किस स्थिति में। अतः स्पष्ट है कि जन्म के केवल बाह्य परिवेश से कोई व्यक्ति महत्वशाली नहीं बनता है। मानव अपने सत्कर्मों की बदौलत महान बन साधना पथ को अपनाकर परमात्म पद को प्राप्त कर सकता है। इस महान् आचार्य को बचपन से ही संकटों का सामना करना पड़ा। दो वर्ष की आयु में माता का विरह पाँच वर्ष की आयु में पिता का वियोग, मामा का संरक्षण मिला किन्तु वह भी तेरह वर्ष की आयु में समाप्त हो गया। किन्तु ऐसी महाविपत्तियों में भी घबराये नहीं। Deep tragedy is the school of great man. महान् संकट ही महापुरुषों का विद्यालय है। इन संकटों से आचार्यश्री को दृढ़ता प्राप्त हुई एवं संसार की असारता का सही दिग्दर्शन हुआ। हृदय में वैराग्य की ऊर्मिया लहराने लगी। वे भी साधारण नहीं, सच्चे किरमिची रंग के सदृश। और तीन वर्ष बाद सोलह वर्ष की आयु में महाअभिनिष्क्रमण के मग पर आरूढ़ हो गये। महत्व व्यक्ति एवं जन्म का नहीं है, महत्व साधना का है। महत्व है धर्माचरण का, महत्व है व्रतारोहण का, विशेषता है साधना की। जिसको आचार्यश्री ने आत्मसात् किया। बचपन के खाने-खेलने से पलायन कर स्वकल्याणार्य स्वजागरणार्य, सतत संघर्ष में जुट गये। यही तो आत्मोसर्ग का सच्चा क्रम है। क्योंकि दीक्षा प्राप्त करना संसारी जीवन से मुक्त होकर आध्यात्मिक जीवन में जन्म लेना है; तभी तो महावीर ने फरमाया था—'एस वीर पंसंसीय जे बद्धे पडिमोयए' तो आचार्य भगवन ने आत्मसाधना की ओर बढ़कर निरन्तर अपने में अखण्ड ज्योति जगाते रहे। अनुकूल प्रतिकूल कोई विकल्प नहीं रहा। निरन्तर शुद्धत्व की ओर अपने दृढ़ कदमों को बढ़ाते रहे। उस समय आपका गरिमामय जीवन, आप के सिद्धान्त, आदर्श एवं शिक्षाएं जन-जन को आकर्षित करती रही थी। पचास वर्ष पूर्व आपका भौतिक शरीर शान्त हुआ। अर्द्धशती बीतने के बाद आज भी इस भटके हुये समाज और देश को आपके उपदेशों की अधिक आवश्यकता है। आपका साहित्य आज भी जीवन्त प्रकाश स्तम्भ के रूप में हमारे सामने विद्यमान है। 'कीर्तिर्यस्य स जीविति' आज आपकी कीर्ति, यश, गौरव हमारे सामने विद्यमान है। सन्त का अस्तित्व अनन्त होता है 'सः अन्त इतिसन्त' अर्थात् जो चरम सीमा पर पहुँच जाता है वही सन्त है। सन्त की महिमा शब्दों के द्वारा व्यक्त नहीं की जा सकती है, उसे शब्दों द्वारा व्यक्त करना कठिन है।

ज्योतिर्धर आचार्य जवाहरलालजी का जीवन 'साधयति स्व पर कार्याणि' था जिन्होंने अपने ज्ञान का इतना प्रसार किया कि आज भी तथा युगों-युगों तक प्रकाश स्तम्भ के रूप में जन-जन को आलोकित करता रहेगा। सूर्य का प्रकाश तो केवल दिन तक ही सीमित है किन्तु वे ऐसे प्रकाश स्तम्भ हैं जो रात-दिन जनमानस को अंधकार से प्रकाश की ओर ले जा रहे हैं। भूले-भटके मानवों को सही दिशादर्शन करा रहे हैं तथा कराते रहेंगे। आचार्यश्री क्रान्तिकारी युगदृष्टा थे। ऐसा आचार्य अब तक नहीं हुआ जो कि सामाजिक, धार्मिक, साहित्यिक और राष्ट्रीय धाराओं से एक साथ जुड़ा रहा हो। आपने अल्पारम्भ-महारम्भ पर जिस प्रकार क्रान्तिकारी विचार दिये वे अब तक किसी आचार्य ने नहीं दिये हैं। विक्रम संवत् १९९२ में जब अल्पारम्भ—महारम्भ को लेकर काफी विवाद चल रहा था उस समय आपने अपने गहन चिन्तन एवं मौलिक विचारों के साथ अपनी शास्त्र-सम्मत व्याख्या प्रस्तुत की थी। आप सत्याग्रही युगदृष्टा लब्धप्रतिष्ठ एवं गम्भीर विचारक आचार्य थे। आप प्रकाण्ड विद्वान तो थे ही साथ ही शास्त्रों की युगानुकूल एवं सिद्धान्त-सम्मत व्याख्या प्रस्तुत करने में सिद्धहस्त थे। कृषि कर्म के बारे में शास्त्र-सम्मत प्रश्न पूछे जाने पर आपने स्पष्ट फरमाया कि कृषि कर्म को महारम्भ मानना उचित नहीं है; क्योंकि कृषि कर्म से मानव का शोषण एवं अहित उतना नहीं होता जितना ब्याज या कल कारखाने आदि धन्धों से होता

है। इसलिये कृषि अल्पारम्भ है। यही कारण है कि प्राचीन काल में आनन्द आदि अनेक बड़े-बड़े श्रावक कृषि कर्म करते थे। यदि कृषि कर्म महारम्भ होता तो श्रावक वर्ग इसे कैसे अपनाता ? क्योंकि महारम्भ तो श्रावक के लिये सर्वथा त्याज्य होता है। तथा महारम्भ को दुर्गति का भी कारण बताया है। भला इसे श्रावक कैसे अपनाता ?

आपने इस प्रकार की व्याख्या की जो कि शास्त्र सम्मत होते हुये भी उस समय प्रचलित अटपटी मान्यता से भिन्न थी अतः विरोधी पक्ष ने इतना तहलका मचा दिया कि आपको 'शास्त्र विरुद्ध प्ररूपक' (उत्सूत्र प्ररूपक) कहा जाने लगा। किन्तु आप क्रान्तिकारी थे अतः विरोध की कोई परवाह नहीं की क्योंकि आप गम्भीर विचारक के साथ-साथ तटस्थ भी थे। विरोध एवं प्रतिक्रिया सुनने को सदैव उद्यत रहते थे। आपको अपनी व्याख्याओं के प्रति कदा ग्रह नहीं था। अपनी प्रबल युक्तियों से और शास्त्रीय प्रमाणों से आप उनका उत्तर देते जिससे आपके सामने विरोधियों की युक्तियाँ टिक नहीं पाती थी।

वास्तव में आचार्य श्री का जीवन गौरवशाली था। वे केवल जैन समाज के लिये ही नहीं बल्कि विश्व के लिये वरदान थे। एक आदर्श साधक, आदर्श तपस्वी, बाल-ब्रह्मचारी होने के कारण आपका व्यक्तित्व इतना तेजस्वी था कि एक बार जो भी दर्शन कर लेता उसके मन में उनकी पावन प्रतिमा स्थापित हो जाती थी।

आचार्य श्री ने समाज उत्थान के लिये अपना जीवन लगा दिया। वे समाज के प्राण थे। अनन्त गुणों के भण्डार थे। आपके सद्गुणों की व्याख्या सहस्त्रों जिह्वाओं द्वारा भी नहीं की जा सकती।

जिन तत्त्व के साधक शिरोमणि। आपका गुणानुवाद करना कठिन है, जैसे प्रलयकाल की वायु से क्षुब्ध समुद्र को अपनी भुजाओं से तैरना कठिन है उसी प्रकार आपके अन्तःकरण के अथाह समुद्र का अवगाहन करना कठिन है। आपने आगमों की वाणी को जनमानस के हृदय में उंडेलने का महान् प्रयास किया। आगम साहित्य की सेवा आचार्य श्री द्वारा हुई वह स्थायी रहेगी। आपका परिश्रम श्लाघनीय है।

हे भारत के महान आचार्य, ज्योतिर्धर, क्रान्तिदर्शी, युग द्रष्टा, महान युग पुरुष, महान् सुधारक, महान संगठन प्रेमी, समाज के सही नेतृत्वकर्त्ता, अप्रमत शीर्षस्थ साधक, चेतना के उन्नायक, सम्प्रदायवाद के विरोधी, स्वतन्त्र चिन्तक, संस्कृति के सजग प्रहरी, सिद्धान्तों के व्यवहारिक व्याख्याकार, बहुआयामी प्रतिभा के धनी, कोटि-कोटि वन्दन। □

श्री विट्ठल भाई पटेल—इसी चातुर्मास में केन्द्रीय धारा-सभा के सभापति श्री विट्ठलभाई पटेल भी आचार्य के दर्शनार्थ एवं प्रवचन श्रवण हेतु पधारे। आचार्य के त्याग, तपमय जीवन और उदार दृष्टिकोण से आप वड़े प्रभावित हुए। आपने भी आचार्य श्री के इन गुणों की मुक्तकण्ठ में प्रशंसा की।

दस्तावेज

जवाहर-क्रान्ति

समाज-सुधार

पंचायत नामा

सकल पंचपुर थांदला

वि.सं. १९६५ सावण वदी १३ रविवार

१५५ व्यक्तियों द्वारा हस्ताक्षरित : आचार्यश्री का १७वां चातुर्मास

मुख्य कलमें

१. कन्या विक्रय बंद किया जाता है। लड़की को सगपण करवाने में देज सिर्फ १ रु. रहेगा।

२. बींद-बींदणी बारात भाणा खरच की रकमें सीमित कर दी गई।

३. विवाह में रंडी नाच करवाणो नहीं।

४. रजा की जीमण में मोरस खांड नहीं गारणी।

५. लीला बाज दूना नहीं वापरणा। कतई बंद-जात में, गाम में।

६. न्यात का निराश्रित बायां-भायां पर पंचायती निगाह सार संभार की देवे

७. परगाम पंचायती रसम से जावे तो रति मशाल का उजवारा सूं नहीं जावे।

८. जात में बिरादरी की लुगायां बेजा गारियां नी गावे, बेजा नाच नी नाचे।

९. सावण भादवा में नया सरसे नींव नाख नै मकान को या दूसरो काम नहीं शुरू करणो।

१०. सावण भादवा में अष्टमी नवमी के दिन गाड़ी भाड़े की घर की नहीं चलावणी। वैसे गाड़ी में बैठकर जाणो नहीं।

११. माती मौत १५ साल तक की हुवै तो वणी पर पंचायती हक नहीं, सबब रजा नहीं देवे।

१२. हाथी दांत को चूड़ो आपणा अठी बंद करी चुका हां।

१३. आतिशबाजी, झाड़, हाथी, नार-वगैरह थांदला के अन्दर नहीं छोड़ें और परदेशी ने भी गांव में नहीं छोड़वा देना।

१४. पंचायती हक सिवाय जो बाबत आवेगा इजाफ की उसकी हिस्सा रसीद सिररस्ता मुजब समझ ली जावेगी।

ऊपर माफक कलमां को पालन समस्त पंच थांदला का करेगा और अण के सिवाय खुशी से कोई भी वरोटी करेगा तो वासण भाड़ा रु. ढाई अर देवका रुपया ढाई जुमला ५ रु. लेगा। ऊपर लिख्या सिवाय पंचायती हक दस्तूर नहीं है। लिख्या हुवा है के सिवाय किरियावर पर पंचायती हक नहीं है। यो ठराव समस्त पंच थांदला के रुवरू सा. प्यारे लालजी के हुआ है सो सही है।

(अष्टाचार्य गौरव गंगा-पृष्ठ १४३)

श्री विनोबा भावे—सम्वत् १९८९ में आचार्यश्री ने अपना चातुर्मास जलगांव में किया। इस अवसर पर विनोबा भावे का आपसे परिचय हुआ। विनोबा भावे ३-४ दिन तक आचार्यश्री के साथ रहे। इस दौरान आप दोनों के बीच गंभीर तत्त्व-चर्चाएं होती रहीं।

श्री जमनालाल बजाज—इसी चातुर्मास में प्रमुख राष्ट्रवादी श्री जमनालाल बजाज का भी आचार्यश्री से सम्पर्क हुआ। आपने भी आचार्यश्री के प्रवचन-सान्निध्य का लाभ उठाया।

श्री मदनमोहन मालवीय—आचार्यश्री वि.सं. १६८४ का अपना चातुर्मास पूर्ण कर भीनासर से बीकानेर पधारे उसी समय महामना मदनमोहन मालवीय श्री हिन्दू विश्वविद्यालय के सम्बन्ध में बीकानेर पधारे थे। मालवीयजी आचार्यश्री के प्रवचन में पधारे और आपने भी आचार्यश्री के प्रभावी व्यक्तित्व की खूब प्रशंसा की।

सर मनुभाई मेहता—श्री मेहता बीकानेर रियासत के प्रधानमंत्री थे और वि.सं. १६८५ के आचार्यश्री के भीनासर-बीकानेर प्रवास का आपने भरपूर लाभ लिया। आप आचार्यश्री के व्याख्यानों में अनेक बार उपस्थित हुए और उनके अनन्य भक्त बन गये।

काका कालेलकर—आचार्यश्री का वि.सं. १६८८ का चातुर्मास दिल्ली में था। आचार्यश्री के इस महत्वपूर्ण चातुर्मास के दौरान अनेक राष्ट्रीय नेता आपके प्रवचन सुनने अथवा आपके दर्शनार्थ पधारे। काका कालेलकर का भी इसी दौरान आपसे परिचय हुआ। काका कालेलकर प्रसिद्ध विद्वान विचारक के रूप में जाने जाते हैं। जैन धर्म के भी आप अच्छे ज्ञाता रहे हैं। आप अनेक अवसरों पर जैन धर्मावलम्बियों के मध्य प्रवचन हेतु भी पधारते रहे हैं। आपने भी आचार्यश्री के राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत विचारों की खूब सराहना की।

सरदार वल्लभ भाई पटेल—सम्वत् १६६३ का आचार्यश्री का चातुर्मास राजकोट में था। इसी चातुर्मास में सरदार वल्लभ भाई पटेल पूज्य आचार्य श्री के दर्शनार्थ पधारे। सरदार पटेल ने आचार्यश्री के प्रवचन के पश्चात् अपने उद्गार व्यक्त करते हुए कहा कि 'आप लोग धन्य हैं, जिन्हें ऐसे महात्मा मिले हैं और जिनके ऐसे व्याख्यान सुनने को मिलते हैं। मगर यह सुनना तभी सफल है जब उपदेशों को जीवन में उतारा जाय।'

महात्मा गांधी—वि.सं. १६६३ का राजकोट चातुर्मास कई दृष्टियों से एक यादगार चातुर्मास बन गया। इसी चातुर्मास में २६ अक्टूबर को राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी आचार्यश्री के दर्शनार्थ पधारे। बड़े शांत वातावरण में इन दो महान् नायकों का मिलन हुआ। दोनों में परस्पर सुन्दर विचार-विमर्श हुआ।

इस प्रकार ऊपर के विवरण से स्पष्ट होता है कि आचार्यश्री का अपने समय के सभी प्रमुख राष्ट्रीय नेताओं से सम्मिलन हुआ। उक्त नेताओं के अतिरिक्त भी प्रो. राममूर्ति, पट्टाभि सीतारामय्या, ठक्कर बापा, रवीन्द्रनाथ टैगोर, श्री रामनरेश त्रिपाठी आदि अन्य अनेक महानुभावों ने भी समय-समय पर आचार्यश्री से भेंट मुलाकात की एवं सामयिक तथा तात्विक विषयों पर मुक्त विचार-विमर्श किया।

बहुआयामी प्रतिभा के धनी

❑ श्री जशकरण डागा ❑

भारतीय संत परम्परा में समय-समय पर अनेक ऐसी महान् विभूतियां हुई हैं, जिन्होंने स्व पर कल्याण के साथ-साथ भारत देश का नाम भी सम्पूर्ण विश्व में गौरवान्वित किया है। परमश्रद्धेय जैनाचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. भी एक ऐसी ही विरल विभूति हुई हैं। आप जैन श्रमण परम्परा में पू. आचार्य श्री हुकमीचन्दजी म.सा. के षष्टम् पट्ट पर शासन प्रभावी आचार्य हुए हैं।

आप आचार्य के छत्तीस गुणों से सुशोभित थे। दशा श्रुतस्कंध की चतुर्थ-दशा में इन्हीं गुणों को संक्षिप्त कर आठ प्रकार के कहे हैं। यथा- (१) आचार विशुद्धि (२) शास्त्रों के तलस्पर्शी ज्ञाता (३) स्थिर सहनन व पूर्णेन्द्रियता (४) वचन की मधुरता व आदेयता (५) अस्खलित वाचना (६) ग्रहण व धारणा मति की विशिष्टता (७) शास्त्रार्थ में विचक्षणता तथा (८) संयम निर्वाहार्थ साधन संग्रह की कुशलता। आपश्री में ये आठों विशेषताएं बखूबी थी, जिससे आप बहुआयामी प्रतिभा के धनी युगप्रधान आचार्य माने गए हैं।

सामाजिक रूढ़ियों व विकृतियों के उन्मूलक—तत्कालीन समय में समाज में अनेक कुरूढ़ियां एवं विकृतियां प्रभावित थी जैसे विधवाओं को हेय दृष्टि से देखना, दहेज की मांगनी करना, कन्या विक्रय करना, गरीबों से ऊँची दरों का ब्याज वसूल करना आदि-आदि। आपने इन विकृतियों का उन्मूलन करने में महत्त्वपूर्ण योगदान था।

दहेज, कन्या विक्रय आदि के लिए—आपने स्थान-स्थान पर हृदय स्पर्शी प्रवचनों में दहेज की मांगनी करने या तिलक का पहिले से निश्चय करने, कन्या विक्रय करने, मृत्युभोज करने आदि कई कुरूढ़ियों पर सचोट प्रहार करते, और भाई बहिनों को सामूहिक रूप से इन कुप्रथाओं के त्याग कराते थे। मृत्युभोज में सम्मिलित न होने, मृत्यु प्रसंग पर बाद में पगड़ी के दस्तूर पर आने वालों के लिए मिठाई न बनाने, व कोई मिठाई बनावे तो न खाने, भाई के विरुद्ध भाई द्वारा कचहरी में न जाने, आदि नियमों के संकल्प कराते थे। आपने अधिक दर से ब्याज लेने का भी विरोध किया। आपने स्पष्ट किया कि जैसे शस्त्र से हिंसा होती है, वैसे ही लोगों से ऊंची दर से ब्याज वसूल करने से उनका शोषण होता है तथा यह गरीबों (किसानों) के गले काटना है। इससे उनकी स्थिति बड़ी दयनीय हो जाती है जब ब्याज चुकाने के लिए उन्हें अपने जेवर, मकान खेत आदि विक्रय या रहन करने पड़ जाते हैं। आपके प्रवचनों से प्रभावित हो अनेक संघों के श्रावकों ने साहूकारी ब्याज की प्रचलित मर्यादा से अधिक ब्याज लेने के त्याग किए थे।

अहंकारवर्धक पदवियां न लेने के लिए—आप फरमाते 'उपाधियां व्याधियां हैं।' 'जो वास्तव में ऊँचा उठ जाता है, उसे उपाधियों से क्या मतलब है।' एक बार दिल्ली के स्थानकवासी जैन संघ ने आपकी विद्वत्ता व

प्रतिमा से प्रभावित होकर, आपको सम्मान रूप में 'जैन साहित्य चिंतामणि' व 'जैन न्याय दिवाकर' उपाधियाँ दी। किन्तु आपने उन्हें सधन्यवाद अस्वीकार कर दी। साधु-साध्वियों में उपाधि रूप व्याधि की गलत परम्परा न चल पड़े, इस दृष्टि से भी संभवतः आपने उक्त पदवियां स्वीकार न की। किन्तु आज की स्थिति बड़ी खेदप्रद है। सांसारिक उपाधियां एम.ए., पी.एच.डी., डाक्ट्रेट आदि की प्राप्ति हेतु साधु-साध्वीगण, स्वाध्याय, ध्यान, जप तप आदि छोड़ कालेज के छात्र-छात्राओं की तरह रात-दिन परिश्रम करते हैं, फिर प्राप्त उपाधि (डिगरी) को अपने नाम के साथ छपवाने में बड़ा गौरव मानते हैं। उपाधियां सार्वजनिक रूप से दी जाय इस हेतु बड़े-बड़े समारोह आयोजित किए जाते हैं। समाज और धर्म के अग्रणियों का यह रोग रुके, इस पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है।

साधु-साध्वियों का गृहस्थ पंडितों से शिक्षण सेवा-संबंधी प्रथा में सुधार —आप जैनों में विशेषकर साधु-साध्वियों में समय अनुसार रत्नत्रय की साधना में सहायक होने वाले बदलाव के भी पक्षधर थे। जैसे आपने जब देखा कि स्थानकवासी संप्रदायों में साधु-साध्वियों का गृहस्थ पंडितों से शिक्षण लेना निषिद्ध है और जिसके कारण श्रमणवर्ग में अपेक्षित विद्वता न होना शासन के लिए शोभास्प्रद नहीं है, तो आपने विरोध के बावजूद पंडितों से शिक्षण लेने का मार्ग खोला। किन्तु कालान्तर में जब आपने देखा कि साधु-साध्वीगण पढ़ाने हेतु पंडित रखने की प्रथा को अपनी प्रतिष्ठा समझने लगे हैं, बिना पंडित की व्यवस्था हुए, चातुर्मास भी करने से इन्कार करने लगे हैं, तथा सदैव पंडित साथ रहे, इस हेतु गृहस्थों से चंदा ले फण्ड बनाने लगे हैं, तो आपने पंडित प्रथा का दुरुपयोग होते अनुभव कर उस पर पुनः प्रतिबंध लागू किया और आवश्यक होने पर विशिष्ट कारणों में ही पंडितों से शिक्षण प्राप्त करने की छूट रखी।

धर्मशास्त्रों के विशिष्ट विज्ञाता—आपको शास्त्रों का तलस्पर्शी ज्ञान था इसकी पुष्टि आपके द्वारा रचित साहित्य से व विशेषतः 'संदर्भ मण्डन' ग्रंथ से होती है। यह ग्रंथ तेरापंथी आचार्य श्री जीतमलजी म.सा. द्वारा रचित 'भ्रम विध्वंसन' ग्रंथ जिसमें अहिंसा, दया, दान आदि सिद्धान्तों को, आगम के पाठों को इधर उधर कर भ्रमित रूप से प्रस्तुत किया है, के उत्तर में सटीक व संयुक्ति, समाधान करते हुए लिखा गया है, जो एक अनुपम कृति है। आपके विशद आगम ज्ञान का 'सन्दर्भ मण्डल' ज्वलंत प्रमाण है। अल्पारंभ, महारंभ के प्रश्न का भी आपने बड़ा सुन्दर समाधान दिया है। आपने तर्क व शास्त्राधार से मीलबाद व मशीनरीवाद के आरम्भ को महाआरंभ तथा हस्त उद्योग के आरंभ को अल्पारंभ स्पष्ट किया है। जो युक्तिसंगत समाधान है। आप जैनागमों के अतिरिक्त अन्य धर्मग्रंथों का भी क्रमशः स्वाध्याय चलाते थे, तथा सोमवार को मौन रखकर अन्य सन्तों से श्रीमद् भागवतगीता आदि ग्रंथों का क्रम से पाठ सुना करते थे। यदि भारत के सभी धर्माचार्य ऐसी उदारता अन्य धर्मों के प्रति रखे, तो धार्मिक संघर्ष बहुत कुछ कम हो जाय। अन्य धर्मों के ग्रंथों के स्वाध्याय से आपकी पकड़ अन्य धर्मों मों पर भी थी। इसी के परिणाम स्वरूप आप अन्य दर्शन के विद्वानों की शंकाओं का भी सहज सप्रमाण समाधान कर उन्हें संतुष्ट कर देते थे। उदाहरणार्थ लोकमान्य गंगाधर तिलक द्वारा रचित 'गीता रहस्य' का भी आपने स्वाध्याय किया था। एक बार तिलक आपके पास प्रवचन श्रवणार्थ पधारे तो आपने उन्हें बताया कि जैन धर्म को केवल निवृत्ति प्रधान बताकर लिखा गया है कि जैन धर्म अनुसार गृहस्थ मोक्ष नहीं पा सकता, पूर्ण ज्ञानप्राप्ति हेतु मुनि होना अनिवार्य है, मुनियों के लिए भी निवृत्ति ही निवृत्ति है, विधेय रूप विधान बहुत कम या नहीं वत् है आदि। यह सब आपने जैन धर्म के मूल में रहे रहस्य को न जान पाने से लिखा है। पूज्यश्री ने उन्हें स्पष्ट किया कि जैन धर्म निवृत्ति प्रधान नहीं है, इसकी प्रवृत्ति अनासक्ति प्रधान है। जैन धर्म में बाह्य वेश या आचार को खेत की बाढ़ की तरह सहायक माना है। किन्तु खेत के धान्य का स्थान वह नहीं ले सकता। वेश व

बाह्य लिंग मुक्ति का कारण नहीं है। कोई किसी भी वेश में हो, यदि विषयों से पूर्ण अनासक्त हो चुका हो, तो वह मुक्ति प्राप्त कर सकता है। जैसे अन्य लिंग सिद्धा व गृहलिंग सिद्धा का स्पष्ट उल्लेख जैन धर्म में किया गया है। वस्तुतः मोक्ष न होने का कारण विषयों में आसक्ति होना है। अतः जैन धर्म को सर्वथा निवृत्ति प्रधान बताना उचित नहीं है। जैन धर्म में अशुभ से निवृत्ति और शुभ में प्रवृत्ति का विधान किया गया है। पांच आश्रव, अठारह पाप आदि से निवृति और पांच महाव्रत, पांच समिति, अनित्यादि बारह भावनाओं स्वाध्याय, ध्यान आदि में प्रवृत्ति का स्पष्ट विधान है। इस प्रकार से आचार्य प्रवर से जैन धर्म विषयक सूक्ष्म व गंभीर विवेचन सुनकर के लोकमान्य तिलक बड़े प्रभावित व प्रमोदित हुए।

दीन-दुखियों के सहायक व रक्षक—आप मानवता के वड़े समर्थक व पुजारी थे। आप मानवता को धर्म की नींव मानते थे। आप फरमाते थे कि दया, प्रेम, दुखी की सहायता, परस्पर सहानुभूति, सहृदयता आदि मानवता के स्वाभाविक गुण हैं। जो मत या संप्रदाय इनके विरुद्ध प्रचार करे वह धर्म के नाम पर कलंक है। ऐसे मतों, पंथों को पूर्ण विरोध कर मिटा देना मानव का पुनीत कर्त्तव्य है। इस हेतु आपने प्रवचन, लेखन व तपादि साधना बल से मानवता का तथा जीवदया का भरपूर प्रचार-प्रसार किया था। आप कहते थे, 'जव दीनदुखी आपको प्यारे नहीं लगते, तो क्या दूसरों को मारने के लिए ईश्वर से बल की याचना करते हो?' आप जीव दया की प्रवृत्तियों को सदा बल देते थे। एक बार बिहार में भयंकर भूकम्प आया जिससे हजारों व्यक्ति बेघरवार हो गए। आपने सुना तो करुणाद्र हो सभी संघों को आह्वान कर पीड़ितों को समुचित सहायता व राहत पहुँचाने के लिए प्रेरणा दी। जिससे हजारों रुपयों का चंदा एकत्रित कर सहायतार्थ भिजवाया गया।

अनुशासन व आचारनिष्ठ—आप जहाँ दुःखी प्राणियों के दुखों को देख द्रवित हो जाते थे वहां दूसरी ओर आप कठोर अनुशासन व आचारनिष्ठ भी थे। धर्माचार्य को बीकानेरी मिश्री की उपमा दी गई है। जैसे मिश्री मधुर व मीठी होती है और पानी में डाले तो पानी के साथ एकरूप हो जाती है किन्तु उसका प्रयोग प्रहार रूप में करें तो सिर भी फोड़ सकती है। वैसे ही धर्माचार्य अनुशासनप्रिय आचारनिष्ठ शिष्यों के साथ मधुर व मिष्ट व्यवहार करते हैं, किन्तु अनुशासनहीन या आचार भ्रष्टों के साथ कठोर व्यवहार भी शासन हित में करने के लिए तत्पर रहते हैं। आचार्य प्रवर संघ में अनुशासन व आचारनिष्ठता बनी रहे, इसके लिए वे बड़े से बड़ा त्याग भी करने में संकोच नहीं करते थे। एक बार पं. घासीलालजी म.सा. जैसे विद्वान एवं वरिष्ठ संत को भी पुनः पुनः भोलावना देने पर भी जब अनुशासन के प्रतिकूल प्रवृत्ति करते देखा और समाचारी में दोष लगाते सुधार नहीं किया तो, उन्हें दण्डित कर संघ से बाहर कर दिया था। □

राष्ट्रधर्म का स्वरूप : जवाहराचार्य की दृष्टि

❑ प्रो. आर. एल. जैन❑
विधि व्याख्याता

आचार्य श्री जवाहरलाल जी ने अपने प्रवचनों में क्या कुछ नहीं दिया हमको! उनका चिन्तन-मनन एक प्रखर मेधावी का चिन्तन था। अपने चिन्तन के माध्यम से उन्होंने राष्ट्रीयता को अच्छी तरह समझा-परखा ही नहीं वरन् आत्म-बोध से उसे परिष्कृत कर जन-बोधक भी बनाया। आचार्य श्री ने शास्त्रों का गहन अध्ययन कर जैन सूत्र स्थानांग (ठाणांग सूत्र) नामक तीसरे अंग सूत्र में निम्नलिखित दस धर्मों का विधान किया—

(१) ग्राम धर्म (२) नगर धर्म (३) राष्ट्रधर्म (४) व्रत धर्म (५) कुल धर्म (६) गणधर्म (७) संघ धर्म (८) सूत्र धर्म (६) चारित्र धर्म (१०) अस्तिकाय धर्म।

अपने प्रवचनों में उन्होंने राष्ट्र की अवधारणा एवं राष्ट्रधर्म को अत्यंत ही रोचक, सरल तथा सुगम बनाकर जनसाधारण की समझ में आने वाली भाषा में अभिव्यक्त किया। उनके अनुसार ग्रामों एवं नगरों का समूह ही राष्ट्र कहलाता है। परन्तु क्या राष्ट्र का भी कोई धर्म होता है? आचार्यश्री ने अपनी सरल भाषा में समझाया कि 'जिस कार्य से राष्ट्र सुव्यवस्थित होता है, राष्ट्र की उन्नति एवं प्रगति होती है, मानव समाज अपने धर्म का ठीक-ठीक पालन करना सीखता है, राष्ट्र की सम्पत्ति का संरक्षण होता है, सुख-शान्ति का प्रसार होता है, प्रजा सुखी बनती है, राष्ट्र की प्रतिष्ठा बढ़ती है, और कोई अत्याचारी पर राष्ट्र, स्वराष्ट्र के किसी भाग पर अत्याचार नहीं कर सकता, वह कार्य राष्ट्र धर्म कहलाता है। अपने प्रवचनों में आचार्यश्री ने फरमाया कि राष्ट्र के प्रत्येक निवासी पर राष्ट्रधर्म के पालन करने का उत्तरदायित्व है, क्योंकि एक ही व्यक्ति के भले या बुरे कार्य से राष्ट्र विख्यात या कुख्यात (बदनाम) हो सकता है। आचार्यश्री ने इसके स्पष्टीकरण के लिए एक रोचक उदाहरण प्रस्तुत किया था। एक भारतीय सज्जन यूरोप की किसी बड़ी लायब्रेरी में ग्रन्थ अवलोकन करने गये। वहां पर सचित्र ग्रन्थ पढ़ते एक सुन्दर चित्र उन्हें नजर आया। वह चित्र उन्हें बहुत पसन्द आया। उन्होंने चोरी से उसे फाड़ लिया। संयोगवश लायब्रेरियन ने उन्हें देख लिया। उसने जांच पड़ताल की। उस भारतीय को पकड़ा और दण्ड दिया। इस भारतीय के दुष्कृत्य का नतीजा सारे देश को भोगना पड़ा। उसके उपरांत उस लायब्रेरी में यह नियम बना दिया गया कि इस लायब्रेरी में कोई भी भारतीय बिना आज्ञा लिये प्रवेश न करे। इससे प्रभावित सैंकड़ों भारतीय विद्यार्थी हुए और उनके ज्ञानाभ्यास में बाधा पड़ी। तात्पर्य यह है कि राष्ट्रधर्म का पालन न करने से समूचे राष्ट्र को नीचा देखना पड़ा।

आचार्यश्री जी ने राष्ट्रधर्म पर एक अन्य दृष्टांत भी दिया कि एक बार एक जहाज नदी के बीचो बीच जा रहा था, मार्ग में एक मूर्ख मनुष्य किसी मनुष्य को उठाकर नदी में फैंकने को तैयार हो गया और दू... एक तेज धार वाले शस्त्र से जहाज में छेद करने का प्रयत्न कर रहा था। इस स्थिति में पहले किसे रोका

धर्मनायक की अद्वितीय भूमिका

❑ मुरारी लाल तिवारी ❑

महामंत्र नवकार के प्रथम पद में अरिहन्त प्रभु का पुण्य स्मरण है। दूसरा पद सिद्ध भगवान को श्रद्धा से स्मरण कराता है और तीसरा पद 'णमो आयरियाणं' आचार्य भगवान् जो चतुर्विध संघ को अपने सम्यक्‌ज्ञान, सम्यक् दर्शन तथा सम्यक् चारित्र से संचालित करते हैं, के प्रति श्रद्धा की अभिव्यक्ति है।

आचार्य यह सम्बोधन जैन साधना में बड़े महत्त्व का पद है। जैन शास्त्रों में विशिष्ट आत्मा, जो स्वयं पांच प्रकार के आचार का पालन करते हैं और दूसरों से कराते हैं, वही आचार्य है।

अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह इस साधना के प्रमुख अंग हैं। आचार्यप्रभु क्योंकि साधु, साध्वी, श्रावक तथा श्राविका इस चतुर्विध संघ की महान् नियोजक शक्ति हैं इसलिए वे जिन तो नहीं है, परन्तु जिन के प्रतिनिधि हैं।

श्री जवाहराचार्य ने तीर्थंकर द्वारा प्रतिपादित निर्ग्रन्थ धर्म को अंगीकार कर, अनेकान्त के तात्विक विवेचन को हृदय में धारण कर, जैन शास्त्रों के अनुसार उनकी विवेचना की।

वे प्राणि-मात्र के प्रति मैत्रीभाव के उद्‌गाता हैं। वे जैन शास्त्रों के सफल मीमांसक रहे हैं।

उन्होंने शास्त्रोक्त आचार के अनुरूप दिव्य जीवन जिया। वे सम्यक् ज्ञान युक्त श्रेष्ठ आत्मधर्म के धारक आचार्य रहे हैं।

जैनाकाश के गगन मंडल में जवाहर वह सूर्य-मणि है, जो जीवन के अन्धेरों को दूर कर उसे आलोक प्रदान करता है।

वे जैन जगत् तक सीमित विभूति नहीं थे क्योंकि ऋषभ से लेकर महावीर तक की परम्परा जैन-जगत तक सीमित परम्परा नहीं है।

वह तो जीवेतर परम्परा है—समस्त प्राणि-मात्र का कल्याण दया, करूणा के साथ जीवों के प्रति शुचिता का भाव। आत्मवत् आचरेत की भावना पुराणों से शास्त्रों से निकलकर जव आगम-ग्रंथों में परिष्कृत हुई तव यह उसी करुणा का विस्तार था। करुणा जव किसी जाति, सम्प्रदाय, क्षेत्र, काल, शरीर के भेद को पार कर जाती है, तब वह महावीर की करुणा वनती है। और इस करुणा के सतत् प्रवाह को जो आचार्य आत्मा में उतारकर उसका प्राणि-मात्र पर अभिसिंचन करता है, तव कहीं वह आचार्यश्री जवाहराचार्य जैसा सर्वप्रिय आचार्य वनता है।

अपने इसी वैशिष्ट्य के कारण वे, भारतीय युग धर्म प्रस्तुतिकर्त्ता जैन आचार्यों में विशिष्ट मार्ग प्रदर्शक के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं।

पूज्य आचार्यश्रीजी की जीवन यात्रा नवकार मंत्र के तीसरे पद की सजीव, प्रांजल तथा प्राणमयी तीर्थयात्रा है। नैष्ठिक ब्रह्मचर्य के रथ पर सत्य के ध्वज को लेकर अहिंसा के परम धर्म को अपनी आत्मा में स्थापित कर अचौर्य एवं अपरिग्रह के संदेश को जन-जन तक पहुँचाने वाले उस महामनीषी को शत-शत नमन है। वे शिक्षण संस्थाओं, आतुरालय, औषधि-भण्डार, ज्ञान-भण्डार जैसी समाजोपयोगी अनेक प्रवृत्तियों के प्रेरक रहे हैं। लोगों के हृदय पर शासन करने वाले अजातशत्रु की तरह जीने वाले महावीर के मार्ग पर चलने वाले इस आत्मरथी में आचार्य-परम्परा का एक चैतन्य मय नक्षत्र विराजित था। इसीलिए वे आचार्य रत्नों में सर्वोत्तम दीप्ति वाले एक अद्वितीय रत्न थे। हमने उन्हें महात्मा मोती का जवाहर कहा है। जैन शास्त्रों की एवं जैन धर्म की स्वाति नक्षत्रीय बूंद जब किसी श्रावक, श्राविका, साधु, साध्वी की मन सीपी में निर्झरित होती है, तब कहीं वह मोती बनती है। वह आकाश की देन है, परन्तु जब कोई कोयला धरती के गर्भ में सहस्रों वर्ष तप करता है, तब उसकी सारी श्यामलता, कालिमा निर्मूल हो जाती है, तब कहीं किसी आदिवासी अंचल में शोध के पश्चात् जवाहर का अभ्युदय होता है।

थांदला के इस सलोने हीरे का तराशना और उसे किसी महान-परम्परा में दीक्षित कर राष्ट्र धर्मी रूप देना, परम्परा तथा संस्कार का ही परिणाम है।

भारतीय समाज में महात्मा तिलक ने मदन मोहन मालवीय ने महात्मा गांधी ने और लोह पुरुष श्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने जवाहराचार्यजी में इस महान राष्ट्र की आत्मा की छवि के दर्शन किए, इसलिए जवाहराचार्य का विहार, उनका चातुर्मास, उनका प्रवचन, उनके उपदेश, भारत की आत्मा को आलोकित करने जैसा था। इसलिए वे अपने युग के राष्ट्राचार्य थे, जिनके पदचाप पर सुषुप्त राष्ट्र, शंखनाद कर अंगड़ाई लेता था। जिनके वस्त्रों के पहनाव से, खादी के धागे से राष्ट्र की अर्थव्यवस्था को सम्बल मिलता रहा; जिनकी वाणी से वर्ण भेद का विष सहज ही मधु संस्कृति में परिणत हो गया। जहां वे थम गए वहीं तीर्थ बन गया। तीर्थ जैन शास्त्रों का पारिभाषिक शब्द है।

वह आत्मशोधन की आध्यात्मिक-प्रक्रिया है, जिसमें युद्ध संघर्ष और विषमता, शांति सुख और समता में परिणत हो जाती है। □

मंगल-सन्देश

❑ तपस्वी रत्न श्री मगन मुनिजी ❑ मुनि नेमिचन्द्रजी ❑

यह जानकर अतीव प्रसन्नता है कि स्व. जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलालजी महाराज की पुण्य-स्मृति में स्व. सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया द्वारा स्थापित श्री जवाहर विद्यापीठ की स्वर्णजयन्ती मनाई जा रही है और इस अवसर पर एक स्मारिका भी प्रकाशित की जाएगी।

श्री जवाहर विद्यापीठ की स्थापना हुए पचास वर्ष होने जा रहे हैं। यह किसी भी संस्था की प्रौढ़ता तथा समृद्धि की निशानी है। यह संस्था के संस्थापक और संचालक की सुदृढ़ श्रद्धा, भावना और कार्यक्षमता की परिचायिका है। स्व. सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया की इस विद्यापीठ की स्थापना के पीछे यही भावना थी कि बालकों में स्व. पूज्यश्री के राष्ट्रीय, सामाजिक एवं पारिवारिक तथा धार्मिक विचारों का बीजारोपण किया जाए, उन्हें इन उत्तम विचारों से संस्कारित किया जाए, जिससे भविष्य में वे देश के होनहार राष्ट्रभक्त नागरिक बन सकें, समाज की उन्नति में अपना योगदान दे सकें और पारिवारिक जीवन में अपने उत्तम संस्कारों को सुरक्षित रख सकें। वैचारिक दृष्टि से विद्यार्थियों को समृद्ध बनाने हेतु स्व. श्री बांठियाजी ने इस विद्यापीठ के साथ एक पुस्तकालय की भी स्थापना की थी, ताकि विद्यार्थीगण केवल पाठ्यक्रम में निर्धारित पुस्तकें पढ़कर या केवल परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके ही न रह जाएँ किन्तु वे पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं धार्मिक विचारों से समृद्ध होकर अपने जीवन को सार्थक बनावें। साथ ही विद्यार्थियों के आचरण को तदनुरूप समृद्ध बनाने हेतु सेठ श्री चंपालालजी बांठिया ने धार्मिक क्रियाओं और परीक्षाओं द्वारा विद्यार्थियों का जीवन सैद्धान्तिक एवं आचारिक (थ्योरिटिकल एण्ड प्रेक्टिकल) दोनों दृष्टियों से उन्नत बनाने का उपक्रम किया था।

जिस महापुरुष की पुण्यस्मृति में विद्यापीठ स्थापित किया गया था, उनके विचार उस युग में, जबकि भारतवर्ष विदेशी सरकार की गुलामी की जंजीरों में जकड़ा हुआ था, राष्ट्रीय भावनाओं से ओत-प्रोत थे। वे स्वयं और उनके शिष्य प्रशिष्य खादी पहनते थे। इतना ही नहीं, इसी भीनासर में उन्होंने अपने जीवनकाल में स्थानांगसूत्र में भगवान् महावीर द्वारा प्ररूपित ग्राम धर्म, नगर धर्म, राष्ट्रधर्म, संघधर्म आदि दशविध धर्मों एवं धर्मनायकों की विशद रूप से सुन्दर व्याख्या प्रस्तुत की थी। जिसे सुन कर उस समय के कई श्रावक-श्राविकाओं ने खादी और राष्ट्रीयता की विचारधारा अपना ली थी। अतः श्री जवाहर विद्यापीठ की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर हम यही अपेक्षा रखते हैं कि इस पुनीत अवसर पर श्री जवाहर विद्यापीठ के सभी विद्यार्थियों को आमंत्रित करके स्व. आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज के राष्ट्रीयता, सामाजिकता, पारिवारिकता एवं धार्मिकता के उन उन्नत विचारों के संक्षिप्त सूत्र बनाकर तदनुरूप संकल्प कराया जाए कि हम अपना सारा जीवन इन्हीं विचार सूत्रों के

अनुरूप बिताएंगे। हमारा नम्र सुझाव है कि प्रतिवर्ष विद्यापीठ के स्थापना दिवस के अवसर पर इन प्रतिज्ञा सूत्रों को दोहराया जाए।

आशा है, विद्यापीठ की स्वर्ण जयन्ती के स्वर्णिम अवसर पर इन भावनाओं, संस्कारों और विचारधारा को क्रियान्वित करने का संकल्प करने से विद्यापीठ सर्वांगीण उन्नति के स्वर्ण शिखर को छू सकेगा; इसी मंगलमय धर्म सन्देश के साथ।

समारोह की सफलता की शुभ भावना व्यक्त करते हैं। □

प्रेषक—वसंतलाल पूनमचन्द भंडारी
अहमदनगर

युगदृष्टा जैनाचार्य : एक स्मृति

□ तोलाराम मित्री □

पूज्य श्रीमज्जैनाचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. का जैन-समाज में विशिष्ट स्थान है। उनका लम्बा कद, गौर वर्ण मन को मोहने वाला था। वि.सं. २००० की आषाढ़ शुक्ला अष्टमी तदनुसार दिनांक १० जुलाई १९४३ को मध्याह्न में आपका स्वर्गवास भीनासर में हुआ था। हालांकि उस समय मेरी उम्र करीब ७ वर्ष की होगी फिर भी मुझे अच्छी तरह से सारी बातें याद है। आपकी अन्तिम-यात्रा एक स्मृति बन गई है।

अन्तिम समय में आपका पार्थिव शरीर 'बांठिया-हाल' में पाटे पर खंभे के सहारे इस तरह विराजित किया गया कि जैसे साक्षात् विराजमान हैं। यह खबर पूरे भारत में बिजली की तरह फैल गई। दर्शनार्थियों का तान्ता लग गया। आस-पास एवं दूर-दूर से हजारों लोग खबर सुनते ही अपने धर्माचार्य का अन्तिम-दर्शन करने एकत्रित हुए। दूसरे दिन सुबह से ही लोगों की भीड़ जमा होने लगी। चांदी की विशेष वैकुण्ठी (विमान) तैयार कराई गई थी। यह अन्तिम-यात्रा गंगाशहर-भीनासर के प्रमुख मार्गों से होती हुई श्मशान पहुंची। राज्य की तरफ से बैंड-बाजे एवं ऊंटों पर नगाड़ों की व्यवस्था थी। बैंड-बाजों और नगाड़ों के तुमुलघोष के बीच गुरुदेव की जयजयकार के गगनभेदी नारे। सारा वातावरण श्रद्धा और भक्ति से आप्लावित। श्रद्धातिरेक में चांदी के सिक्कों की उछाल की गयी। मौसम भी गर्मी का था। मगर उस दिन तो प्रकृति ने भी खूब साथ दिया। सुबह से ही मंद-मंद बूंदों के साथ बादल भी श्रद्धाञ्जलि प्रकट कर रहे थे। अपने धर्माचार्य को खोकर आबाल-वृद्ध सभी के मन में अपार-उदासी थी। पूज्यश्री का जयघोष के बीच चन्दन, घी, कपूर और खोपरों से अग्नि-संस्कार किया गया। ऐसे महापुरुष को श्रद्धापूर्वक कोटिशः श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ। □

आओ आत्मावलोकन करें

❑ कुसुम जैन ❑

आज सर्वत्र मूल्यहीनता व्याप्त होती जा रही है और उसके कारण पनप रही है अमानवीयता। मनुष्यता का संकट निरन्तर गहराता जा रहा है। इन सबका मूल कारण और कुछ नहीं मात्र यह है कि मनुष्य अपने जीवन के उन्हीं मूल आदर्शों से बहुत तेजी से विमुख होता जा रहा है, जो सदा से जीवन को मार्गदर्शन देते रहे और उसे संचालित करते रहे हैं। 'मुंह में राम, बगल में छुरी' वाली बात अब केवल कहावत नहीं रही, आज के मनुष्य की पहचान बनती जा रही है। आज अनेकों असामाजिक तत्त्वों की पैठ सामाजिक जीवन में बढ़ती जा रही है। आज हम देखते हैं कि हमारा धर्म व आध्यात्मिकता केवल सैद्धान्तिक चर्चाओं, क्रियाकांडों व प्रदर्शनों में ही सिमट गया है। संयमी व नैतिक जीवन के रूप में इसकी अभिव्यक्ति नहीं है और इस भेड़चाल में हम अपने विवेक को निरन्तर पंगु बनाते चले जा रहे हैं।

ऐसे परिवेश में आचार्य श्री जवाहरलालजी महाराज साहब की याद आ जाना स्वाभाविक है। मन कह उठता है—काश! आज आचार्यश्री हमारे बीच होते। तभी उत्तर मिलता है अरे भाई! क्या सोच रहा है? आचार्यश्री तो सदैव हमारे बीच हैं और रहेंगे। जब तक उनका साहित्य हमें उपलब्ध है, वे सदा हमारे बीच रहेंगे और सदा हमें अन्धकार से प्रकाश की ओर जाने का सत्पथ दिखलाते रहेंगे।

विचार आ रहा है क्या हम आचार्यश्री को सच्ची श्रद्धाञ्जली दे पाने में समर्थ हैं। क्या हम उसके अधिकारी भी हैं? हम विचार करें, एक क्षण रुककर आत्मचिन्तन करें कि हमारे धन, हमारे बल और हमारे मन का कितना भाग सदुपयोग में बीत रहा है। हमें पूरी ईमानदारी के साथ सोचना होगा? हम 'महावीर' के वंशज कहलाने के कितने अधिकारी हैं? 'महावीर' ने अपनी अहिंसा, अपरिग्रह से विश्व को एक ऐसा स्वच्छ समाजवाद दिया जिसको हम निश्छल भाव से एक अंश रूप भी स्वीकारें, अपने जीवन में उतारे तो हम सारे द्वन्द्वों से छुटकारा पा सकते हैं। आज की सबसे बड़ी आवश्यकता है कि हम सभी संगठित होकर एक मंच पर आयें और महावीर की वाणी के यथार्थ को समझें और उस पर चलने का सही अर्थों, सही सन्दर्भों में प्रयास करें। अपने स्वार्थों की पूर्ति, थोथी प्रशंसा और वाहवाही लूटने की ललक को समाप्त कर महावीर के नाम पर टुकड़ों में बंटे समाज को जोड़ने की प्रक्रिया को प्रारम्भ करें। आज हम अपने स्वार्थों की संकरी गलियों में महावीर को घेर कर उनके विराट व्यक्तित्व को बौना करने का गर्हित प्रयास कर रहे हैं। हमें स्वार्थ और संकीर्णता के चक्रव्यूह को भेद कर बाहर आना ही होगा तभी हम आचार्यश्री को श्रद्धांजलि देने के पात्र हो सकेंगे। ❑

आध्यात्मिक राष्ट्र-नायक

❑ भंवरलाल कोठारी ❑

युगद्रष्टा, युगस्रष्टा, परम-प्रतापी श्रीजवाहराचार्य इस युग की एक महान विभूति थे। वे तेजस्वी व्यक्तित्व, ओजस्वी वाणी और प्रखर साधना के धनी थे। वे जैन जगत् के ज्योतिर्धर जवाहर तो थे ही भारतीय संत मनीषा के जाज्वल्यमान चिन्तामणि रत्न थे। आध्यात्मिकता से ओत-प्रोत राष्ट्र-नायक थे। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, राष्ट्र-जागरण का, देश को स्वाधीन-स्वावलंबी बनाने का जो कार्य राजनैतिक, सामाजिक, राष्ट्रीय स्तर पर कर रहे थे; आत्मचेता जवाहराचार्य ने वही कार्य जन-जन की चेतना जगाकर आध्यात्मिक स्तर पर किया था। उन्होंने मशीनों से वने चर्बीयुक्त महाआरम्भी मील के विदेशी कपड़ों का बहिष्कार करने और हाथ-कते हाथ-बुनें अल्पारंभी खादी व स्वदेशी का उपयोग करने की जन-जन को प्रेरणा दी। स्वदेशी के संबंध में सन् १९२० में उन्होंने यह उद्घोषणा की—'तुम जिस देश में जन्मे हो, जहाँ के अन्न, जल और वायु से तुम्हारे शरीर का पालन-पोषण हुआ है, उसी देश में उत्पन्न होने वाली वस्तुओं के अतिरिक्त दूसरी वस्तुओं का तुम्हें त्याग करना चाहिये। उस वस्तु से तुम्हारा जीवन निर्वाह सरलता से हो सकेगा और साथ ही तुम महाआरम्भ से भी बच जाओगे।'[1] स्वरूप एवं स्वभाव में रमण करने वाले आत्म-साधक जवाहराचार्य खादी को अहिंसक वस्त्र मानते थे। इसीलिए हिंसा-त्याग की भावना से उन्होंने स्वयं चर्बी लगे मिल के वस्त्रों का त्याग किया और देश के दिग्-दिगन्त तक फैले हुए सहस्त्रों सहस्त्र अनुयाइयों को भावपूर्वक त्याग करवाया।

महात्मा गांधी की ही तरह जवाहराचार्य ऊँच-नीच, अस्पृश्यता के प्रखर विरोधी और सामाजिक समरसता, समता के प्रवल समर्थक थे। नासिक प्रवास के समय सन् १९२३ में अपने प्रेरक प्रवचनों में उन्होंने कहा—

'शूद्र आपके समाज की नींव हैं। महल का आधार नींव है। नींव में अस्थिरता आ जाने से महल स्थिर नहीं रह सकता। अगर तुम ने शूद्रों को अस्थिर कर दिया —विचलित कर दिया तो तुम्हारे समाज की नींव हिल उठेगी। तुम्हारी संस्कृति धूल में मिल जायगी।'......'अन्त्यजों के प्रति दुर्व्यवहार करके आप धर्म का उल्लंघन करते हैं, देश और जाति को दुर्बल बनाते हैं, अपनी शक्ति को क्षीण करते हैं और अपनी ही आत्मा को गिराते हैं।'[2]

अस्पृश्यता पर इतना करारा प्रहार कोई निस्पृह राष्ट्र-संत ही कर सकता था।

राष्ट्र-उन्नायक जवाहराचार्य स्वाधीनता के उद्घोषक थे। बन्धन-मुक्तता के लिए स्वभाव स्थिति आवश्यक है। स्वभाव में वही रमण कर सकता है जो स्वाधीन हो—'स्व' के अधीन हो। देश उस समय पराधीन था। अंग्रेजों का शासन था। आजादी का आन्दोलन जोरों पर था। प्रायः सभी राष्ट्रीय नेता जेलों में बन्द थे। पूज्य श्री अपने

प्रवचनों के माध्यम से धर्म और अध्यात्म के द्वारा राष्ट्रीय जागरण का शंखनाद कर रहे थे। शुद्ध खद्दर के वस्त्र, राष्ट्रीयता से ओत-प्रोत ओजस्वी वाणी और श्रोताओं पर हो रहे उसके चमत्कारी प्रभाव से अंग्रेज सरकार चिन्तित थी। सरकारी गुप्तचर पूज्यश्री के आगे पीछे घूमने लगे थे। श्रावकों को भय होने लगा कि कहीं पूज्यश्री को गिरफ्तार नहीं कर लिया जाय। उन्होंने प्रवचनों को केवल धार्मिक बातों तक ही सीमित रखने का पूज्यश्री से निवेदन किया। पर पूज्यश्री तो महावीर के पथानुगामी थे। उनके मन में न किसी के प्रति द्वेष और वैर-विरोध का भाव था और न उन्हें किसी से किंचित् भी भय था। वे सत्य मार्ग के निर्भय पथिक थे। उन्होंने श्रावकों को कहा—

'मैं अपना कर्त्तव्य भली-भाँति समझता हूँ। मुझे अपने उत्तरदायित्व का भी पूरा भान है। मैं जानता हूँ कि धर्म क्या है? मैं साधु हूँ। अधर्म के मार्ग पर नहीं जा सकता। किन्तु परतंत्रता पाप है। परतन्त्र व्यक्ति ठीक तरह धर्म की आराधना नहीं कर सकता। मैं अपने व्याख्यान में प्रत्येक बात सोच-समझ कर तथा मर्यादा के भीतर रह कर कहता हूँ। इस पर यदि राजसत्ता हमें गिरफ्तार करती है तो हमें डरने की क्या आवश्यकता है? कर्त्तव्य पालन में डर कैसा? साधु को सभी उपसर्ग व परिषह सहने चाहिए, अपने कर्त्तव्य से विचलित नहीं होना चाहिए। सभी परिस्थितियों में धर्म की रक्षा का मार्ग मुझे मालूम है। यदि कर्त्तव्य का पालन करते हुए जैन समाज का आचार्य गिरफ्तार हो जाता है तो इसमें जैन समाज के लिए किसी प्रकार के अपमान की बात नहीं है। इसमें तो अत्याचारी का अत्याचार सभी के सामने आ जाता है।'[३]

पूज्य श्री का यह उद्दाम तेजस्वी व्यक्तित्व उन्हें राष्ट्र-संत से आध्यात्मिक राष्ट्र-नायक के चरम शिखर तक पहुँचाता है।

समाज-उद्धारक पूज्यश्री शुद्ध, सात्विक, धार्मिक जीवन की स्थापना हेतु सामाजिक कुरीतियों व अन्धविश्वासों पर भी कड़े शब्दों में प्रहार करते थे। बाल-वृद्ध व बेमेल विवाह, शादियों पर वैश्या-नृत्य, भड़कीले वस्त्राभूषण, प्रदर्शन, दिखावा, दहेज, कन्या-विक्री, मृत्युभोज आदि पर जन-चेतना जगाने वाले उनके मार्मिक प्रवचनों में एक परिवर्तनकारी अन्तरबोध रहता था। जहाँ भी उनका पदार्पण होता, समाज-सुधार, प्रामाणिकता पूर्वक व्यापार, शुद्ध-जीवन व्यवहार, पशु-पक्षी-हत्या/क्रूरता का परित्याग व जीवदया-गोरक्षा का एक रचनात्मक वायुमंडल सृजित होने लगता था। ब्याजखोरी को भी वे हिंसा की श्रेणी का सामाजिक अपराध मानते थे। महाराष्ट्र के नान्दुर्डी कस्बे में दिनांक २५-२-२४ को पूज्यश्री के प्रवचनों के प्रभाव से एक लिखित करार करके साहूकारों ने चक्र वृद्धि ब्याज लेने का त्याग किया और जैनेत्तर भाइयों ने पशुबलि व जीव हिंसा नहीं करने का व्रत अंगीकार किया। करार का एक पैरा यहाँ अवलोकनार्थ उद्धृत है —

'शस्त्र से जिस प्रकार हिंसा होती है, उसी प्रकार ही लोगों के पास से अधिक ब्याज वसूल करने अथवा अन्याय पूर्वक दूसरे की संपत्ति हजम करने से किसानों के गले कटते हैं। ऐसी दशा में बेचारे किसान के स्त्री-बच्चे मारे-मारे फिरते हैं।' यह बात जैनाचार्य पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज के उपदेश से हम लोगों के समझ में आ गई। अतः जैन-धर्म की पवित्र आज्ञा का अनुसरण करके हम नान्दुर्डी निवासी जैन-धर्मावलम्बी लोग आज से अधिक ब्याज लेने, अधिक नफा लेने अथवा अन्यायपूर्वक दूसरे की संपत्ति को हजम करने के दुष्कृत्यों को अपनी इच्छा से छोड़ते हैं।'[४]

इसी प्रकार हिंगाणे से गाँव के पंचों का यह ठहराव पूज्यश्री द्वारा गाँव-गाँव में चलाई गई माँस, मदिरा, जीवहिंसा त्याग की वेगवान मुहिम की एक रोमांचक झलक प्रस्तुत करता है —श्री समस्त फूलमाली पंच, लोहार पंच, सुथार पंच, कुम्भार पंच, सुनार पंच, शींची पंच, कुनबी पंच, कोली पंच मौजे हिंगोणे बुर्द परगना येरंडोल,

आज मिती जेष्ट शुक्ल ३ शके १८४६ तारीख ५ माहे जून सन् १६२४ के दिन श्री १००८ श्री पूज्यश्री जवाहरलालजी महाराज ठाणे १० के उपदेश से हम सार्वजनिक पंच गण कबूल करते हैं कि हम कभी भी न तो जीव-हिंसा करेंगे, न माँस भक्षण ही करेंगे। शराब को न तो घर लावेंगे, न पीएंगे। ऐसा हम सार्वजनिक पंचों ने महाराज साहब के सामने स्वीकार किया है। इसके विरुद्ध यदि कोई आदमी ये काम करेगा, तो उसे १५ रु. दंड दिया जावेगा। ऐसा ठहरा है। इस ठहराव के अनुसार व्यवहार न करने वाले अर्थात् मदिरा-मांस आदि का सेवन करने वाले की बात का यदि कोई मनुष्य अनुमोदन करेगा, तो वह भी दंड का भागी होगा। यह लेख हम सार्वजनिक पंचों ने राजी-खुशी लिखा है।'

क्रांति-द्रष्टा श्री जवाहराचार्य दृढ़धर्मा, कठोर संयमी, आत्मसाधक युग-प्रवर्तक आचार्य थे। संयम-साधक श्रमण जीवन में किंचित् शिथिलता भी उन्हें स्वीकार नहीं थी। साधु साधक ही रहे, प्रचारक नहीं बने, इस दृष्टि से उन्होंने साधु और श्रावक के मध्य एक बीच का ब्रह्मचारी वर्ग बनाने की योजना प्रस्तुत की। साधुओं को पंडितों से पढ़ाना उस समय दोष-युक्त कार्य-माना जाता था। उन्होंने इस पूर्व परंपरा में संशोधन कर संत-सती वर्ग को गृहस्थ अध्यापकों से ज्ञानार्जन करने की छूट देने का क्रांतिकारी निर्णय किया। इसी प्रकार खेती-ग्रामोद्योगों को आध्यात्मिक परिशुद्धता के साथ अल्पारंभ की श्रेणी में रखकर आपने राष्ट्रीय हित का युगान्तरकारी कार्य किया।

जीवनोन्नायक, तपोधनी, परम प्रतापी आचार्यश्री का बहुआयामी व्यक्तित्व हमारे लिए और आने वाली पीढ़ियों के लिए अत्यन्त प्रेरणादायी है और रहेगा। बीकानेर-गंगाशहर-भीनासर की त्रिवेणी पर पूज्यश्री की असीम कृपा थी। उन्हें आचार्य पद भीनासर में प्राप्त हुआ। आचार्य पद प्राप्ति के तत्काल पश्चात् उनका संवत् १६७७ का पहला चतुर्मास बीकानेर में हुआ। संवत् १६८४ से १६८७ तक के चार चतुर्मास क्रमशः भीनासर, सरदारशहर, चूरु और बीकानेर में हुए। संवत् १६६८ में उनका पुनः बीकानेर पदार्पण हुआ। उस जन-वल्लभ, चरमोत्कर्षी महात्मा के अंतिम दो वर्षों का जीवंत सान्निध्य त्रिवेणी संघ को भीनासर की पुण्यधरा पर प्राप्त हुआ। इसी पावन भूमि पर उन्होंने इस जीवन की अंतिम श्वास ली। यह धर्म-धरा ज्योतिर्धर जवाहर का शाश्वत ज्योति केन्द्र बन गई। उनकी स्मृति में संस्थापित जवाहर विद्यापीठ से दिग्-दिगन्त को ज्योतिर्मान करने वाली उस जैन भाष्कर की ज्ञान-किरणें 'जवाहर किरणावलियां' आज भी चारों ओर प्रसारित हो रही हैं। यह शाश्वत साहित्य है जो सभी पीढ़ियों, वर्गों, समुदायों के पाठकों के अन्तरमन को स्पर्श करता है, झकझोरता है। उनमें ऊर्जा का संचार करता है। उन्हें जीवन्त बनाता है। आज पार्थिव शरीर पिंड में न होते हुए भी वे सदा-सर्वदा हमारे बीच में जीवन्त हैं। जीवन्तता के उस शाश्वत स्रोत को, उस युगपुरुष को हम श्रद्धाभाव से नमन करते हैं। उन्हें हमारा वंदन! अभिनन्दन!

संदर्भ :

जैनाचार्य-वर्य पूज्य जवाहरलालजी की जीवनी, प्रथम संस्करण-संवत् २००४ प्रकाशक-चम्पालाल बांठिया श्री जवाहर जीवन-चरित्र प्रकाशन समिति, श्री श्वे. सा. जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर, प्रथम भाग, तीसरा अध्याय, आचार्य जीवन, चातुर्मास १६७७ 'मिल के वस्त्रों का परित्याग' शीर्षक पृष्ठ १२२

वही—चातुर्मास १६८०, 'अस्पृश्यता', पृष्ठ १४३-१४४

वही—चातुर्मास १६८८, 'जमुनापार-गिरफ्तारी की आशंका' 'पूज्यश्री का सिंहनाद'—पृष्ठ १६४

वही—चातुर्मास १६८०, 'ब्याजखोरी का निवारण'-पृष्ठ १४५

वही—चातुर्मास १६८०, पृष्ठ १४६

श्रीमद् जैनाचार्य जवाहरलालजी और गाँधी-विचार

❑ डॉ. धर्मचन्द्र ❑

भारतीय मनीषा की ब्राह्मण और श्रमण दोनों ही धाराओं का अन्तिम लक्ष्य प्रभु-प्राप्ति, निर्वाण या मोक्ष है। वैराग्य, संन्यास और अन्ततः निवृत्ति द्वारा मुक्ति प्राप्ति धर्म-साधना का हेतु है। समस्त प्रवृत्तियाँ इस 'निवृत्ति' के लिए होती हैं। श्रमण परम्परा और विशेष रूप से जैन धर्म निवृत्ति-मूलक धर्म माना जाता है।

आचार्य विनोबा भावे के अनुसार इस मुख्य वस्तु (निवृत्ति) की पकड़ न आने के कारण हिन्दुस्तान में जहाँ आत्म-चिन्तन की प्रेरणा मिलती है, वहाँ लोग अप्रवृत्ति की ओर झुकते हैं। लोग कर्म छोड़ते हैं, लोकसम्पर्क छोड़ते हैं, मौन रखते हैं, एकान्त में जाते हैं। वे किसी न किसी प्रकार अप्रवृत्ति की तरफ जाते हैं पर मानते हैं कि 'निवृत्ति' की तरफ जा रहे हैं। भारत में अप्रवृत्ति का अर्थ निवृत्ति हो गया। प्रवृत्ति जोरदार क्रिया है तो अप्रवृत्ति जोरदार प्रतिक्रिया है।

निवृत्ति, अप्रवृत्ति नहीं बल्कि कर्म की सहज स्थिति है। निस्पृह और निरासक्त भाव से की गई क्रिया है। गीता में निष्काम-कर्म को निवृत्ति के रूप में स्थापित किया गया है। इसीलिये गीता में स्थितप्रज्ञ की जीवन्त मूर्त्ति खड़ी की गई है। निवृत्ति और अहिंसा, अकर्मण्यता नहीं, अपितु जीवन की पूर्णता के लिये की गई प्रवृत्ति है।

जीव और जीवन की समग्रता और विकास, व्यष्टि और समष्टि के जीवन के अभ्युदय और मंगल, लौकिक और लोकोत्तर जीवन में अभीष्ट और श्रेय की उपलब्धि से जीवन की पूर्णता सिद्ध होती है। धर्म पूर्णता की सिद्धि का साधन है।

धर्म की दिशा सामान्यतः व्यक्ति के द्वारा इस पूर्णता की सिद्धि रहा है। किसी व्यक्ति विशेष की उपलब्धि के अनुगमन द्वारा सामूहिक रूप से धर्म साधना के हेतु से संघ व समुदायों की आवश्यकता तो स्वीकार की गई परन्तु जीव की मुक्ति ही साध्य रही, सम्पूर्ण जीवन की मुक्ति लक्ष्य नहीं बनी। विभिन्न मान्यताओं व उपासना मार्गों के अनुसार सम्प्रदाय विकसित हुये। उनके आधार पर समुदाय भी बने। सारे संसार में धर्माधारित समाज स्थापित हुये। उनके अनुरूप उनका जीवन-दर्शन जीवन-शैली बनी।

सत्य, अहिंसा, संयम और मुक्ति सभी भारतीय धर्मों के मूल में शाश्वत तत्त्व हैं। समस्त जीवों और जीवन की प्रतिष्ठा, निष्ठा और एकता का भाव अन्तर्निहित है। इन्हीं शाश्वत मूल्यों के द्वारा भारतीय समाज की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक व्यवस्थायें विकसित और संचालित होती रही हैं। व्यष्टि और समष्टि के जीवन-आदर्श और आकांक्षायें उनकी पूर्त्ति के साधन एवं व्यवहार के नैतिक और भौतिक मापदण्ड निर्धारित, नियमित हुये हैं।

भगवान महावीर ने इन शाश्वत मूल्यों, अहिंसा की सूक्ष्मता और व्यापकता को अपने जीवन और कर्म से नये अर्थ और सन्दर्भ प्रदान किये। अतिशय भोग, सम्पत्ति व सत्ता की अमर्यादित इच्छा, उनकी पूर्ति के लिये हिंसा के आचरण को धार्मिक मान्यता, जाति और लिंग के आधार पर भेद, दास-दासी प्रथा आदि भीषण विकृतियों से जर्जरित होते व्यक्ति और समाज की रुग्ण व्यवस्था के उपचार हेतु २५०० वर्ष पूर्व अहिंसा का प्रयोग किया। जीवन की समस्याओं के समाधान में अहिंसा की शक्ति प्रभावशीलता व व्यवहार्यता को प्रमाणित किया। आत्मा की स्वाधीनता, पुरुषार्थ की अनिवार्यता, कुल, जाति और लिंग के भेद के स्थान पर समस्त मानव जाति ही नहीं प्राणी मात्र की समान सत्ता और जीवन के अधिकार, सत्ता, सम्पत्ति और शक्ति के संग्रह और भोग के स्थान पर संयम और अपरिग्रह को प्रतिष्ठित किया। वैयक्तिक स्तर पर किये अहिंसा के प्रयोग से पूरे समाज के मूल्यों में क्रान्तिकारी परिवर्तन हुआ। अहिंसा को जीवन और जगत की विधायक शक्ति के रूप में स्वीकृति मिली। यह वीरवृत्ति का पर्याय वन गई और वर्द्धमान महावीर बन गये, अहिंसा महावीर के मार्ग—जैन दर्शन की आधार भित्ति है।

२५०० वर्ष पूर्व हुआ यह प्रयोग ठहर गया शास्त्र और सम्प्रदाय में बद्ध होकर। निवृत्ति, अप्रवृत्ति के रूप में व्यवहृत होने लगी। अहिंसा नकारात्मक हो गई और धर्म का अर्थ एकांगी हो गया लोकोत्तर मोक्ष के साधन के रूप में। महावीर की वीरवृत्ति अहिंसा पर कायरता, अकर्मण्यता और धर्म पर सामान्यतः और जैन धर्म पर विशेषतः जीवन से पलायन का आक्षेप सर्वथा निराधार और अनुचित नहीं कहा जा सकता।

महावीर के २५०० वर्ष बाद अहिंसा और सत्य का अभूतपूर्व प्रयोग भारतीय स्वाधीनता के संग्राम के काल में महात्मा गांधी के द्वारा किया गया। भारत की स्वाधीनता का संग्राम धर्म के शाश्वत मूल्यों से अनुप्राणित और अर्जित रहा है। इसे आध्यात्मिक महापुरुषों और समुदायों से शक्ति गति और दिशा मिली है। महात्मा गांधी ने परतन्त्र भारत की मुक्ति को अपनी आध्यात्मिक मुक्ति के लिये अनिवार्य माना। मात्र जीव (एक व्यक्ति की, 'स्व' की) मुक्ति के स्थान पर सत्य व अहिंसा के साधनों के द्वारा पूरे जीवन (समष्टि की, राष्ट्र की 'सर्व' की) की स्वाधीनता का सामूहिक स्तर पर महात्मा गाँधी द्वारा किया गया प्रयोग मानव सभ्यता, धर्म और संस्कृति के क्षेत्र में अद्वितीय है।

स्वाधीनता को मात्र राजनैतिक आजादी तक सीमित न रखकर समग्र जीवन की स्वाधीनता का व्यापक लक्ष्य, ध्येय वन गया। एक व्यक्ति की साधना, एक राष्ट्र की साधना बन गई।

स्वराज्य की स्थापना के लिए शस्त्र व साधनों के रूप में सत्य और अहिंसा के अनूठे व साहसिक प्रयोग के प्रभाव से व्यष्टि और समष्टि दोनों के स्तर पर जीवन मूल्यों और जीवन शैली में युगान्तरकारी परिवर्तन हुये। व्यक्ति और राष्ट्र के जीवन का कोई भी क्षेत्र प्रभावित हुये बिना नहीं रहा।

सत्य, अहिंसा, स्वाधीनता, सत्याग्रह, असहयोग, स्वदेशी, स्वावलम्बन, श्रम, सेवा और त्याग, सामाजिक समरसता, सम्पत्ति और स्वामित्व, के नये अर्थ और मूल्यों की स्थापना हुई। साध्य और साधन की शुद्धता वैयक्तिक और सार्वजनिक जीवन की पवित्रता, विचार, वाणी और आचार की एकता के आदर्श स्थिर हुये। इन मूल्यों और आदर्शों के अनुरूप व्यक्ति और संस्थायें तथा उनका चरित्र विकसित हुआ। स्वतन्त्रता के संघर्ष काल को गाँधी युग कहना अत्युक्ति नहीं है। इस युग पुरुष के प्रयोगों से निवृत्ति और अहिंसा की विधायक पूर्णता प्रकट हुई और अहिंसक शक्ति का सार्वभौम प्रभाव मानवीय सोच व समझ पर पड़ा।

गाँधीजी ने आत्मिक स्वतन्त्रता के लिये राष्ट्रीय स्वाधीनता को साधन बनाकर समूचे संघर्ष क आध्यात्मिक साधना बना दिया। इसके प्रभाव से अनेकानेक अध्यात्म साधकों को भी प्रेरणा और दिशा मिली।

महात्मा गाँधी जैन मुनि बेचर स्वामी व श्रीमद् राजचन्द्रजी आदि से भी प्रभावित रहे हैं वहीं महात्म गाँधी और उनके प्रयोगों से जैन धर्माचार्य भी प्रभावित हुये विना नहीं रह सके। महात्मा गाँधी और जैन आचार श्री जवाहरलालजी समकालीन हुये हैं। आचार्य श्री जवाहरलालजी उन विरल एवं विलक्षण सन्तों में अद्वितीय जिन्होंने अपने शाश्वत सिद्धान्तों की, युगीन वास्तविकताओं के सन्दर्भ में सम्यक् व्याख्या की और जैन साधु गृहस्थ समाज को स्वाधीनता के मूल्यों के अनुरूप आचरण करने के लिये प्रेरित किया। इन मूल्यों की पूर्ति को ध साधना के रूप में स्वीकार करने के लिए शास्त्रीय मर्यादाओं को विस्तार देकर समस्त अनुयायिओं को रूढ़िगत वर्जनाओं से मुक्त करने की दृष्टि व दिशा देने का क्रान्तिकारी साहसिक प्रयास किया।

धर्मनायक आचार्य श्री जवाहरलालजी और राष्ट्रनायक महात्मा गाँधी दोनों नायकों में विचार साम्य के स्पष्ट दर्शन होते हैं।

झूठ, छलकपट और हिंसा की पर्याय मानी गई राजनीति को सत्य और अहिंसा के प्रयोग का माध्यम और राष्ट्रकार्य को अपनी आध्यात्मिक मुक्ति का साधन महात्मा गाँधी ने बनाकर गृहस्थ जीवन में संन्यास धर्म की मर्यादा स्थापित की। आचार्यश्री ने संन्यस्त धर्माचार्य होते हुये, धर्म साधना की सीमाओं को विस्तार दिया, राष्ट्रकार्य को अध्यात्म साधना का आधार देकर बल दिया।

लौकिक जीवन से परे लोकोत्तर जीवन तक सीमित व संकुचित धर्म की रूढ़िगत एकांगिता के स्थान पर समग्र जीवन-धर्म की व्याख्या लौकिक धर्म एवं लोकोत्तर धर्म के रूप में की। सूत्र चारित्र धर्म (लोकोत्तर धर्म), बिना राष्ट्रधर्म (लौकिक धर्म) के टिक नहीं सकता। अतएव सूत्र चारित्र धर्म का पालन करने के लिये राष्ट्रधर्म का भी पालन करना आवश्यक है। किसी भी अवस्था में राष्ट्र धर्म का निषेध नहीं किया जा सकता। केवल सूत्र चारित्र धर्म को धर्म समझना और राष्ट्र धर्म को धर्म न मानना, मकान की नींव खोदकर उसे स्थिर करने अथवा वृक्ष की जड़ उखाड़कर उसे हरा-भरा बनाने के समान है।' (आ.ज.ला.)

आत्म कल्याण में तत्पर (साधु और श्रावक) रहने वालों के लिये कुल, ग्राम, नगर व राष्ट्र धर्म (लौकिक धर्म) का पालन करना आवश्यक है। बिना इन धर्मों के पालन के शुद्ध आचार धर्म संभव नहीं है। भगवान महावीर कैवल्य प्राप्ति के बाद मौन होकर एकान्त में नहीं बैठ गये अपितु लोकहित में, समष्टि के हित में देशा-देशान्तर में भ्रमण करके मोक्ष का राजमार्ग बतलाने में सक्रिय रहे। भगवान ऋषभ देव ने भी अपने जीवन का बहुतांश लोक जीवन व लोक धर्म के विकास में लगाया।'

आचार्यश्री ने सदैव राष्ट्रभाव और राष्ट्र धर्म के पालन की प्रेरणा दी। कहा कि राष्ट्र की रक्षा में सबकी रक्षा है और राष्ट्र के विनाश में सबका विनाश है। मातृभूमि भारत के सम्मान और गौरव की रक्षा और उसकी मुक्ति के लिये स्वदेशाभिमान, स्वार्पण और सेवा के सूत्र स्वीकार करने की आवश्यकता है।

प्रथम गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने बीकानेर रियासत के प्रधानमंत्री की हैसियत से सर श्री मनुभाई मेहता के लन्दन प्रस्थान के अवसर पर मनुभाई को दिया आशीर्वाद रूप उपदेश आचार्यश्री की राष्ट्र की परतन्त्रता की पीड़ा और स्वाधीनता की चाह को प्रकट करता है।

'जहाँ परतन्त्रता है वहाँ अराजकता है, और जहाँ परतन्त्रता-जन्य हाहाकार मचा होता है वहाँ धर्म को कौन पूछता है? गुलाम और अत्याचार पीड़ित जनता में वास्तविक धर्म का विकास नहीं होता, इसलिये धार्मिक विकास के लिये स्वातन्त्र्य अनिवार्य है...।

हम परमात्मा से प्रार्थना करते हैं कि उन्हें (श्री मनुभाई को) ऐसी सद्‌बुद्धि प्राप्त हो, जिससे वे सत्य के पथ पर डटे रहें।..... सर मनुभाई मेहता को ऐसी शक्ति प्राप्त हो कि वे इंग्लैण्ड जाकर गोलमेज कान्फ्रेंस में अपने सम्पूर्ण साहस का परिचय दें।'

राष्ट्र की स्वाधीनता के लिये सत्य, सत्याग्रह और असहयोग को धार्मिक एवं नैतिक आधार देकर पुष्ट किया। 'सत्य एक ईश्वरीय शक्ति है जो विजयिनी हुये बिना नहीं रह सकती। चाहे सारा संसार पलट जाये। सत्य अटल रहेगा। सत्य को कोई बदल नहीं सकता। शास्त्रानुसार और अन्तरतर के संकेत के अनुसार जो सत्य है उसी को विजयी बनाना बुद्धिमान का कर्त्तव्य है और सत्य की विजय में ही कल्याण है। मनुष्य को हर हालत में सत्य का पालन करना चाहिये। सत्य का पालन न करने के कार्य, चाहे वे कैसे भी हों, नाटक के सदृश हैं। सत्य के बिना कभी कोई वस्तु टिक नहीं सकती।'

'असत्य और अन्याय के प्रति मनुष्य का असहयोग करना आवश्यक है। उसी प्रकार लौकिक नीतिमय व्यवहारों में अगर राज्य शासन की ओर से अन्याय मिलता हो तो ऐसी दशा में राज्य भक्तियुक्त सविनय असहकार-असहयोग करना प्रजा का मुख्य धर्म है। राजा के भय से अपकारक कानून शिरोधार्य करना धर्म का अपमान करना है। धर्मवीर पुरुष अपकारक कानून को ही नहीं ठुकराता, अपितु राजा या प्रजा के किसी भाग द्वारा भी अगर ऐसा कानून बनाया गया हो तो उसे भी उखाड़ फेंकने की हिम्मत रखता है।'

'सच्चा असहयोगी कभी व्यक्ति विशेष की अवज्ञा नहीं करता। असहयोगी अपनी सम्पूर्ण शक्ति लगाकर असहयोग करता है, अन्यायी को सहयोग न देना भी अन्याय के प्रतिकार के अनेक रूपों में से एक है। असहयोग प्रत्येक मनुष्य का न्यायसंगत अधिकार है; यदि उसकी सब शर्तें यथोचित रूप से पालन की जायें?

'राजा अर्थात् देश की सुव्यवस्था का विरोध न करना, यह शास्त्र का आदेश है। मगर यदि राजा अनीति, स्वार्थ से राज्य व्यवस्था को दूषित करता हो तो उसके विरुद्ध आन्दोलन करना जैन-शास्त्रों के विरुद्ध नहीं है। जैन-शास्त्र ऐसे आन्दोलनों का निषेध नहीं करते!'

राष्ट्रभाव, स्वदेशाभिमान, स्वदेशी, श्रम और अन्त्यजोद्धार के द्वारा देशवासियों को स्वाधीनता के लिये सक्षम बनाने के आधारभूत रचनात्मक कार्यों को आचार्यश्री ने प्रेरित एवं पुष्ट किया। राष्ट्र प्रेम और देश भक्ति नागरिक के दैनंदिन जीवन व व्यवहार से प्रमाणित होनी चाहिये। देश की संस्कृति, भाषा, वेश, भोजन रीति-रिवाज, रहन-सहन के प्रति आदर एवं गौरव, अंग्रेजी एवं विदेशी वस्तुओं के बहिष्कार और स्वदेशी के सम्मान और व्यवहार को लौकिक धर्म के रूप में प्ररूपित कर लोकोत्तर धर्म के लिये आवश्यक एवं सहायक रखा।

'राष्ट्र के उद्धार में अपना, समाज और धर्म का उद्धार है। इस सत्य को जो राष्ट्र सेवक स्वीकार करता है, उसे निश्चय कर लेना चाहिये कि स्वदेशी वस्त्र स्वदेशी वस्तु का व्यवहार करने में स्वदेश का, समाज का और धर्म का उद्धार है और विदेशी वस्तुओं के व्यवहार में स्वदेश, समाज और स्वधर्म का नाश समाया हुआ है। धार्मिक दृष्टिकोण से विचार करोगे तो तुम्हारा निश्चय अधिक दृढ़ हो जायेगा।'

आचार्यवर ने केवल व्याख्या और उपदेश ही नहीं दिये अपितु स्वयं उनको अपने आचरण द्वारा उदाहरण प्रस्तुत किया। वे स्वयं खादी एवं स्वदेशी वस्तुओं का ही प्रयोग करते और उसका आग्रह भी करते थे।

उनके अनुसार कोई भी राष्ट्र भोजन और वस्त्र में स्वावलम्वी हुये बिना स्वाधीन नहीं रह सकता। भोजन में स्वावलम्वन हेतु कृषि एवं वस्त्र स्वावलम्वन के लिये चरखे और खादी के महत्त्व को प्रतिपादित किया।

उन्होंने समझाया कि आत्मिक साधना मात्र आन्तरिक आचरण की शुद्धता पर ही निर्भर नहीं करती अपितु शुद्ध वाह्य आचरण भी अनिवार्य है। वेश से साधुत्व की वाहरी पहचान होती है। उसी प्रकार गृहस्थ श्राव के लिये भी वेश के प्रति सजगता आवश्यक है। अंग्रेजी वेशभूषा में गौरव एवं सम्मान अनुभव करना आत्महीन है एवं मातृभूमि का अपमान है। यह गुलामी का प्रतीक है। सुन्दर मुलायम व आकर्षक विलायती व मिलों के व का प्रयोग धार्मिक दृष्टि से आरंभजा ही नहीं संकल्पजा हिंसा का आचरण एवं अनुमोदन है। नैतिक एवं आर्थि दृष्टि से अनिष्टकारी है। इसके स्थान पर खादी सात्विक होने के साथ देश व समाज को आर्थिक सम्बल भी प्रद करती है। चरखे से लाखों-लाख देशवासियों को रोटी रोजी और स्वावलम्वन मिलता है। खादी पर किये गये ख का एक-एक पैसा देश में रहता है व गरीव को मिलता है और राष्ट्रीय स्वातन्त्र्य और स्वावलम्वन का समर्थन हो है। चर्खे और खादी में सूत व वस्त्र उत्पादन ही नहीं होता वल्कि इससे सादगी, स्वावलम्वन, स्वाभिमान, स्वदेश प्रेम और अहिंसा धर्म का विकास होता है।

केवल वस्त्र ही नहीं आचार्य श्री ने जीवन जरूरत की गृह व हस्त उद्योगी वस्तुओं एवं आटा मिलों स्थान पर हाथ चक्की के आटे, विस्कुट ब्रेड के स्थान पर देशी सादे भोजन, बाजार व कारखानों की बनी खा वस्तुओं की जगह घर पर हाथ से वनी शुद्ध सामग्री आदि में स्वदेशी के स्वीकार और विदेशी या देशी कारखान में वने जूतों, शक्कर, वनस्पति घी आदि के बहिष्कार का आग्रह किया।

मोक्ष के लिये सम्यक् ज्ञान, दर्शन और चरित्र की रत्नत्रयी की भान्ति देश मुक्ति के लिये स्वाधीनता स्वदेशी और स्वावलम्वन जीवन धर्म और राष्ट्र धर्म रूप में स्थापित करने में अपने आचार्यत्व के दायित्व औ अधिकार का विवेकपूर्वक प्रयोग किया।

श्रावक समाज, जो मुख्यतः वैश्य वर्ग ही रहा है, गांधीजी के विचारों, आन्दोलन व कार्यों को अपन अनुकूल नहीं समझ कर उनका समर्थन नहीं करता अपितु अहिंसा की विकृत मान्यता की आड़ लेकर विरोध ही करता था। आचार्यश्री ने इन विरोधों के बावजूद गाँधी विचार को बल दिया।

स्वाधीनता व स्वदेशी के चलते वैश्य वर्ग को अपने व्यापार में हानि होती प्रतीत होती थी। उनका आक्षेप होता था कि गाँधीजी के नेतृत्व से उनको क्या लाभ होना है, गाँधीजी तो व्यापार को चौपट कर रहे हैं। आचार्य श्री ने कहा कि राष्ट्रकार्य 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' ही है। इससे विदेशी वस्तुओं के उत्पादकों व व्यापारियों की अल्प संख्या को अहित होता लग सकता है। परन्तु बहुसंख्य प्रजा के लाभ के समक्ष यह नगण्य है। विदेशी वस्तुओं के उपयोग और व्यापार से देश का कच्चा माल सस्ते दाम पर विदेश जाता है व विदेशी माल कई गुणा दामों पर वापिस आता है। इससे देश कंगाल होता है और देश में बेरोजगारी और गरीबी बढ़ती है। जबकि स्वदेशी माल के उपयोग और व्यापार से देश में रोजगार मिलता है, देश का धन देश को समृद्ध करता है और लोग सम्पन्न होते हैं। गाँधीजी तो स्वदेश के व्यापार व्यवसाय को बढ़ा रहे हैं। अतः वैश्य वर्ग को अर्थ-लाभ और

वैश्य वर्ग को चेतावनी भी दी कि 'खादी के अतिरिक्त विदेशीय अन्य विलासपरक वस्त्रों को पहनना या अन्य कार्य में लाना गरीवों की झोंपड़ियों में आग लगाने के समान है। आपने (वैश्य वर्ग ने) गरीबों की झोंपड़ियों में वहुत आग लगाई है, अब करुणा करके मजूर बनकर प्रायश्चित कर डालिये।'

वैश्य वर्ग का कृषि व अन्य उत्पादक कार्यों की तुलना में व्यापार को 'अहिंसा की दृष्टि' से श्रेष्ठ मानना दंभ और भ्रम है। जैन शास्त्र में कृषि को वैश्य कर्म बतलाया गया है। कृषि, पशुपालन करने से ही वैश्य कहलाता है। वैश्य का प्रधान कर्म कृषि करना है। शास्त्रों में दो प्रकार की आजीविका बतलाई गई है। उत्पादन कार्य, कृषि, पशुपालन आदि प्रधान-आजीविका और वस्तुओं का विनिमय-उत्तर आजीविका। कृषि को अनर्थ आजीविका नहीं कहा गया है। मूल आजीविका के बिना उत्तर आजीविका टिक नहीं सकती। कृषि और उत्पादन के विना जीवनयापन और व्यापार असंभव है।

आचार्य श्री ने कहा है 'मित्रों वहुत लोग खेती करने वालों को और मिट्टी के बर्तन बनाने वालों को जो खरी मेहनत करके निर्वाह करते हैं, पापी समझते होंगे। परन्तु मैं तो अनेक बड़े-बड़े धनवानों को उनसे कहीं अधिक पापी मानता हूँ जो गद्दियों पर पड़े ब्याज खाते हैं या ऐसे किसी व्यापार द्वारा गरीवों को चूसते हैं, अपने हाथ से कुछ भी नहीं करते।'

'वैश्यों का कर्त्तव्य संग्रह करना हो सकता है परन्तु यह संग्रह स्वार्थमय परिग्रह नहीं बन जाना चाहिये। वैश्यों को न केवल समाज और देश की भलाई के लिये ही वरन् अपनी आत्मिक उन्नति के लिये भी परिग्रह से वचना चाहिये।'

आदर्श वैश्य संसार की माता की तरह संग्रह करता है जोंक की तरह नहीं, जो इस वात का ध्यान रखता है वह दयालु, करुणाशील और धर्मात्मा कहा जायेगा क्योंकि उसकी जीविका धर्म की जीविका है, अधर्म की नहीं।'

आचार्य श्री की मान्यता है कि

'सच्चा राष्ट्र प्रेमी वह है जो अपनी सम्पत्ति को राष्ट्र की सम्पत्ति समझता है। उसके मन में वह उसका ट्रस्टी मात्र होता है। अतएव राष्ट्र व समाज की आवश्यकता के समय वह अपनी तिजोरी वन्द नहीं रख सकता।'

आचार्य श्री जवाहरलालजी ने महर्षि दयानन्द और महात्मा गाँधी द्वारा भारतीय समाज में व्याप्त भीषण विकार 'अस्पृश्यता' के उन्मूलन हेतु 'अन्त्यजोद्धार' के महान समाज कार्य को खुला समर्थन दिया। जैन धर्म में जातिवाद व कुलवाद का स्थान नहीं है अपितु कर्म व गुणवाद को स्थान है। किसी भी कुल के प्राणी को धर्म का समान अधिकार है। जन्म व कुल से नहीं अपितु सद्कर्म और सद्गुण से 'कुलीनता' आती है। भगवान् महावीर ने कर्म से ही वर्ण को मान्य किया है जन्म से नहीं। मनुष्यों के वीच जाति या कुल के आधार पर भेद और अस्पृश्यता शास्त्र-विरुद्ध है। जैन शास्त्र में कहीं भी नीच गौत्र को अछूत नहीं माना गया है। नीच गौत्र और अस्पृश्यता का कोई अविनाभाव सम्वन्ध नहीं है।

'जो लोग आपकी सेवा कर रहे हैं, उन्हें आप क्यों भूल रहे हैं। उनके प्रति जघन्य व्यवहार क्यों करते हैं? जब चाण्डाल कुल में उत्पन्न विकेशी अनुत्तर धर्म का पालन कर सकते हैं तब और क्या कमी रह गई जिसके कारण उनसे घृणा की जाती है। किसी भी जैन शास्त्र में ऐसा उल्लेख नहीं मिल सकता कि अमुक जाति के मनुष्य के छू लेने से कोई भ्रष्ट होता है।'

भारत का दुर्भाग्य है कि यहां के लोग कुछ भाइयों से ऐसा परहेज करते हैं कि उनको छू लेनेसे अपने आपको अपवित्र मानने लगता है। अर्थात् वे अपने भाई को छूना नहीं चाहते। मगर अछूत कहलाने वाला व्यक्ति क्या उनकी ही तरह समाज का अंग नहीं है।'

'हरिजन ईश्वर के चरण हैं। ईश्वर के चरणों का स्पर्श और पूजा की जाती है। हरिजनों से घृणा करना ईश्वर को भुलाना है और देश को डुबाना है। जैन समाज अन्त्यजोद्धार में अपना सहयोग जितना देगा वह उतनी ही ज्यादा धर्म की सेवा करेगा।'

आचार्य श्री के अन्त्यजोद्धार सम्बन्धी उद्‌गारों को सुनकर ठक्कर बापा (श्री अमृतलाल ठक्कर) ने उल्लेख किया है 'श्री जवाहिर लालजी महाराज का नाम बहुत दिनों से सुना करता था। महात्मा गांधी ने भी आपका उपदेश सुनने की इच्छा दर्शायी थी। इसी से जाना जा सकता है कि आपका उपदेश कितना बोधप्रद होगा। आप खादी और हरिजनों का उद्धार करने का उपदेश भी सुन्दर रीति से दिया करते हैं।'

आचार्य श्री जवाहर लालजी महात्मा गांधी को शास्त्रों में वर्णित सच्चा 'राष्ट्र स्थविर' एवं अरिहंतों और सिद्धों की सत्य और अहिंसा की शक्त व महिमा का वर्तमान युग का प्रत्यक्ष प्रमाण मानते हैं। महात्मा गांधी की सत्यनिष्ठा, निर्भयता और प्रामाणिकता सेवा, सादगी, स्वदेशी, स्वावलम्वन और हरिजन प्रेम तथा राष्ट्र और उसकी स्वाधीनता के विचारों का समर्थन देते हैं और उनको धार्मिक आधार देकर प्रतिष्ठित करते हैं।

उस काल में जब अधिकतर जैन धर्माचार्य स्वतन्त्रता आन्दोलन व रचनात्मक कार्यों को राग-द्वेष और हिंसा की चालें मानते रहे तभी आचार्य श्री जवाहरलालजी सबसे भिन्न, राष्ट्र धर्म प्रखर प्रचेता धर्मनायक सिद्ध होते हैं।

राष्ट्रनायक महात्मा गांधी के सत्य और अहिंसा के प्रयोगों से सिद्ध विचारों और कार्यों को राष्ट्र और विश्व तथा धर्मनायक आचार्य श्री जवाहर के उपदेशों को जैन व्यक्ति और समाज कितना आत्मसात् कर पाया है यह चिन्तनीय है। इन विचारों, कार्यों और उपदेशों की सार्थकता और प्रासंगिकता वर्तमान जागतिक परिस्थिति में राष्ट्र, समाज और व्यक्ति की स्वाधीनता, स्वदेशी, आत्मनिर्भरता, स्वत्व रक्षा, समरसता और सम्पूर्ण मानव जाति के भावी विकास के सन्दर्भ में माननीय है। □

परिशिष्ट-१

श्रीमद् जवाहराचार्य विरचित साहित्य

जवाहर किरणावली

प्रथम किरण	—	दिव्यदान
द्वितीय किरण	—	दिव्य जीवन
तृतीय किरण	—	दिव्य सन्देश
चतुर्थ किरण	—	जीवन धर्म
पांचवी किरण	—	सुबाहुकुमार
छठी किरण	—	रुक्मिणी विवाह
सातवीं किरण	—	जवाहर स्मारक, प्रथम पुष्प
आठवीं किरण	—	सम्यक्त्व पराक्रम प्रथम भाग
नवीं किरण	—	सम्यक्त्व द्वितीय भाग
दसवीं किरण	—	सम्यक्त्व तृतीय भाग
ग्यारहवीं किरण	—	सम्यक्त्व चतुर्थ भाग
वारहवीं किरण	—	सम्यक्त्व पंचम भाग
तेरहवीं किरण	—	धर्म और धर्म नायक
चौदहवीं किरण	—	राम वन गमन भाग-१
पन्द्रहवीं किरण	—	राम वन गमन भाग-२
सोलहवीं किरण	—	अंजना
सत्रहवीं किरण	—	पाण्डव चरित्र, प्रथम भाग
अठारहवीं किरण	—	पाण्डव चरित्र, द्वितीय भाग
उन्नीसवीं किरण	—	वीकानेर के व्याख्यान
वीसवीं किरण	—	शालिभद्र चारित्र

इक्कीसवीं किरण	—	मोरवी के व्याख्यान
बाईसवीं किरण	—	सम्वत्सरी
तेईसवीं किरण	—	जामनगर के व्याख्यान
चौबीसवीं किरण	—	प्रार्थना प्रबोध
पच्चीसवीं किरण	—	उदाहरण माला, प्रथम भाग
छब्बीसवीं किरण	—	उदाहरण माला, द्वितीय भाग
सत्ताईसवीं किरण	—	उदाहरण माला, तृतीय भाग
अट्ठाईसवीं किरण	—	नारी जीवन
उनतीसवीं किरण	—	अनाथ भगवान भाग-१
तीसवीं किरण	—	अनाथ भगवान भाग-२
इकतीसवीं किरण	—	गृहस्थ धर्म, प्रथम भाग
बत्तीसवीं किरण	—	गृहस्थ धर्म, द्वितीय भाग
तैतीसवीं किरण	—	गृहस्थ धर्म, तृतीय भाग
चौतीसवीं किरण	—	सती राजमती
पैंतीसवीं किरण	—	सती मदन रेखा
छत्तीसवीं किरण	—	हरिश्चन्द्र तारा
सैंतीसवी किरण	—	सकडाल पुत्र
अड़तीसवीं किरण	—	जवाहर ज्योति
उनतालीसवीं किरण	—	जवाहर विचारसार
चालीसवीं किरण	—	सुदर्शन चरित्र
इकतालीसवीं किरण	—	सती वसुमति भाग-१
बियालीसवीं किरण	—	सती वसुमति भाग-२
तियालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-१
चवालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-२
पैंतालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-३
छियालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-४
सैंतालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-५
अड़तालीसवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-६
उनपचासवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-७
पचासवीं किरण	—	भगवती सूत्र पर व्याख्यान भाग-८

अन्य ग्रन्थ

सद्धर्म मण्डन

हरिश्चन्द्र तारा

अनुकम्पा विचार

(भाग एक-भाग दो)

राजकोट के व्याख्यान भाग १ से ३

सम्यक्त्व स्वरूप

श्रावक के चार शिक्षाव्रत/तीन गुणव्रत

परिग्रह परिमाण व्रत

श्रावक का अस्तेय व्रत/सत्यव्रत

तीर्थंकर चरित्र भाग प्रथम/द्वितीय

सनाथ-अनाथ निर्णय

धर्म व्याख्या/सेठ धन्ना चरित्र

सुदर्शन-चरित्र

□

परिशिष्ट -२

आचार्य श्री के सान्निध्य में सम्पन्न दीक्षाएं

नाम	दीक्षा संवत्	दीक्षा का स्थान
श्री राधालालजी म.	१९५६	खाचरौद
श्री घासीलालजी म.	१९५८	तरावली गढ़
श्री गणेशीलालजी म.	१९६२	उदयपुर
श्री पन्नालालजी म.	१९६२	उदयपुर
श्री लालचन्दजी म.	१९६६	जावरा
श्री वक्तावरमलजी म.	१९६९	चिंचवड़
श्री सूरजमलजी म.	१९७५	हिवड़ा
श्री भीमराजजी म.	१९७९	सतारा
श्री सिरेमलजी म.	१९७९	सतारा
श्री जीवनलालजी म.	१९७९	पूना
श्री जवाहरमलजी म.	१९७९	पूना
श्री केसरीमलजी म.	१९८०	घाटकोपर (वम्बई)
श्री चुन्नीलालजी म.	१९८१	जलगांव
श्री वीरबलजी म.	१९८१	जलगांव
श्री सुगालचन्दजी म.	१९८३	ब्यावर
श्री रेखचन्दजी म.	१९८५	चूरू
श्री हमीरमलजी म.	१९८५	चूरू
श्री चुन्नीलालजी म.	१९८९	जोधपुर
श्री गोकुलचन्दजी म.	१९८९	जोधपुर
श्री मोतीलालजी म.	१९८९	जैतारण
श्री फूलचन्दजी म.	१९९१	कपासन

Asia के प्रथम कलर निर्माता बताया है। बाबूजी की ज्ञान पिपासा अद्वितीय थी। वे स्वयं रंग के फार्मूले सीखते। एक जर्मन इंजीनियर से सप्ताह में दो बार पांच मिनिट रंग-तकनीकी का प्रशिक्षण प्राप्त करने हेतु उन दिनों २५०) प्रतिमाह परामर्श शुल्क देते थे। श्रावक व्रत की मर्यादा को दृष्टिगत रख आपने अर्थोपार्जन से निवृत्ति लेकर सेठिया संस्था की स्थापना की। धार्मिक और नैतिक साहित्य का प्रकाशन संस्था की अमूल्य देन है। संस्था से १४४ ग्रन्थ प्रकाशित हुए हैं। जिनमें जैन सिद्धान्त बोल संग्रह भा. १ से ८, दशवैकालिक सूत्र, आचारांग सूत्र, उत्तराध्ययन सूत्र, प्रश्नव्याकरण सूत्र, नवतत्त्व आदि उच्च स्तरीय एवं प्रामाणिक सन्दर्भ ग्रन्थ हैं।

सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था की समाज को एक खास देन है शिक्षा के क्षेत्र में। आपने श्राविकाश्रम, कन्या पाठशाला, किंडरगार्टन स्कूल, जैन विद्यालय, सेठिया जैन ट्रेनिंग कॉलेज, सेठिया छात्रावास आदि खोलकर चहुंमुखी विकास के नये आयाम ढूंढ निकाले। सेवा और परोपकार की भावना से आपने सेठिया जैन होमियोपैथिक औषधालय स्थापित किया जो आज भी अनवरत रूप से कार्यरत है। यहां निःशुल्क चिकित्सा की व्यवस्था है और प्रतिवर्ष ८० हजार रोगियों का इससे लाभान्वित होना एक कीर्तिमान है।

सेठिया जी सदैव जैन संस्कृति एवं साहित्य के संरक्षण में लगे रहे। जैन समाज की विभिन्न इकाईयों में एकता, सहयोग एवं स्नेह की वृद्धि की दिशा में आप बराबर सजग रहे। बीकानेर में 'सेठिया धार्मिक भवन' (सेठिया कोठड़ी) का ट्रस्ट बनाकर अपने ज्ञान-आराधना की स्थायी व्यवस्था की। २५० फीट लम्बे व ७५ फीट चौड़े भवन में ४००० श्रोताओं के बैठने की व्यवस्था है। इस भवन का मुख्य द्वार स्थापत्य कला का नमूना है।

बावूजी सन् १९२६ में बम्बई में सम्पन्न अखिल भारतवर्षीय श्वे. स्था. जैन कान्फ्रेंस के सप्तम अधिवेशन के सभापति चुने गए। उनका मार्गदर्शन पाकर कान्फ्रेंस ने सर्वतोमुखी प्रगति की है। आप एक दशक तक बीकानेर म्युनिसीपल बोर्ड के कमिश्नर रहे और सन् १९२६ में बोर्ड के वाइस प्रेसिडेंट भी चुने गये। सन् १९३१-३२ में आप ऑनरेरी मजिस्ट्रेट रहे और सन् १९३८ में बीकानेर लेजिस्लेटिव एसेम्बली के सदस्य चुने गए। बीकानेर राज्य व जनता की निःस्वार्थ भाव से सच्ची सेवा करने में आपका नाम अमर रहेगा।

बाबूजी स्वभाव से मृदुल, शान्त व उदार थे। उनके पास पहुंचने वाला हर व्यक्ति अनुभव करता कि वह ज्ञान, बुद्धि और अनुभव के विशाल सागर तट पर बैठा आनंदमयी हिलोरों से भावविभोर हो उठा है। कुशाग्र बुद्धि एवं अथक परिश्रम से आपने व्यवसाय व समाज सेवा क्षेत्रों में अमिट छाप छोड़ी है। सन् १९३० में आपने बीकानेर में ऊन प्रेस व ऊन बरिंग फैक्ट्री खोली, जो बीकानेर की प्रथम इंडस्ट्री थी और आज भी एक अग्रणी प्रतिष्ठान है। ऊन व्यवसाय आपकी दूरदर्शिता के प्रति ऋणी है कि आज इस क्षेत्र में अभूतपूर्व विकास हुआ है और बीकानेर एशिया की सबसे बड़ी ऊन मण्डी है।

बाबूजी ने अपने जीवन में 'सादा जीवन उच्च विचार' सिद्धांत को ही अपनाया। आपका हृदय धार्मिक कार्य, मानव-सेवा एवं समाज-सेवा से ओत-प्रोत रहा। व्यसनों से दूर रहकर आप धर्मनिष्ठ बने रहे और धर्म शिक्षा के प्रचार प्रसार को अपने जीवन का मिशन माना। अनेक लोगों को जीवन-दिशा देकर आपने सेवा और परोपकार का आदर्श स्थापित किया। भौतिक सुखों को आपने अपने ऊपर हावी नहीं होने दिया। वे तो गृहस्थी होते हुए भी निर्लिप्त योगी की तरह जीये। धन को उन्होंने परोपकार का सहायक ही माना अन्तिम ध्येय नहीं। वास्तविक अर्थों में वे विदेह थे।

बाबूजी का पार्थिव शरीर आज हमारे बीच नहीं है परन्तु आत्मपिण्ड रूप में की गई उनकी समाज सेवा सदा स्मरणीय है। उनका स्वर्गवास श्रा. शु. १ सं. २०१९ को हो गया परन्तु सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था उनका

प्रतिभा, पुरुषार्थ और सेवा के प्रतीक : सेठ श्रीमान् चम्पालाल जी बांठिया

❑ उदय नागोरी ❑
एम.ए.(दर्शन), जै. सि. प्रभाकर

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर के संस्थापक श्रीमान् चम्पालाल जी बांठिया को भीनासर के भामाशाह, गरीबों का मसीहा और समर्पित समाजसेवी रूप में कौन नहीं जानता ? लक्ष्मी के इस वरद पुत्र ने सदैव सरस्वती की पूजा की, पदलिप्सा से कोसों दूर रहे व जन सेवा में समर्पित रहकर अतुलनीय आदर्श स्थापित किया। कुशाग्रबुद्धि, श्रमनिष्ठता एवं संघनिष्ठता के सम्बल से आप हर क्षेत्र में सफलता के शिखर पर पहुंचे पर अपने को समाज, राष्ट्र व संस्थाओं का एक सेवक ही माना। वस्तुतः आपने एक कालखण्ड को स्थिर कर अपने सशक्त हस्ताक्षर किये और स्वयं को इतिहास के पृष्ठों में स्थायी कर दिया। आपका जन्म १५ दिसम्बर सन् १६०२ तदनुसार मिति मिगसर सुदी पूर्णिमा संवत् १६५६ को भीनासर में हुआ। अपने पिताजी श्री हमीरमलजी बांठिया से व्यावसायिक प्रतिभा व समाज सेवा तथा माताजी श्रीमती जवाहर बाई से धार्मिक संस्कार आपको विरासत में मिले थे। कठोर परिश्रम, अदम्य साहस एवं सेवा भावना से आपने व्यावसायिक क्षेत्र में अपना स्थान बनाया तो समाज में भी लोकप्रिय बने। मिलनसारिता, निरभिमान एवं मृदुल व्यवहार आपकी निजी विशेषताएं थीं।

आपने सामाजिक, धार्मिक, शैक्षणिक कार्यों में अपूर्व योगदान देकर एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत किया। विविध संस्थाओं को लक्षाधिक रुपयों का दान दिया, जन-जन के दुःखों का निवारण किया और छात्र-छात्राओं का जीवन आलोक से भर दिया। श्री जवाहर हाई स्कूल, कन्या पाठशाला व प्राईमरी स्कूल का निर्माण कराकर आपने भीनासर ही नहीं निकटवर्ती क्षेत्रों को भी ज्ञान-चेतना से जागृत कर दिया।

आपने श्री जवाहर विद्यापीठ की स्थापना कर ज्योर्तिधर आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. की वाणी को जन-जन तक पहुंचाने का भागीरथ कार्य किया है। आचार्य श्री के व्याख्यानों पर आधारित जवाहर किरणावली के ३५ भाग प्रकाशित कराकर आपने उनके सन्देशों को कालजयी बना दिया। पुस्तकालय, वाचनालय, सिलाई-बुनाई-कढ़ाई केन्द्र आदि के माध्यम से संस्था महत्त्वपूर्ण कार्य कर रही है।

बांठिया सा. में नेतृत्व की प्रतिभा थी। श्री अ. भा. स्थानकवासी जैन कान्फ्रेंस के सादड़ी अधिवेशन में आपको अध्यक्ष बनाया गया और यह अधिवेशन ऐतिहासिक बन गया। तदनन्तर आपने भीनासर में वृहद् साधु सम्मेलन भी आयोजित कराया। इसमें आशातीत सफलता मिली। सेवा व सरलता की प्रतिमूर्ति रूप बांठिया सा. ने अपनी सुवास से जैन समाज को नई गति प्रदान की।

पौषधशाला, धार्मिक ट्रस्ट, आदि को आपने समाज के लिए समर्पित कर दिया। इस स्तुत्य कार्य हेतु उन्हें सदैव याद करता रहेगा। श्वे. साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था, बीकानेर, नगर पालिका, बीकानेर व्यापार संघ आदि संस्थाओं के अध्यक्ष रूप में आपकी सेवाएं अविस्मरणीय हैं।

सार्वजनिक व रचनात्मक कार्यों में भी आपका अपूर्व योगदान रहा है। भीनासर में मीठे पानी के दो कुओं का निर्माण कराकर आपने जन-जन का आशीष पाया है। आज तो वाटर-वर्क्स द्वारा यह कार्य सम्पन्न किया जाता है परन्तु ४०-५० वर्ष पूर्व इन कुओं का विशेष महत्व था। वर्षों तक आपने ऑनरेरी मजिस्ट्रेट एवं बीकानेर राज्य के विधान सभा सदस्य रूप में ऐतिहासिक सेवाएं प्रदान कीं। आपकी सेवाओं का उल्लेख बीकानेर जुबली ग्रन्थ व हूज-हू पुस्तक में भी किया गया है।

आपको समाज द्वारा सम्मानित व अभिनन्दित भी किया गया। तत्कालीन बीकानेर नरेश श्री गंगासिंह द्वारा उन्हें पब्लिक सर्विस मैडल फर्स्ट क्लास से सम्मानित किया गया तथा चांदी की छड़ी व चपड़ास प्रदान की। उन दिनों पैर में सोना पहनने के लिए शाही स्वीकृति आवश्यक थी। महाराजा ने इनके परिवार को पैर में सोना पहनने की इज्जत प्रदान की। जैन समाज द्वारा अद्वितीय समाज सेवा के लिए आपको स्वर्ण पदक से सम्मानित भी किया गया। यही नहीं, अनेक संस्थाओं ने आपका अभिनन्दन भी किया। परन्तु आप अहं से कोसों दूर रहे और मान सम्मान को समाज का स्नेह मानकर स्वीकार किया। साधुमार्गी जैन हितकारिणी संस्था द्वारा आपको श्रद्धार्पण पत्र (मरणोपरान्त) प्रदान कर सम्मानित किया।

अनेक धार्मिक, सामाजिक, सार्वजनिक संस्थाओं को आपने प्रभूत दान देकर 'दानवीर' विशेषण को सार्थक किया। सार्वजनिक कार्यों में किसी को भी निराश नहीं लौटाते। मुक्त हाथ से लक्ष्मी का सदुपयोग कर आपने स्वयं को लक्ष्मी का सच्चा सेवक सिद्ध किया। ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, प्रतिभापुंज श्री बांठिया सा. जैन समाज के अग्रणी सुश्रावक थे। धर्म के प्रत्येक कार्य में आपने योगदान दिया व जनता के स्वास्थ्य, सफाई, संस्कृति के लिए पूर्ण सजग रहे। आपके तीनों सुपुत्र सर्व श्री शांतिलालजी, धीरजलालजी एवं सुमतिलालजी भी अपने पिता श्री के समाज-सेवा के आदर्श को अपने जीवन का आदर्श मानकर चल रहे हैं।

ऐसे बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी, दूरदर्शी, समर्पित समाजसेवी, कलाप्रेमी, समन्वयवादी, प्रगतिशील एवं सरलता व सेवा के प्रतीक बांठिया सा. को शतशः वन्दन। श्री जवाहर विद्यापीठ एक जीवन्त स्मारक है जो उनकी कीर्ति-पताका को युगों तक फहराता रहेगा। □

आचार्यश्री का स्वर्गारोहण : स्मारक की परिकल्पना

श्रीमद् जवाहराचार्य अन्तिम समय भीनासर में विराज रहे थे। सं. २००० आषाढ़ शुक्ला अष्टमी को आपने संथारा पूर्वक पार्थिव देह त्यागी। रातों रात तार-टेलिफोन से श्री संघों को सूचित किया गया। महाप्रयाण यात्रा में सम्मिलित होने के लिए अगले दिन लगभग दस हजार श्रद्धालुजन एकत्रित हो गये। जय जयकार सहित रजत वैकुंठी में उनकी पार्थिव देह को गंगाशहर-भीनासर के प्रमुख मार्गों से होकर भीनासर की श्मशान भूमि तक ले गये।

बीकानेर राज्य की तरफ से पूज्य श्री के मान में डंका, निशान तथा छड़ी का लवाजमा भेजा गया था। बीकानेर नगर ही नहीं, सम्पूर्ण रियासत में कसाई खाना, भट्टियें आदि बन्द रखने तथा सभी सरकारी ऑफिस व स्कूल बन्द रखने का हुक्म जारी किया गया। बाजार भी प्रायः बन्द रहे।

जुलुस के आगे डंका निशान, उसके पीछे बैंड और छड़ी तथा उनके पीछे जयघोष करती हुई भजन गाती हुई जनता। इनके बाद चंवर ढुलाते हुए पूज्य श्री के शव की पालखी और फिर श्राविकाओं का झुंड। अंत में उछाल की रकम के ऊंट चल रहे थे। हजारों रुपये नकदी तथा रजत व स्वर्ण फूल की उछाल की गई। बारह बजे पश्चात् चन्दन, खोपरा, घृत, कर्पूर आदि पदार्थों से पूज्य श्री का पालखी सहित अग्नि संस्कार किया गया।

आषाढ़ सुदी १० को प्रातः काल ६ बजे चतुर्विध संघ की एक शोक सभा आयोजित की गई। इसमें श्रीमान् चम्पालाल जी बांठिया ने आचार्यश्री की स्मृति रूप में एक जीवन्त स्मारक बनाने की अपील की। इस सूत्र को आगे बढ़ाया श्री लहरचन्द जी सेठिया (बीकानेर) ने।

बांठिया सा. ने कहा कि आचार्यश्री के प्रति यदि वास्तविक भक्ति है तो उनके प्रवचनों के प्रकाशन हेतु एक स्मारक फण्ड स्थापित किया जाना आवश्यक है। उपस्थित जनता भी सहयोग हेतु तत्पर थी। तत्काल ही श्रीमान् अगरचंद जी भैरोंदान जी सेठिया की ओर से ११००१) की राशि घोषित की गयी एवं इतनी ही राशि श्रीमान् बहादुरमल जी व चंपालाल जी बांठिया की ओर से लिखाई गई। वस्तुतः श्री जवाहर विद्यापीठ की परिकल्पना उस समय नहीं बनी परन्तु स्मारक फंड स्थापित हो गया।

तदनन्तर विचार-विमर्श के पश्चात् श्री जवाहर विद्यापीठ का स्वरूप सामने आया और इसकी स्थापना हो गई। आज संस्था ने पांच दशक की यात्रा पूर्ण की है। इसकी वर्तमान प्रवृत्तियों का परिचय एवं अब तक की विकास यात्रा अग्रतः प्रस्तुत है।

श्री जवाहर विद्यापीठ : वर्तमान प्रवृत्तियां

क्रान्तदर्शी युगप्रधान आचार्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. का जीवन्त स्मारक है विद्यापीठ। शिक्षा, ज्ञान एवं सेवा की त्रिवेणी प्रवाहित करते हुए इसने पांच दशक पूर्ण किये हैं। इसके स्वरूप में समय-समय पर किंचित

होता रहा परन्तु मुख्य ध्येय श्रीमद् जवाहराचार्य की कालजयी वाणी को अक्षुण्ण बनाना रहा है।

वर्तमान में संचालित संस्था की प्रवृत्तियां निम्नांकित हैं—

अनुभाग

आचार्य श्री के व्याख्यानों से संकलित, सम्पादित ग्रन्थों को 'जवाहर किरणावली' नाम से प्रकाशित जा रहा है। अब तक किरणावली की ३५ किरणें प्रकाशित हुई थी, जिनकी संख्या स्वर्ण जयन्ती वर्ष में ५० गई है। इनमें गुंफित आचार्य श्री की वाणी जन-जन तक पहुंचाने का यह कार्य कीर्तिमानीय है। संस्था द्वारा २५ प्रतिशत छूट दी जाती है और स्वर्ण जयन्ती वर्ष में २५ प्रतिशत राशि श्री रिखबचन्द जैन के टी. टी. ट्रस्ट द्वारा वहन करने से किरणावली के सेट अर्द्ध मूल्य में विक्रय किये गये।

जैन व्याख्या साहित्य, प्रवचन साहित्य, कथा साहित्य, सूक्ति साहित्य एवं दृष्टांत साहित्य में आचार्य श्री का महत्त्वपूर्ण स्थान है। आत्मधर्म के साथ राष्ट्र धर्म जोड़कर, सामाजिक जागृति एवं आत्मोन्नयन का किया आचार्यश्री ने। उनके विचार परिवर्तित परिस्थितियों में भी प्रासंगिक व उपादेय है।

जवाहर पुस्तकालय

प्रकाशन के बाद यह विद्यापीठ की प्रमुख प्रवृत्ति है। भौतिकवादी जगत् में ज्ञान विज्ञान से परिचय हेतु पुस्तकालय महत्त्वपूर्ण साधन है और यह पुस्तकालय उसकी समुचित पूर्ति करता है। इसमें धर्म, कहानी, काव्य नाटक, भूगोल, जीवनी, आत्मकथा, जैनागम, राजनीति, योग, ज्योतिष, अर्थशास्त्र, , विज्ञान, कानून एवं विविध विषयों की ५१०० पुस्तकें हैं। अनेक दुर्लभ एवं प्राचीन ग्रन्थ विशिष्ट हैं। तियां जी, विद्यार्थीगण एवं जिज्ञासुजन इससे लाभान्वित होते हैं।

लिखित ग्रन्थ प्रकोष्ठ

पुस्तकालय में लगभग ५०० हस्तलिखित ग्रन्थ हैं। १६ वीं से २० वीं शताब्दी तक के ग्रन्थों की भाषा , संस्कृत, राजस्थानी, गुजराती, डिंगल, मेवाड़ी आदि है। इनमें जैन आगम सूत्रों (मूल, अंग, उपांग, छेद) की एकाधिक प्रतियां हैं। उत्तराध्ययन सूत्र, नन्दी सूत्र, दशवैकालिक सूत्र, सूयगड़ांग सूत्र, ठाणांग सूत्र, सूत्र, ज्ञाता सूत्र आदि मूल, टीका, टब्बा आदि रूप में उपलब्ध है। साथ ही ढ़ाल, चौपई, दूहा, चौपाई, , सज्झाय, उपदेशी, चौढ़ालियो आदि संज्ञक रचनाएं भी हैं।

प्रसन्नता है कि शीघ्र ही हस्तलिखित ग्रन्थ रचनाओं की सूची प्रकाशित की जाने वाली है।

नालय

पुस्तकालय के बाह्य कक्ष में वाचनालय का संचालन होता है। प्रतिदिन लगभग ६० पाठक ओं का अध्ययन कर ज्ञानार्जन करते हैं। वाचनालय में निम्नांकित पत्र-पत्रिकाएं उपलब्ध कराई जाती

त्रैमासिक—निरोगधाम

मासिक—नन्दन, चन्दामामा, सुमन सौरभ, कादम्बिनी, सामान्यज्ञान दर्पण, विज्ञान प्रगति, गृह शोभा, दर्पण, हंस, नन्हें सम्राट।

[illegible] जवाहर द्वार

भीनासर प्रवेश स्थल पर मुख्य सड़क पर भव्य जवाहर द्वार का निर्माण प्रस्तावित है। श्रीमद् [illegible]चार्य की सूक्तियों से मंडित यह द्वार अपने में विशिष्ट होगा।

[illegible] प्याऊ का मशीनीकरण

वर्तमान में संचालित ठण्डे पानी की प्याऊ में मशीन लगाने की योजना है। परिणाम स्वरूप हर समय [illegible] पेय जल उपलब्ध होगा तथा किसी पर निर्भरता समाप्त हो जायेगी।

[illegible]वलोकन : रज से स्वर्ण की यात्रा

जवाहर विद्यापीठ की परिकल्पना से पूर्व यहां क्या था? आचार्यश्री की चरण रज का ही प्रभाव है कि [illegible] साधनों के वावजूद संस्था ने अर्द्ध शताब्दी की यात्रा परिपूर्ण की है। प्रकाशन, सेवा, शिक्षा-प्रसार, संस्कार [illegible] आदि क्षेत्रों में कीर्तिमानीय कार्य-शृंखला संस्था के लिए गौरव का विषय है। अव तक की प्रवृत्तियों का [illegible] परिचय देना अप्रासंगिक नहीं होगा। रज से स्वर्ण तक की यह यात्रा अनन्त चलती रहेगी, यही विश्वास है।

श्री जवाहर विद्यापीठ की पंच दशकीय विकास गाथा : प्रारम्भिक विचार-विमर्श

सर्वप्रथम दिनांक ६-१२-४३ रविवार को परमप्रतापी स्वर्गीय जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलालजी का [illegible] वनाने के विपय पर विचार करने के लिए सेठिया कोटड़ी वीकानेर में त्रिवेणी संघ वीकानेर, गंगाशहर व [illegible]नासर की संयुक्त वैठक श्रीमान् भैरूदानजी सेठिया की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। स्मारक के लिए धन एकत्रित [illegible] के उद्देश्य से दानवीर सेठ भैरूदानजी सेठिया से परामर्श करके श्री चम्पालालजी वांठिया ने एक अपील [illegible] थी। वांठियाजी ने प्रस्ताव रखा कि अपील में प्रस्तावित योजनाओं पर विचार-विमर्श करके यह तय किया [illegible] कि कौनसी योजना कार्यरूप में परिणत करनी चाहिए और सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया कि स्वर्गीय पूज्य [illegible]चार्यश्री जवाहरलालजी म.सा. की स्मृति को अक्षुण्ण वनाये रखने के लिए एक शिल्प मन्दिर खोला जाय।

श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया ने प्रस्ताव रखा कि इसका निर्माण भीनासर में ही होना चाहिए, जहां [illegible]श्री का स्वर्गवास हुआ। इसका समर्थन श्री फूसराजजी वच्छावत ने किया। भूमि निर्धारण का प्रश्न उठा तो [illegible] श्री लक्ष्मीचन्दजी लूनिया तथा मूलचन्दजी लूनिया ने उदारतापूर्वक अपनी १६०० गज जमीन समाज की सेवा में अर्पित करने की घोषणा की। यहीं पर १६०० गज जमीन श्री जेठमलजी लूनिया की थी उन्हें भी इस पुनीत [illegible] के लिए अपनी जमीन समर्पित करने की प्रार्थना करने का निर्णय लिया गया। तदनन्तर एक कार्यकारिणी [illegible]मिति का गठन किया गया। कार्यकारिणी में वीकानेर के ११ सदस्य लिये गये तथा भीनासर-गंगाशहर के सदस्यों [illegible] श्री चम्पालालजी वांठिया को यह जिम्मेदारी दी गई।

तदनुसार दिनांक २ जनवरी १६४४ को श्रीमान् लिखमीचन्दजी मूलचन्दजी लूनिया की कोटड़ी में श्रीमान् [illegible]रामजी वांठिया के सभापतित्व में वैठक आयोजित की गई। इसमें दोनों श्री संघों के ७-७ सदस्य [illegible] [illegible]।

संस्था का निजी भवन वनने तक श्रीमान् तोलारामजी [illegible] ने सेठ [illegible] [illegible] चलाने की स्वीकृति प्रदान की। एतदर्थ उपस्थित महानुभावों ने उन्हें धन्यवाद दिया।

पाक्षिक—पांचजन्य, इंडिया टुडे, सरिता, मुक्ता , चंपक, बालहंस।

साप्ताहिक—सण्डेमेल, इतवारी पत्रिका, लोटपोट, धर्मयुग, रोजगार समाचार।

दैनिक—राजस्थान पत्रिका, जनसत्ता, हिन्दुस्तान, नवभारत टाइम्स, टाइम्स ऑफ इन्डिया।

सिलाई बुनाई कढ़ाई केन्द्र

विद्यापीठ परिसर में कुशल प्रशिक्षिकाओं द्वारा महिलाओं को सिलाई, बुनाई एवं कढ़ाई कार्य का प्रशिक्षण दिया जाता है। इससे महिलाएं स्वावलम्बी बनकर जीवन यापन करने की योग्यता प्राप्त करती हैं। छात्राएं यहां चित्रकला, फैब्रिक आर्ट, कशीदा-चित्र, सलमा-सितारा कार्य आदि भी सीखती हैं। इस केन्द्र से अब तक सैंकड़ों महिलाओं ने प्रशिक्षण प्राप्त किया है तथा नियमित रूप से अभी भी प्रशिक्षण प्राप्त किया जा रहा है। इसे गतिशील रखने में श्रीमती तारादेवी बांठिया विशेष रूचि लेती हैं।

व्याख्यानमाला

प्रतिवर्ष महावीर जयन्ती के दिन सेठ श्री चम्पालाल जी बांठिया स्मृति व्याख्यानमाला के अन्तर्गत विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता आयोजित की जाती है। युवा वर्ग में वक्तृत्व कला का विकास करना ही इसका मुख्य ध्येय है। विजेताओं को पुरस्कृत कर उन्हें प्रोत्साहित किया जाता है।

रामपुरिया स्मृति पुरस्कार

विद्यार्थियों में उच्च शिक्षा के प्रति रूचि जागृत कर स्वस्थ प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करने हेतु प्रतिवर्ष स्नातक स्तर पर (कला, विज्ञान, वाणिज्य संकाय) बीकानेर जिले में सर्वाधिक अंक प्राप्तकर्ता को प्रदीपकुमार रामपुरिया स्मृति पुरस्कार प्रदान कर सम्मानित किया जाता है।

शीतल जल प्याऊ

विद्यापीठ में ही ठण्डे व मीठे जल की प्याऊ संचालित की जाती है। दर्शनार्थी व जन साधारण के लिए इसकी उपादेयता स्वयं सिद्ध है।

उज्ज्वल भविष्य

श्री जवाहर विद्यापीठ का भविष्य उज्ज्वल है। कतिपय योजनाएं क्रियान्वित की जाने वाली हैं जिनमें प्रमुख हैं—

१. संस्था की ध्रुव निधि में वृद्धि

स्वर्ण जयन्ती समारोह के शुभ अवसर पर प्राप्त आर्थिक सहायता राशि से संस्था की ध्रुव निधि संवर्धित होगी और वर्तमान प्रवृत्तियां निरन्तर सुचारू रूप से चल सकेंगी।

२. वर्तमान हॉल का विस्तार

विद्यापीठ के वर्तमान हॉल का विस्तार कर आगे बरामदा बनवाया जाना प्रस्तावित है। इससे हॉल की बैठक क्षमता में वृद्धि होगी।

७. जवाहर द्वार

भीनासर प्रवेश स्थल पर मुख्य सड़क पर भव्य जवाहर द्वार का निर्माण प्रस्तावित है। श्रीमद् जवाहराचार्य की सूक्तियों से मंडित यह द्वार अपने में विशिष्ट होगा।

८. प्याऊ का मशीनीकरण

वर्तमान में संचालित ठण्डे पानी की प्याऊ में मशीन लगाने की योजना है। परिणाम स्वरूप हर समय शीतल पेय जल उपलब्ध होगा तथा किसी पर निर्भरता समाप्त हो जायेगी।

सिंहावलोकन : रज से स्वर्ण की यात्रा

जवाहर विद्यापीठ की परिकल्पना से पूर्व यहां क्या था? आचार्यश्री की चरण रज का ही प्रभाव है कि सीमित साधनों के बावजूद संस्था ने अर्द्ध शताब्दी की यात्रा परिपूर्ण की है। प्रकाशन, सेवा, शिक्षा-प्रसार, संस्कार निर्माण आदि क्षेत्रों में कीर्तिमानीय कार्य-शृंखला संस्था के लिए गौरव का विषय है। अब तक की प्रवृत्तियों का संक्षिप्त परिचय देना अप्रासंगिक नहीं होगा। रज से स्वर्ण तक की यह यात्रा अनन्त चलती रहेगी, यही विश्वास है।

श्री जवाहर विद्यापीठ की पंच दशकीय विकास गाथा : प्रारम्भिक विचार-विमर्श

सर्वप्रथम दिनांक ६-१२-४३ रविवार को परमप्रतापी स्वर्गीय जैनाचार्य पूज्य श्री जवाहरलालजी का स्मारक बनाने के विषय पर विचार करने के लिए सेठिया कोटड़ी बीकानेर में त्रिवेणी संघ बीकानेर, गंगाशहर व भीनासर की संयुक्त बैठक श्रीमान् भैरूदानजी सेठिया की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई। स्मारक के लिए धन एकत्रित करने के उद्देश्य से दानवीर सेठ भैरूदानजी सेठिया से परामर्श करके श्री चम्पालालजी बांठिया ने एक अपील निकाली थी। बांठियाजी ने प्रस्ताव रखा कि अपील में प्रस्तावित योजनाओं पर विचार-विमर्श करके यह तय किया जाये कि कौनसी योजना कार्यरूप में परिणत करनी चाहिए और सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया कि स्वर्गीय पूज्य आचार्यश्री जवाहरलालजी म.सा. की स्मृति को अक्षुण्ण बनाये रखने के लिए एक शिल्प मन्दिर खोला जाय।

श्री जयचन्दलालजी रामपुरिया ने प्रस्ताव रखा कि इसका निर्माण भीनासर में ही होना चाहिए, जहां आचार्यश्री का स्वर्गवास हुआ। इसका समर्थन श्री फूसराजजी बच्छावत ने किया। भूमि निर्धारण का प्रश्न उठा तो सेठ श्री लक्ष्मीचन्दजी लूनिया तथा मूलचन्दजी लूनिया ने उदारतापूर्वक अपनी १६०० गज जमीन समाज की सेवा में अर्पित करने की घोषणा की। यहीं पर १६०० गज जमीन श्री जेठमलजी लूनिया की थी उन्हें भी इस पुनीत कार्य के लिए अपनी जमीन समर्पित करने की प्रार्थना करने का निर्णय लिया गया। तदनन्तर एक कार्यकारिणी समिति का गठन किया गया। कार्यकारिणी में बीकानेर के ११ सदस्य लिये गये तथा भीनासर-गंगाशहर के सदस्यों हेतु श्री चम्पालालजी बांठिया को यह जिम्मेदारी दी गई।

तदनुसार दिनांक २ जनवरी १९४४ को श्रीमान् लिखमीचन्दजी मूलचन्दजी लूनिया की कोटड़ी में श्रीमान् चम्पालालजी बांठिया के सभापतित्व में बैठक आयोजित की गई। इसमें दोनों श्री संघों के ७-७ सदस्य मनोनीत किये गये।

दिनांक १६/१/४४ को सेठिया लायब्रेरी, बीकानेर में श्रीमान् भैरोंदानजी सेठिया की अध्यक्षता में बैठक हुई जिसमें निर्णय लिया गया कि पूज्यश्री के स्मारक रूप में कक्षा नवीं व दसवीं का एक हाईस्कूल स्थापित किया जाय। इसमें कॉमर्स के साथ धार्मिक अध्ययन भी कराया जाय। इसी क्रम में दिनांक १७/१/४४ को भीनासर में बैठक हुई एवं १९/१/४४ को बीकानेर श्री संघ ने भी सर्व सम्मति से स्वीकृति प्रदान कर दी।

दिनांक १६/४/४४ को श्रीमान् चम्पालालजी बांठिया के बंगले पर श्री घेवरचन्दजी बोथरा की अध्यक्षता में बैठक हुई, जिसमें 'श्री जवाहर विद्यापीठ' की योजना सर्वसम्मति से स्वीकृत की गई। इसी दिन बीकानेर में भी कार्यकारिणी सदस्यों की बैठक सेठिया लायब्रेरी में हुई। इसकी अध्यक्षता श्रीमान् बुधसिंहजी बैद ने की। इसमें स्मारक की सम्पत्ति को सुरक्षित रखने, इसे बैंक में लगाने या मोर्टगेज कर ब्याज अर्जित करने हेतु चार सदस्यों की समिति गठित की गई।

स्वप्न जो साकार हुआ

दिनांक २९/४/४४ विद्यापीठ के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सेठिया कोठड़ी बीकानेर में श्रीमान् मगनमलजी कोठारी की अध्यक्षता में आयोजित बैठक में निर्णय लिया गया कि पूज्यश्री की स्मृति को स्थायी बनाने हेतु श्री जवाहर विद्यापीठ नाम से संस्था स्थापित की जाय। इसके उद्देश्य थे—

१. आचार्यश्री के व्याख्यानों को प्रकाशित करना।
२. जैन समाज में शिक्षा का प्रचार करना।
३. जैन सिद्धान्तों का प्रचार करना।
४. साधु-साध्वियों में शिक्षा का प्रसार करना।
५. योग्य जैन विद्यार्थियों को भोजन, आवास आदि की सहायता करना।
६. उच्च शिक्षा प्रदान कर समाज में प्रौढ़ विद्वान तैयार करना।

उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्त्ति के लिए निम्नांकित कार्य प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया—

(१) प्रकाशन विभाग (२) पुस्तकालय (३) विद्यार्थी निवास
(४) धार्मिक शिक्षण शाला (५) उच्च शिक्षा सदन (६) उपदेशक विभाग

इस सन्दर्भ में श्रीमान् भैरोंदानजी सेठिया ने एक पत्र दिनांक ३०/४/४४ द्वारा अपनी राय व्यक्त की जो इस प्रकार है :

संस्कृत, प्राकृत और आगम के प्रौढ़ विद्वान तैयार करने की विद्यापीठ की योजना को मैं सुन्दर, समयानुकुल एवं समाज के लिए परम उपयोगी समझता हूँ। समाज को ऐसे विद्वानों की बड़ी आवश्यकता है। यदि विद्यापीठ से ५-७ विद्वान भी तैयार होकर समाज में काम करने लगे तो योजना की सफलता है।

दिनांक १०/५/४४ को प्रबन्ध कारिणी समिति की बैठक (अध्यक्षता श्रीमान् कानीरामजी बांठिया) में पदाधिकारियों का चुनाव हुआ और जवाहर विद्यापीठ के विधान व नियमावली को स्वीकृति प्रदान की गई।

दिनांक २१/११/४४ की बैठक में निर्णय किया गया कि 'प्राच्य विद्या मन्दिर' बन्द कर दिया जाय व केवल बोर्डिंग ही रखा जाय। बोर्डिंग में धार्मिक पढ़ाई आवश्यक रखी जाय। प्रारम्भ में ५० विद्यार्थियों को प्रवेश

की स्वीकृति दी गई। भवन निर्माणार्थ श्रीमती भंवरीवाई कोठारी (धर्मपत्नी श्रीमानमलजी) द्वारा १५ हजार रुपये की राशि प्रदान की गई।

दिनांक १७/२/४६ की बैठक में एक आयुर्वेदिक औषधालय प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गया। श्री जवाहर किरणावली का प्रकाशन भी प्रारम्भ हो गया।

दिनांक १२/५/४६ की बैठक में पं. श्री पूर्णचन्द्रजी दक को वोर्डिंग में गृहपति पद पर नियुक्त करने का निर्णय किया गया। ३५ छात्रों को रखने की स्वीकृति प्रदान की गई। हितेच्छु श्रावक मंडल से आचार्य श्री के व्याख्यानों की फाइलें मंगाने का निर्णय किया गया व पं. श्री शोभाचन्द्रजी भारिल्ल द्वारा व्याख्यान सम्पादन, जीवन-चरित्र लेखन कार्य पर संतोष व्यक्त किया गया।

दिनांक १२/११/४७ की बैठक में निर्णय लिया गया कि विद्यापीठ भूमि के मैन रोड़ पर लाईब्रेरी के लिए हॉल वनाया जाय तथा पीछे की ओर राज से क्रय की गई ६००० गज जमीन पर वोर्डिंग के लिए भवन निर्माण कराया जाय। पं. महेशचन्द्रजी नन्दावत को गृहपति पद पर नियुक्ति हेतु स्वीकृति प्रदान की गई।

सन् १६४८

छात्रावास में ४१ विद्यार्थियों को प्रवेश। उनके भोजन आदि की व्यवस्था के लिए १५००० की राशि स्वीकृत की गई।

सन् १६४६

वोर्डिंग में ३५ छात्रों को प्रवेश। असमर्थ विद्यार्थी को निःशुल्क रखने की स्वीकृति प्रदान की गई। विद्यापीठ भवन का उद्घाटन श्रीमान् इन्द्रचन्द जी केलड़ा (कुचेरा) के कर कमलों से कराने का निर्णय किया गया। विद्यापीठ के वार्षिकोत्सव में उन्हें ही अध्यक्ष बनाने का प्रस्ताव सर्वसम्मति से पारित हुआ।

जहां स्वर्गीय आचार्यश्री का अग्नि संस्कार किया गया था—दो कमरे निर्मित किये गये। वार्षिकोत्सव के लिए स्वागत समिति गठित की गई। स्वागताध्यक्ष श्री जुगराजजी सेठिया व स्वागत मंत्री श्री चम्पालालजी वांठिया को बनाने का निर्णय किया गया।

सन् १६५०

१५/१/१६५० को विद्यापीठ का उद्घाटन सम्पन्न हुआ। इस अवसर पर महिला सम्मेलन, कवि सम्मेलन, भाषण प्रतियोगिता एवं सांस्कृतिक कार्यक्रम भी सम्पन्न हुए।

ट्रस्टियों की संख्या ४ की गई—

१. श्री अजीतमलजी पारख	२. श्री हणूंतमलजी सेठिया
३. श्री चम्पालालजी वांठिया	४. श्री घेवरचन्दजी वोथरा

सन् १६५३

दिनांक ७/१०/५३ को संविधान व नियमावली को संशोधित कर पारित किया गया। संस्था का रजिस्ट्रेशन कराने हेतु निर्णय भी लिया गया। स्थायी स्तम्भ, संरक्षक, उपसंरक्षक, आजीवन सदस्य, वार्षिक सदस्य की श्रेणी निर्धारित की गई व ७ सम्मानित सदस्यों के मनोनयन का प्रस्ताव पारित किया गया।

सन् १९५४

श्री अजीतमलजी पारख द्वारा त्यागपत्र देने पर श्रीमान् जुगराजजी सेठिया को ट्रस्टी चुना गया।

सन् १९५६

प्रबन्ध कारिणी के तीन सदस्यों (सर्व श्री जुहारमलजी गोलछा बीकानेर, शेरमलजी डागा व मनसुखदासजी बोथरा गंगाशहर) का निधन हो जाने से उनके स्थान पर सर्वश्री कन्हैयालालजी मालू, चांदमलजी डागा व हणूंतमलजी बोथरा का चयन किया गया।

गृह उद्योग शाला को जवाहर विद्यापीठ द्वारा संचालित करने का निर्णय लिया गया।

सन् १९६१

संस्था के दो मकानों (बीकानेर व श्री गंगानगर) को बेचने हेतु निर्णय किया गया। इन्हें बेचकर राशि ब्याज पर लगाई गई। इनसे क्रमशः ३३००० रु. व ३०,००० रु. की राशि प्राप्त हुई।

सन् १९६२

श्रीमान् चम्पालालजी बांठिया ने मंत्री व कोषाध्यक्ष पद पर किसी अन्य महानुभाव को चयनित करने की प्रार्थना की। इस्तीफा स्वीकार नहीं हुआ।

सन् १९६४

श्री घेवरचन्दजी बोथरा का देहावसान हो जाने के कारण उनके स्थान पर श्री अजीतमलजी पारख का चयन किया गया।

छात्रों को धार्मिक शिक्षण के साथ व्यावहारिक शिक्षण प्रदान करने हेतु ३-४ अध्यापकों को नियुक्त करने का निर्णय किया गया।

सन् १९६६

संस्था का लेखा ऑडिट कराने हेतु डागा एन्ड कं. बीकानेर को नियुक्त करने का दिनांक ६/१/६६ को निर्णय हुआ। पूर्व में यह कार्य समाज के ही दो सदस्यों द्वारा किया जाता था। जवाहर किरणावलियों व सद्धर्म मण्डन को छपाने के लिए स्वीकृति प्रदान की गई।

स्व. श्री अजीतमलजी पारख के स्थान पर उनके सुपुत्र श्री पीरदानजी को चयनित किया गया।

सन् १९६७

श्री हणूंतमलजी सेठिया का निधन हो जाने से श्री चांदमलजी डागा को अध्यक्ष पद पर चुना गया।

ट्रस्टियों का चुनाव निम्नानुसार हुआ—

१. श्री जुगराजजी सेठिया
२. श्री छगनलालजी बैद
३. श्री चम्पालालजी बांठिया
४. श्री जसकरणजी बोथरा

सन् १९६९

निम्नांकित ट्रस्टी चुने गये—

१. श्री जुगराज जी सेठिया — २. श्री चम्पालालजी वांठिया

३. श्री भंवरलालजी बोथरा (गंगाशहर) — ४. श्री पीरदानजी पारख।

ए.आर. भंसाली एन्ड कम्पनी, जोधपुर को आडीटर नियुक्त किया गया।

छात्रवृत्ति प्रदान करने के लिए श्री चांदमलजी डागा के नेतृत्व में उपसमिति गठित की गई।

सन् १९७०

श्री चांदमलजी डागा का निधन हो जाने के कारण उनके स्थान पर श्री छगनमलजी सोनावत को मनोनीत किया गया।

सन् १९७३

श्री चम्पालालजी वांठिया द्वारा प्रस्तावित किया गया कि बांठिया पौषधशाला श्री जवाहर विद्यापीठ के अन्तर्गत ले ली जाय। इसे सर्वसम्मति से पास करके इस सम्बन्ध में लिखा पढ़ी कराने का भार श्री बांठिया सा. को ही दिया गया।

सन् १९७४

श्री इन्द्रमलजी सुराणा को आडीटर रखने का निर्णय हुआ। एतदर्थ सुराना एण्ड कम्पनी को नियुक्त किया गया। प्रबंधकारिणी समिति द्वारा 'सेठ श्री हमीरमल बांठिया स्थानकवासी जैन पौषधशाला, भीनासर' का दान पत्र स्वीकार कर सर्व सम्मति से तय किया गया कि स्टाम्प का खर्च व वकील आदि का खर्च संस्था ही वहन करेगी। संस्था की तरफ से यह दान पत्र स्वीकार करने का अधिकार श्री भँवरलालजी कोठारी को दिया गया ओर इस दान के लिए संस्था ने बांठिया परिवार के प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया।

सन् १९७५

श्रीमती चांद कुमारी पारख द्वारा जवाहर स्मृति भवन फंड में २१०००) की राशि प्रदान की गई।

सन् १९७६

२५ जुलाई को साधारण सभा में श्री चम्पालालजी वांठिया द्वारा अपनी अस्वस्थता के कारण दिया त्यागपत्र स्वीकार कर उनके स्थान पर श्री जतनलालजी लूनिया को मंत्री पद पर नियुक्त किया गया।

श्री गोरधनदासजी वांठिया की स्मृति में उनकी धर्मपत्नी द्वारा ११००० रु. की राशि प्रदान की गई।

गृह उद्योगशाला की देखरेख का कार्य श्री पूनमचन्दजी डागा और श्री संपतराजजी जैन को सौंपा गया।

सन् १९८०

सर्व सम्मति से निर्णय किया गया कि जवाहर किरणावलियों व अन्य साहित्य की बिक्री से प्राप्त राशि को जवाहर साहित्य फंड में जमा कर लिया जाय।

सन् १९८६

साहित्य प्रचार तथा फण्ड एकत्रित करने हेतु एक उपसमिति गठित की गई, जिसमें निम्नांकित सदस्य मनोनीत किये गये —

१. श्री हंसराजजी सुखलेचा २. श्री सुमतिलाल बांठिया ३. श्री निर्मल कुमार पूगलिया

सन् १९८८

श्री सुमतिलालजी बांठिया को ट्रस्टी चुना गया। श्री चम्पालालजी बांठिया की स्मृति में व्याख्यान माला प्रारम्भ करने का प्रस्ताव पारित किया गया। जवाहर किरणावलियों का टाईटल नया तैयार कराया गया।

सन् १९९१

शाला एवं महाविद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता प्रारम्भ कर प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय स्थान प्राप्तकर्ता को पुरस्कृत करने का निर्णय किया गया। श्रीमान् माणकचन्दजी रामपुरिया द्वारा ११००० रु. की राशि भेंट की गई जिसके ब्याज की राशि से प्रतिवर्ष योग्य विद्वान या छात्र को प्रदीप कुमार रामपुरिया पुरस्कार से सम्मानित किया जाने का प्रावधान है। श्री अन्नारामजी सुदामा (राजस्थानी के विद्वान) को १००० रु. की राशि प्रदान करने हेतु चयनित किया गया एवं श्री बलदेवदत्त सेवग को बी. काम. मेरिट लिस्ट में आने से २५१ रु. की राशि प्रदान की गई। श्री सुदामा ने पुरस्कार स्वीकार नहीं किया तो इसे भी ११००० रु. में मिला दिया गया। इस राशि से प्राप्त ब्याज की राशि से स्नातक स्तर पर जिले में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को पुरस्कार प्रदान करने का निर्णय लिया गया।

सन् १९९२

स्वर्ण जयन्ती स्मारिका प्रकाशित करने का निर्णय किया गया। इसकी रूपरेखा बनाई गई व क्षेत्रीय समितियों का गठन किया गया। चन्दा एकत्रित कर संस्था की ध्रुव निधि में वृद्धि करना भी प्रस्तावित है।

पौषधशाला के हॉल के पीछे खुली जगह में वरांडा बनाकर इसका विस्तार किये जाने का निर्णय लिया गया।

संस्था का छात्रावास सन् १९५३-५४ तक चलने के बाद बन्द हो गया था, इसे पुनः चालू करने हेतु भवन निर्माण की योजना भी बनी। अन्तिम सत्र में प्रारम्भिक से बी.ए. तक अध्ययन करने वाले २४ छात्र थे। ये छात्र कानोड़, छोटी सादड़ी, बड़ी सादड़ी, संगरिया मण्डी, जोधपुर, बम्बोरा, देशनोक, गंगाशहर, रोहिणा, उदयपुर आदि स्थानों के थे। छात्रों को जैन धर्म का अध्ययन भी कराया जाता था। हिन्दी साहित्य सम्मेलन व धार्मिक परीक्षा बोर्ड रतलाम की परीक्षाओं में भी छात्र प्रविष्ट हुए। संस्था गौरवान्वित है कि यहां के छात्रों में अनेक प्रतिभावान छात्र आज समाज, धर्म, राष्ट्र की सेवा में संलग्न है। सर्वश्री भूपराज जी जैन, लक्ष्मीलालजी दक, डॉ. मोहनलालजी मेहता, अमृतकुमारजी मेहता, सौभाग्यमल जैन, मिट्ठालाल मुर्डिया, पार्श्व कुमार मेहता आदि के नाम उल्लेखनीय है।

सन् १९९३

श्रीमद् जवाहराचार्य की ५०वीं स्वर्गारोहण तिथि आषाढ़ शुक्ला अष्टमी तदनुसार दिनांक २७ जून १९९३ को खूब त्याग तप आराधनापूर्वक मनाये जाने का निर्णय किया गया तथा इस पुण्य दिवस पर बाहर से

...को बुलाकर आचार्य श्री जवाहरलालजी पर व्याख्यान का कार्यक्रम आयोजित करने का निर्णय लिया गया। ...इंदोर से रिटायर्ड जज श्री मुरारीलालजी तिवारी पधारे और आचार्यश्री नानेश एवं युवाचार्य प्रवर के पावन ...में कार्यक्रम आयोजित किया गया।

संस्था की स्थापना की योजना दिनांक २६/४/४४ की साधारण सभा की मीटिंग के सर्वसम्मति से ...हुई थी और इसे स्थापना दिवस मानकर दिनांक २६/४ /१६६४ से संस्था का त्रिदिवसीय स्वर्ण जयन्ती ...भव्य समारोहपूर्वक मनाने का निर्णय लिया गया और इसी मौके पर स्वर्ण जयन्ती स्मारिका का लोकार्पण ...करवाने का निर्णय लिया गया एवं संस्था के प्रमुख संस्थापक सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति ग्रंथ का भी ...करवाने का निर्णय लिया गया। इनके अतिरिक्त स्वर्ण जयन्ती वर्ष में अनेक महत्वाकांक्षी योजनाएँ भी ...न्वित की जा रही हैं।

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर के पदाधिकारियों की कार्यकाल विवरणिका

अध्यक्ष	अवधि
श्री कानीरामजी बांठिया	१०/५/४४ से २/ १२/४६
श्री हनुवंतमलजी सेठिया	८/१२/४६ से १०/ ६/६७
श्री चांदमलजी डागा	११/६/६७ से २२/ ८/७०
श्री छगनमलजी सोनावत	२३/८/७० से २० /१०/८४
श्री कालूरामजी डागा	२१/१०/८४ से १६ /१०/८५
श्री अमरचन्दजी लूणिया	२०/१०/८५ से ६/ ६/८६
श्री कालूराजजी डागा	७/६/८६ से १०/ १२/८८
श्री सुन्दरलालजी तातेड़	११/१२/८८ से १३ /५/८६
श्री भंवरलालजी कोठारी	१४/५/८६ से २० /४/६१
श्री वालचन्दजी सेठिया	२१/४/६१ से वर्तमान तक

मंत्री

श्री चम्पालालजी बांठिया	१०/५/४४ से २४/ ७/७६
श्री जतनलालजी लूणिया	२५/७/७६ से २०/ १०/८४
श्री प्रतापचन्दजी भूरा	२१/१०/८४ से ६/ ६/८६
श्री इन्द्रचन्द्रजी सोनावत	७/६/८६ से १०/ १२/८८
श्री सुमतिलालजी बांठिया	११/१२/८८ से वर्तमान तक

कोषाध्यक्ष

श्री चम्पालालजी बांठिया	१०/५/४४ से २६/ ६/७५
श्री जसकरणजी बोथरा	३०/६/७५ से १३/ ५/८६
श्री इन्द्रचन्द्रजी सोनावत	१४/५/८६ से वर्तमान तक

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर के वर्तमान पदाधिकारी एवं सदस्य

ट्रस्टीगण :

श्री रिखबचन्दजी बैद, दिल्ली
श्री जसकरणजी बोथरा, गंगाशहर
श्री भंवरलालजी कोठारी, बीकानेर
श्री सुमतिलालजी बांठिया, भीनासर

पदाधिकारीगण :

अध्यक्ष	:	श्री बालचन्दजी सेठिया, भीनासर
उपाध्यक्ष	:	श्री भंवरलालजी बडेर, बीकानेर
मंत्री	:	श्री सुमतिलालजी बांठिया, भीनासर
उपमंत्री	:	श्री कोडामलजी बोथरा, गंगाशहर
सहमंत्री	:	श्री निर्मल कुमारजी पुगलिया, भीनासर
कोषाध्यक्ष	:	श्री इन्द्रचन्दजी सोनावत, गंगाशहर
पुस्तकाध्यक्ष	:	श्री खेमचन्दजी छल्लाणी, गंगाशहर

कार्यकारिणी सदस्य

बीकानेर— १. सर्वश्री सुन्दरलालजी तातेड़
२. खेमचन्दजी सेठिया
३. नथमलजी सिंघी
४. इन्द्रचन्दजी दुगड़
५. भंवरलालजी कोठारी
६. भंवरलालजी बडेर
७. पीरदानजी पारख
८. हंसराजजी सुखलेचा
९. सुरेशजी गोलछा
१०. सुरेन्द्र कुमारजी पारख
११. मूलचन्दजी डागा

गंगाशहर— १. सर्वश्री कोडामलजी बोथरा
२. इन्द्रचन्दजी सोनावत

३. सर्वश्री जसकरणजी वोथरा
४. चम्पालालजी डागा
५. नेमचन्दजी सुराणा
६. हड़मानमलजी सुराणा आत्मज श्री मेघराज जी
७. खेमचन्दजी छल्लाणी

[illegible]— १. सर्वश्री सुमतिलालजी वांठिया
२. मूलचन्दजी सेठिया
३. वालचन्दजी सेठिया
४. निर्मलकुमारजी पुगलिया
५. डालचन्दजी मिन्नी
६. लहरचन्दजी सेठिया
७. विमलचन्दजी सेठिया

इनके अतिरिक्त त्रिवेणी संघ में प्रत्येक संघ के निम्नांकित सम्मानित सदस्य चयनित किये गए :

[illegible]नेर— श्री केशरीचन्दजी सेठिया आत्मज श्री जेठमलजी
[illegible]शहर— श्री रिखबचन्दजी वैद आत्मज श्री जेसराजजी
[illegible]नासर— श्री जीवराजजी सेठिया आत्मज श्री भीखमचन्दजी

स्वर्ण जयन्ती समारोह समिति

श्री [illegible]चन्दजी वैद, दिल्ली (संयोजक)
श्री [illegible]लालजी कोठारी (स्वागताध्यक्ष)
श्री [illegible]लालजी वडेर, वीकानेर
श्री [illegible]मलजी तातेड़, वीकानेर
श्री [illegible]राजजी सुखलेचा, वीकानेर
श्री [illegible]चन्दजी दुगड़, वीकानेर
श्री [illegible]चन्दजी डागा, वीकानेर
श्री [illegible]चन्दजी सेठिया, भीनासर
श्री [illegible]लालजी वांठिया, भीनासर
श्री चम्पालालजी डागा, गंगाशहर
श्री कोडामलजी वोथरा, गंगाशहर
श्री इन्द्रचन्दजी सोनावत, गंगाशहर
श्री धूड़मलजी डागा, गंगाशहर
श्री खेमचन्दजी छल्लाणी, गंगाशहर
श्री महेन्द्रकुमारजी मिन्नी, गंगाशहर
श्री चंचलकुमारजी वोथरा, गंगाशहर
श्री लहरचन्दजी सेठिया, भीनासर
श्री निर्मलकुमारजी पुगलिया, भीनासर

स्वर्ण जयन्ती समारोह उपसमितियां

दिल्ली समिति

श्री रिखबचन्दजी बैद

श्री रतनलालजी हीरावत

श्री शांतिलालजी बोथरा

श्री विमलचन्दजी डागा

श्री सूरजमलजी पींचा

बैंगलौर समिति

श्री सोहनलालजी सिपानी

श्री धनराजजी डागा

श्री शांतिलालजी सांड

कलकत्ता समिति

श्री भंवरलालजी बैद

श्री सरदारमलजी कांकरिया

श्री भंवरलालजी बोथरा

श्री जतनलालजी लूणिया

श्री रिद्धकरणजी बोथरा

श्री धीरजलालजी बांठिया

श्री किशनलालजी बोथरा

श्री तोलारामजी बोथरा

जयपुर समिति

श्री गुमानमलजी चोरड़िया

श्री पीरदानजी पारख

श्री हरिसिंहजी रांका

मद्रास समिति

श्री केशरीचन्दजी सेठिया

श्री तोलारामजी मिन्नी

श्री सुगनचन्दजी धोका

श्री कुसुमकुमारजी सेठिया

श्री उगमराजजी मूथा

बम्बई समिति

श्री सुन्दरलालजी कोठारी

श्री भंवरलालजी नाहटा

श्री सुरेन्द्रजी दस्साणी

आसाम समिति

श्री जीवराजजी सेठिया, सिल्चर

श्री सम्पतलालजी सिपानी

श्री कन्हैयालालजी पटवा, करीमगंज

श्री शिखरचन्दजी सेठिया, तेजपुर

श्री पुखराजजी बोथरा, गौहाटी

अहमदाबाद समिति

श्री माणकचन्दजी मिन्नी

श्री उत्तमचन्दजी मेहता

श्री मोतीलालजी मालू

पिपलिया कलां

श्री पंकज पी. शाह

त्रिदिवसीय स्वर्ण जयन्ती महोत्सव एक रिपोर्ट

दिनांक २९-३० अप्रेल व १ मई १९९४

२९ अप्रेल, १९९४ 'भजन संध्या'

शुक्रवार दिनांक २९ अप्रेल, १९९४ को श्री जवाहर विद्यापीठ भीनासर द्वारा अपनी स्थापना के ५० वर्ष पूर्ण करने के उपलक्ष्य में त्रिदिवसीय स्वर्ण जयन्ती महोत्सव दिनांक २९-३० अप्रेल व १ मई १९९४ को खूब धूमधाम के साथ मनाया गया। दिनांक २९ अप्रेल शुक्रवार रात्रि ८.०० बजे भजन संध्या आयोजित की गई, जिसमें श्री विचक्षण महिला मण्डल, श्री वल्लभ महिला मण्डल, श्री वीर मण्डल, श्री जैन मण्डल, श्री कोचर मण्डल व श्री [illegible]—सभी स्थानीय मंडलों ने अपने दो-दो भजनों को प्रस्तुत कर श्रोताओं का भावपूर्ण मनोरंजन किया। इसके [illegible] श्री वीरेन्द्र अभाणी कु. सुनीता डागा व कु. सरिता भंसाली आदि ने भी अपने भजन प्रस्तुत कर श्रोताओं का [illegible] किया। भजन संध्या रात को १२ बजे तक चली, भजनों की सुमधुर स्वर लहरियों से श्रोता झूम उठे।

३० अप्रेल १९९४ 'सेठ श्री चम्पालालजी बाँठिया स्मृति व्याख्यानमाला'

शनिवार दिनांक ३० अप्रेल १९९४ को दोपहर ३.०० बजे सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति व्याख्यानमाला के अन्तर्गत विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता का विषय था 'अहिंसा, शाकाहार और भारतीय संस्कृति'। श्री विचक्षण महिला मण्डल के मंगलाचरण से कार्यक्रम की शुरुआत हुई, इसके पश्चात् कार्यक्रम संचालक श्री जसकरण सुखानी ने प्रतियोगिता की नियमावली बताकर प्रतियोगिता की शुरुआत करवाई। पहले विद्यालय स्तरीय प्रतियोगिता सम्पन्न हुई। बाद में महाविद्यालय स्तर के विद्यार्थियों ने अपने विचार ५-५ मिनट में रखे। निर्णायक मण्डल में थे सर्वश्री धर्मचन्दजी जैन, डॉ. [illegible]चन्दजी नाहटा और डॉ. विष्णुदत्तजी आचार्य, जिन्होंने प्रतियोगियों की भाषण-शैली, विषय और प्रस्तुति के आधार पर उनका मूल्यांकन किया। तीनों निर्णायकों द्वारा दिये गये अंकों के योग के आधार पर निम्नलिखित प्रतियोगी क्रमशः पहले, दूसरे और तीसरे स्थान पर रहे —

विद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम स्थान — कु. सीमा बांठिया, बीकानेर
द्वितीय स्थान — कु. विजय भारती साण्ड, भीनासर
तृतीय स्थान — श्री सुधीर कुमार बोथरा, गंगाशहर

महाविद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता के परिणाम

प्रथम स्थान — कु. सुन्दरी वैद, गंगाशहर
द्वितीय स्थान — श्री राजेश वैद, गंगाशहर
तृतीय स्थान — कु. सुनीता जैन, गंगाशहर

प्रतियोगिता के समापन के पश्चात् समारोह के मुख्य अतिथि श्री रमेशचन्द्रजी रूंगटा, जिला कलेक्टर वीकानेर ने संस्था के संस्थापक स्वर्गीय सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया के चित्र को माल्यार्पण कर अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की। उनकी स्मृति में प्रतिवर्ष संस्था द्वारा महावीर जयन्ती के अवसर पर यह भाषण प्रतियोगिता विद्यार्थियों में धर्म के प्रति आस्था जाग्रत करने एवं उनमें वक्तृत्व प्रतिभा का विकास करने हेतु आयोजित की जाती है, इस वर्ष संस्था की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर आयोजित की गई। इसके बाद संस्था के पदाधिकारियों द्वारा मुख्य अतिथि श्री रूंगटा साहब, कार्यक्रम अध्यक्ष श्री गुमानमलजी सा चोरड़िया व संयोजक श्री रिखबचन्दजी जैन का माल्यार्पण कर स्वागत किया। स्वागत गीत सेठ श्री हमीरमलजी बांठिया राजकीय उच्च प्राथमिक कन्या विद्यालय की वालिकाओं ने प्रस्तुत किया। इसके पश्चात् कार्यक्रम अध्यक्ष श्री गुमानमलजी चोरड़िया व संयोजक श्री रिखबचन्दजी जैन ने अपना संक्षित उद्बोधन प्रस्तुत किया। अपने उद्बोधन के पश्चात् संयोजक महोदय ने मुख्य अतिथि, तीनों निर्णायकों व कार्यक्रम संचालक को जवाहर साहित्य भेंट किया। इसके उपरान्त मुख्य अतिथि जिला कलेक्टर ने आगन्तुक श्रोताओं को उद्बोधित किया और उद्बोधन के पश्चात् मुख्य अतिथि श्रीमान् रूंगटा साहब ने व्याख्यानमाला प्रतियोगिता में भाग लेने वाले सभी प्रतियोगियों को प्रतियोगिता में भाग लेने का प्रमाण-पत्र व जवाहर किरणावली की १-१ प्रति भेंट की व्याख्यानमाला प्रतियोगिता के विजेताओं को सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति पुरस्कार मुख्य समारोह में प्रदान करने का निर्णय लिया गया। तत्पश्चात् महिला सिलाई, बुनाई, कढ़ाई कार्य में प्रथम एवं द्वितीय स्थान प्राप्त करने वाली छात्राओं को प्रमाण-पत्र व पुरस्कार प्रदान किये। सिलाई/बुनाई का विशेष पुरस्कार श्रीमती शशि जैन को दिया गया श्रीमान रूंगटा साब ने व्याख्यानमाला के प्रतियोगियों की भाषण शैली से प्रसन्न होकर प्रतियोगिता के विजेताओं को प्रशासन की तरफ से भी पुरस्कृत करने की घोषणा की। अन्त में संस्था के मंत्री सुमतिलाल बांठिया द्वारा आगन्तुक महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त किया गया इसके पश्चात् विशिष्ट मेहमानों एवं सभी आगन्तुकों ने महिला उद्योगशाला की प्रदर्शनी का अवलोकन किया।

१ मई १९९४ 'स्वर्ण जयन्ती महोत्सव मुख्य समारोह'

रविवार दिनांक १ मई १९९४ को स्वर्ण जयन्ती महोत्सव का मुख्य कार्यक्रम बड़ी भव्यता से मनाया गया। इसमें मुख्य अतिथि श्रीमान् देवीसिंहजी भाटी नहर एवं सिंचाई मंत्री राजस्थान सरकार थे व विशिष्ट अतिथि डॉक्टर रामप्रतापजी खाद्य एवं नागरिक आपूर्ति राज्यमंत्री राजस्थान सरकार थे। मन्त्री द्वय ठीक १०.४५ वजे जवाहर विद्यापीठ पहुँच गये। सर्व प्रथम मुख्य अतिथि ने जवाहर विद्यापीठ से जवाहर हाई स्कूल तक के 'जवाहर मार्ग' नामकरण पट्टिका का अनवारण किया जिसकी स्वीकृति दो दिन पूर्व ही नगर परिषद बीकानेर द्वारा प्रदान की गई थी—इसके पश्चात् भीनासर प्रवेश स्थल, जहां जवाहर विद्यापीठ का सुन्दर भवन बना हुआ है, के सामने प्रस्तावित भव्य जवाहर द्वार का शिलान्यास माननीय श्री देवीसिंहजी भाटी सिंचाई एवं नहर मन्त्री राजस्थान सरकार के कर कमलों से सम्पन्न हुआ। भीनासर के प्रवेश स्थल पर बनने वाले इस जवाहर द्वार के अन्तर्गत सड़क के दोनों ओर संगमरमर के दो सुन्दर स्तम्भ बनाये जायेंगे। जिसमें एक तरफ नवकार मंत्र व तीन तरफ आचार्य श्री जवाहरलालजी म.सा. की सूक्तियाँ लिखवाई जायेगी। इससे जवाहरलालजी म.सा. के उपदेशों का अधिकाधिक प्रचार प्रसार हो सकेगा, जो संस्था की स्थापना का प्रथम उद्देश्य है। यह द्वार संस्था की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर उन महान् क्रांतिकारी जवाहराचार्य के प्रति श्रद्धांजलि होगी। इसके निर्माण का समस्त खर्चा श्रीमान रिखबचन्दजी जैन, संयोजक स्वर्ण-जयन्ती समारोह समिति द्वारा वहन किया जायेगा। नामपट्ट अनावरण एवं जवाहर द्वार के शिलान्यास के पश्चात् स्वर्ण जयन्ती महोत्सव में भाग लेने मुख्य अतिथि व विशिष्ट अतिथि संस्था के प्रांगण

... मंच पर पधारे। सर्वप्रथम मंगलाचरण एवं उसके बाद स्वर्ण जयन्ती गीत विचक्षण महिला मण्डल द्वारा ... किया गया। इसके बाद मुख्य अतिथि श्री देवीसिंहजी भाटी विशिष्ट अतिथि डॉ. रामप्रतापजी कार्यक्रम ... श्री गुमानमलजी चोरड़िया एवं संयोजक श्री रिखबचन्दजी बैद का माल्यार्पण द्वारा स्वागत किया गया। ... के अनन्तर श्रीमद् जवाहराचार्य का परिचय श्री गजेन्द्र सूर्या इन्दौर ने प्रस्तुत किया। संस्था का संक्षिप्त ... संस्था मंत्री सुमतिलाल बांठिया द्वारा प्रस्तुत किया गया मंत्री प्रतिवेदन की प्रतियाँ दर्शकों में वितरित की ... इसके बाद संयोजकीय वक्तव्य श्रीमान् रिखबचन्दजी जैन ने दिया एवं स्वागताध्यक्ष श्री भंवरलालजी कोठारी ... भारतीय अणुव्रत समिति के अध्यक्ष श्री धर्मचन्दजी चौपड़ा ने अपने संक्षिप्त वक्तव्य प्रस्तुत किए। ... स्वर्ण जयन्ती स्मारिका लोकार्पण हेतु संस्था मंत्री ने मुख्य अतिथि के सम्मुख प्रस्तुत की। स्मारिका ... के बाद स्मारिका की प्रथम प्रति मुख्य अतिथि ने संयोजक श्रीमान् रिखबचन्दजी जैन को भेंट की एवं ... विशिष्ट व्यक्तियों में भी स्मारिका की प्रतियाँ बंटवाई गई। इसके पश्चात् संस्था के संस्थापक सेठ ... लालजी बांठिया स्मृति-ग्रंथ लोकार्पण हेतु संस्था अध्यक्ष ने मुख्य अतिथि के सम्मुख प्रस्तुत किया, इसके ... के सम्पादक श्री उदय नागोरी ने ग्रंथ व सेठ साहब के बारे में संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया तथा बतलाया ... ग्रंथ संस्था द्वारा इसीलिए प्रकाशित किया जा रहा है कि लोग उनके गौरवपूर्ण जीवन से कुछ प्रेरणा ले ... इस ग्रंथ के प्रकाशन का समस्त खर्चा उनके परिवार द्वारा देना सहर्ष स्वीकार किया गया। मुख्य अतिथि ... ग्रंथ के लोकार्पण के बाद इसकी प्रथम प्रति कार्यक्रम अध्यक्ष श्री गुमानमलजी चोरड़िया को भेंट की।

संस्था की साधारण सभा में सर्व सम्मति से निर्णय लिया गया था कि संस्था अपने दोनों प्रमुख ... स्वर्गीय सर्व श्री भैरूदानजी सेठिया व चम्पालालजी बांठिया को स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर मरणोपरान्त ... भूषण की पदवी देकर सम्मानित करेगी। इन दोनों महानुभावों ने समाज को जो सेवाएँ दी हैं वे अविस्मरणीय ... संस्था की स्थापना में भी इनकी अहम भूमिका रही है; अतः निर्णय के अनुसार इस अवसर पर मुख्य ... ने श्रीमान् भैरूंदानजी सेठिया का समाज भूषण पदवी सम्मान पत्र उनके परिवार में से किसी के उपस्थित ... पाने के कारण श्री भंवरलालजी बडेर को प्रदान किया तथा स्वर्गीय सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया का ... भूषण पदवी सम्मान-पत्र उनकी धर्मपत्नी श्रीमती तारादेवी बांठिया को प्रदान किया।

साधारण सभा में हुए सर्व सम्मत निर्णय के अनुसार संयोजक श्री रिखबचन्दजी जैन को समाज-रत्न की ... सम्मान पत्र भेंट किया गया। वस्तुतः इनके कारण ही संस्था की यह स्वर्ण जयन्ती सफल हुई है, इन्होंने ... स्वर्ण जयन्ती चन्दे में १,५१,०००/- का प्रभूत सहयोग दिया व स्मारिका में पिछले पृष्ठ का २१०००/- ... प्रदान किया। इसके अलावा पिछले दो वर्ष में जवाहर किरणावली के सैट पर अतिरिक्त २५% छूट ... तरफ से दी जा रही है, जिससे किरणावलियों की बिक्री में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है एवं जवाहरलालजी ... के उपदेशों का अधिकाधिक प्रचार-प्रसार सम्भव हो सका। आप श्री ने इस संस्था के अलावा भी अन्य ... को भी मुक्तहस्त से दान दिया है तथा समाज को विपुल सेवाएँ प्रदान की है।

इसके पश्चात् साधारण सभा में हुए सर्व सम्मत निर्णय के अनुसार स्वागताध्यक्ष स्वर्ण जयन्ती समारोह ... श्री भंवरलालजी कोठारी को दिये जाने वाले समाज-रत्न पदवी सम्मान-पत्र का वाचन किया गया, समाज ... आपकी विशिष्ट सेवाओं को कभी विस्मृत नहीं किया जा सकता है। इस संस्था के प्रति भी आपका ... है। संस्था के किसी कार्य के लिए आप हर समय तत्पर रहते हैं, ... संस्था अपना परम कर्त्तव्य समझती है लेकिन उनके बड़े भाई श्री ...

अचानक स्वर्गवास हो जाने के कारण वे समारोह में उपरोक्त सम्मान लेने के लिए मौजूद नहीं थे अतः यह सम्मान वाद में प्रदान किया जायेगा।

संस्था द्वारा प्रतिवर्ष स्नातक स्तर कला/विज्ञान/वाणिज्य में बीकानेर जिले के अधिकतम अंक प्राप्तकर्ता को प्रदीप कुमार रामपुरिया स्मृति पुरस्कार देकर सम्मानित किया जाता है। इसके अन्तर्गत गत वर्ष तक ५०१/- नगदी व प्रशस्ति-पत्र प्रदान किया जाता था लेकिन इस वर्ष श्रीमान् माणकचन्दजी रामपुरिया ने पुरस्कार की स्थायी निधि में २०,०००/- की वृद्धि की है अतः इस वर्ष से १००१/- नगदी व प्रशस्ति पत्र देने का निर्णय किया गया था और इसी क्रम में गत वर्ष में बी.कॉम. में अधिकतम अंक प्राप्तकर्ता जैन कॉलेज के श्री मनोज कुमार छाजेड़ को, वी.ए. में अधिकतम अंक प्राप्तकर्ता महारानी सुदर्शना कॉलेज की सुश्री नीरा भाटिया को १००१/- नगदी व प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। बी.एस.सी. में अधिकतम अंक प्राप्तकर्ता डूंगर कॉलेज के राजीव व्यास परीक्षा में व्यस्त होने के कारण पुरस्कार लेने उपस्थित नहीं हो सके अतः उनका पुरस्कार उनके घर जाकर प्रदान किया जायेगा निर्णय लिया।

तत्पश्चात् दिनांक ३० अप्रेल, १६६४ को आयोजित हुई सेठ श्री चम्पालालजी बांठिया स्मृति व्याख्यानमाला में विद्यालय एवं महाविद्यालय स्तरीय भाषण प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान पर रहे विजेताओं को पुरस्कार एवं प्रमाण-पत्र देकर सम्मानित किया गया। तत्पश्चात् २६ अप्रेल को आयोजित भजन-संध्या में भाग लेने वाली मण्डलियों में क्रमशः श्री वीर मण्डल, श्री जैन मण्डल, श्री कोचर मण्डल, श्री जैन परिषद, श्री विचक्षण महिला मण्डल, श्री वल्लभ महिला मण्डल को स्मृति-चिह्न प्रदान कर सम्मानित किया गया।

संस्था की महिला उद्योग शाला में बेहतर कार्य प्रदर्शन के लिए प्रशिक्षिका श्रीमती सन्तोष आचार्य को प्रशंसा-पत्र एवं पुरस्कार प्रदान किया गया एवं संस्था के लाइब्रेरियन श्री मानमल सेठिया को भी उनकी प्रशंसनीय सेवाओं के लिए पुरस्कृत किया गया। इसके पश्चात् गंगाशहर अस्पताल के डाक्टर श्री किशनलालजी जैन को भी उनके द्वारा दी गई उल्लेखनीय सेवाओं के लिए अभिनन्दन-पत्र देकर सम्मानित किया गया।

अन्त में कार्यक्रम अध्यक्ष श्री गुमानमलजी चोरड़िया ने समारोह के मुख्य अतिथि श्री देवीसिंहजी भाटी एवं विशिष्ट अतिथि डा. रामप्रताप जी को विशेष तौर पर बनवाया गया प्रस्तावित जवाहर द्वार का मॉडल स्मृति-चिह्न के रूप में भेंट किया। कार्यक्रम संचालक एवं स्वर्णजयन्ती स्मारिका के सम्पादक डॉ. किरणचन्दजी नाहटा को भी स्मृति चिह्न देकर सम्मानित किया गया। उन्होंने पिछले १५ दिनों में अथक मेहनत करके स्मारिका का मैटर तैयार कराके सम्पादन किया और आचार्य श्री जवाहरलालजी की जीवनी को पढ़कर इतने प्रभावित हुए कि अपनी सेवाएँ संस्था को निःशुल्क प्रदान की।

अन्त में कार्यक्रम अध्यक्ष श्री गुमानमलजी चोरड़िया, विशिष्ट अतिथि डा. रामप्रतापजी व मुख्य अतिथि श्री देवीसिंहजी भाटी ने अपना उद्बोधन दिया। अपने उद्बोधन में श्री देवीसिंहजी भाटी ने कहा कि हमारे पूर्वज महापुरुषों व आचार्यों द्वारा नैतिकता एवं चरित्र के विकास के लिए किये गये प्रयासों को शिक्षा से जोड़ा जाना चाहिए। श्री जवाहराचार्य के प्रति विशेष सम्मान व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा कि श्रीमद् जवाहराचार्य का प्रखर राष्ट्रभक्ति से परिपूर्ण चरित्र सभी के लिए वन्दनीय है।

डॉ. राम प्रतापजी ने अपने उद्‌वोधन में शिक्षा की महत्ता पर प्रकाश डाला। उन्होंने कहा कि शिक्षा के विना मनुष्य का विकास नहीं हो सकता। समाज का यह दायित्व है कि वह शिक्षा एवं साक्षरता के कार्यक्रम में अपना पूरा योगदान दे।

कार्यक्रम के अध्यक्ष श्रीमान् गुमानमलजी चोरड़िया ने देश में बढ़ती मद्यपान की प्रवृत्ति पर चिन्ता व्यक्त करते सम्पूर्ण मद्यनिषेध की बात कही और साथ ही यह भी कहा कि भारत जैसे देश में आजादी के बाद भी बन्द न होना हमारे लिए शर्म की बात है। हमें तत्काल इस दिशा में ठोस प्रयत्न करने चाहिए। उद्बोधन के संयोजक श्री रिखबचन्दजी जैन ने संस्था द्वारा आचार्य श्री जवाहरलालजी के व्याख्यानों के आधार पर जवाहर किरणावलियों की 11 पुस्तकों का सैट मुख्य अतिथि व विशिष्ट अतिथि को भेंट किया। इसके जसकरणजी सुखानी ने अपना संक्षिप्त वक्तव्य प्रस्तुत किया और अन्त में संस्था अध्यक्ष श्री बालचन्दजी आगन्तुक महानुभावों के प्रति आभार व्यक्त किया। कार्यक्रम समापन के पश्चात् विशिष्ट अतिथियों ने प्रयोगशाला की प्रदर्शनी का अवलोकन किया। इस प्रकार त्रिदिवसीय स्वर्ण जयन्ती महोत्सव के कार्यक्रम सम्पन्न हुए। कार्यक्रम का संचालन डॉ. किरणचन्दजी नाहटा ने बहुत सुन्दर रूप से किया। यह कार्यक्रम की सफलता का द्योतक है कि संस्था के प्रांगण के पीछे तक लगी सभी कुर्सियां भर गई और लोग पीछे तक खड़े रहे आगन्तुक महानुभाव समारोह समापन तक शान्तिपूर्वक विराजे रहे।

कार्यक्रम की सफलता का प्रमुख श्रेय संस्था मंत्री सुमतिलालजी बांठिया को है जिन्होंने पिछले एक साल लिए मेहनत की। स्वर्ण जयन्ती हेतु चन्दा एवं स्मारिका हेतु विज्ञापन एकत्रित करने के लिए जी जान से लिए संस्था की साधारण सभी की मीटिंग में मंत्री को इस कार्य के लिए अभिनंदित करने का प्रस्ताव रखा मंत्री ने कहा यह उनका कर्त्तव्य है और पद पर रहते किसी प्रकार का अभिनन्दन स्वीकार करने से स्पष्ट इन्कार दिया। वैसे कार्यक्रम की सफलता में प्रमुख सहयोग रहा संयोजक श्री रिखबचन्दजी जैन का एवं सदस्य श्री भँवरलालजी कोठारी का, जिनके प्रयास व सम्बल के कारण कार्यक्रम सफलतापूर्वक सम्पन्न हो चन्दा एकत्रित करवाने में प्रमुख सहयोग श्री भंवरलालजी वडेर व श्री हँसराजजी सुखलेचा का रहा। में विज्ञापन एकत्रित करवाने में स्थानीय समिति में बीकानेर में श्री हंसराजजी सुखलेचा व नथमलजी गंगाशहर से श्री खेमचन्दजी छल्लाणी, श्री धूड़मलजी डागा व चंचलजी बोथरा का रहा तथा बाहर सभी लिए गठित उपसमितियों में दिल्ली से श्री रिखबचन्दजी वैद व शांतिलालजी बोथरा का, बैंगलोर समिति [illegible] डागा का, कलकत्ता समिति के श्री धीरजलालजी बांठिया व तोलारामजी बोथरा का, जयपुर से श्री गुमानमलजी सा चोरड़िया का, मद्रास समिति से श्री तोलारामजी मिन्नी का, बम्बई समिति से [illegible] दस्साणी का, आसाम समिति से सिलचर से श्री जीवराजजी सेठिया व गौहाटी से श्री [illegible] का विशेष सहयोग रहा। समिति से बाहर के व्यक्तियों से विज्ञापन एकत्रित करने में प्रमुख सहयोग [illegible] सेठिया भीनासर व चुन्नीलालजी सोनावत गंगाशहर का रहा। अन्य कार्यक्रमों में विशेष सहयोग [illegible] जी सोनावत का रहा। इस प्रकार सभी के सहयोग से स्वर्ण जयन्ती महोत्सव सफलतापूर्वक मनाने में हो सके एवं विशेष रूप से धन्यवाद एक आभार उन सभी दानवीर महानुभावों एवं प्रतिष्ठान/संस्थान [illegible] संचालकों का है जिन्होंने स्वर्ण जयन्ती के निर्धारित लक्ष्यों की पूर्ति हेतु मुक्तहस्त से चन्दा एवं स्मारिका हेतु अधिकाधिक विज्ञापन प्रदान कर स्वर्ण जयन्ती को सार्थक, चिरस्मरणीय एवं [illegible] बनें। स्वर्ण जयन्ती के कार्यक्रम के प्रमुख अंशो को आकाशवाणी बीकानेर द्वारा [illegible] बीकानेर के सभी प्रमुख समाचार-पत्रों राजस्थान पत्रिका, दैनिक युगपक्ष, [illegible] [illegible] व धार एक्सप्रेस आदि ने स्वर्ण जयन्ती की रिपोर्ट को प्रमुखता से प्रकाशित किया।

सेवा, सरलता एवं सौम्यता की प्रतिमूर्ति, आदर्श श्रावकरत्न एवं संघनिष्ठता के प्रतीक

सेठ श्रीमान् चम्पालालजी वांठिया

को मरणोपरान्त सादर समर्पित

'समाज-भूषण'

—: सम्मान-पत्र :—

[illegible]

अदम्य उत्साह, स्फूर्ति एवं जीवट से ओत-प्रोत आपका जीवन जन-जन के लिए प्रेरक एवं स्मरणीय है। [illegible] व्यक्तित्व एवं प्रखर प्रतिभा द्वारा आपने समाज की प्रगति के लिए जो कार्य किये, वे स्तुत्य एवं अनुकरणीय हैं।

[illegible] श्रावक!

आपने उदात्त, सात्विक एवं मर्यादित रहकर आदर्श श्रावक का सागार धर्म पूर्ण आस्थापूर्वक निर्वहन किया। [illegible] विचार एवं व्यवहार में आप सदैव सहज रहे। भौतिक समृद्धि में भी आप निर्लिप्त एवं अप्रमत्त रहकर आत्माभिमुख [illegible] न वैभव प्रदर्शन की प्रवृत्ति रही और न बाह्य आडम्बर के प्रति आसक्ति।

[illegible]!

तत्कालीन बीकानेर नरेश एवं अनेक संस्थाओं से सम्मानित/अभिनंदित होकर भी आप अहं से दूर ही रहे। [illegible] एवं विशाल हृदयता ही आपके जीवन पाथेय रहे। आपने उद्योग-व्यापार, नगरपालिका, न्याय एवं वैधानिक क्षेत्रों में [illegible] प्रस्तुत किया तो धार्मिक, सामाजिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं से सम्बद्ध रहकर कीर्तिमानीय कार्य भी किए।

श्लाघनीय है आपकी दूरदर्शिता कि आपने तत्कालीन आलोचनाओं एवं विरोध के बावजूद भी बाल दीक्षा [illegible] विधेयक प्रस्तुत करने का साहस किया, जिसकी उपादेयता आज भी प्रासंगिक है।

[illegible] सेवा के प्रतीक!

शिक्षा प्रसार, सेवा एवं स्वावलम्बन के क्षेत्रों में अनेक संस्थाओं—जवाहर हाई स्कूल, वांठिया बालिका उच्च [illegible] विद्यालय, जवाहर विद्यापीठ, पौषधशाला धार्मिक ट्रस्ट की स्थापना कर आपने लोक कल्याण कार्यों को गतिशील [illegible] समाज को लोकप्रिय नेतृत्व भी प्रदान किया। श्रीमद् जवाहराचार्य की वाणी को कालजयी बनाने हेतु जवाहर [illegible] का प्रकाशन साहित्य के क्षेत्र में मील का पत्थर है।

[illegible]

पार्थिव रूप में आज आप विद्यमान भले ही नहीं, आपके कार्य समाज को सर्वदा अनुप्रेरित करते [illegible] [illegible] बहुमुखी सेवाओं के लिए हम आभारी हैं एवं सादर नमन सहित 'समाज भूषण' पदवी से सम्मानित कर [illegible] हैं।

[illegible]

श्री जवाहर विद्यापीठ, [illegible]

[illegible]

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर, बीकानेर (राजस्थान)
स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर

माननीय श्री रिखबचन्दजी जैन

को सादर समर्पित

'समाज-रत्न'

सम्मान-पत्र

विरल व्यक्तित्व !

गंगाशहर-बीकानेर के भव्य भूमि-पुत्र, प्रतिभा और पुरुषार्थ की प्रतिमूर्ति, विद्या और सम्पदा के सार्थक स्वरूप श्री रिखवचन्दजी जैन का व्यक्तित्व और कृतित्व सम्पन्नता के साथ उदारता, सम्पत्ति के साथ सुमति, विद्वत्ता के साथ ऋजुता के अपूर्व संगम का विरल उदाहरण है। अर्जन-कौशल और अर्पण-औदार्य से पुष्ट आपका जीवन और कर्म व्यक्ति के लिए प्रेरणा और समाज के लिए पोषण के स्रोत हैं।

प्रवन्ध-शास्त्र के मर्मज्ञ !

जादवपुर विश्वविद्यालय में प्रबन्ध संकाय के आचार्य पद पर रहकर प्रबन्ध-शास्त्र मर्मज्ञ विद्वान, प्रभावी शिक्षक और अधिकारी लेखक के रूप में प्रतिष्ठित हुए हैं। आपकी मेधा और चिन्तनशीलता में विलक्षण शक्ति है।

व्यवसाय कला के निष्णान्त !

प्रबन्ध के शास्त्रीय ज्ञान को व्यवसाय के व्यावहारिक धरातल पर यथार्थ कला में परिणत करने का अद्वितीय कौशल आपने होजयरी उद्योग के माध्यम से सिद्ध किया है। इस उद्योग की तकनीक और प्रबन्ध में आप द्वारा स्थापित कीर्तिमानों की राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मान्यता है — टी.टी. होजियरी संगठन का पूर्ण कम्प्युटरीकरण, अखिल भारतीय होजियरी उत्पादक संघ की अध्यक्षता, राष्ट्रीय एवं अन्तर्राष्ट्रीय होजियरी सम्मेलनों के आयोजन, संयोजन एवं उनमें योगदान और दायित्व आपकी बहुआयामी उद्यम-वृत्ति और व्यवसाय प्रबन्ध-शास्त्र और कला में निपुणता के स्वयंसिद्ध प्रमाण हैं। उद्योग व्यवसाय में आपकी सफलता अप्रतिम है।

निस्पृह समाजसेवी !

वैयक्तिक उपलब्धि और उपार्जन को समष्टि हित में उपयोग करने का आपका विवेक और सात्विक एवं सादगी पूर्ण जीवन के द्वारा गुण-सम्पदा की अभिवृद्धि की आपकी साधना अनुपम एवं अनुकरणीय है। वैयक्तिक उत्कर्ष को सामाजिक उत्थान हेतु संयोजित करने की प्रतिबद्धता टी. टी. चेरिटेबल ट्रस्ट, दिल्ली और सुगनी देवी जैसराज बेद अस्पताल और शोध केन्द्र बीकानेर से प्रमाणित होती है। आडम्बर से मुक्त रहकर आप मुक्तहस्त से विपुल आर्थिक सहयोग समान और धर्महितार्थ करते हैं। निस्पृह सेवावृत्ति आपका सहज स्वभाव है। आपकी दानवीरता से संपन्नता गरिमा मण्डित बुद्धि कौशल से हुई है। अभ्युदय एवं गुणशील व श्री से लोक मंगल हेतु आपके अभिक्रम अभिनन्दनीय एवं स्तुत्य हैं।

सतत उत्कर्ष की मंगलकामना के साथ आपको 'समाज-रत्न' की उपाधि से विभूषित करते हुए परम प्रसन्नता एवं अतीव गौरव का अनुभव करते हैं।

हम हैं
जवाहर विद्यापीठ, भीनासर
के सदस्यगण

स्वर्ण जयन्ती समारोह
भीनासर बीकानेर,
दिनांक : १ मई १९९४
वार : रविवार

श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर, बीकानेर (राजस्थान)
स्वर्ण जयन्ती समारोह के अवसर पर माननीय श्री भँवरलालजी कोठारी को समर्पित

समाज-रत्न

सम्मान-पत्र

[illegible] ! बीकानेर की सारस्वत धरती के पुत्र, रवीन्द्र कवीन्द्र के शान्ति निकेतन बोलपुर में शिक्षित, राष्ट्र और धर्म के संस्कार [illegible] ज्ञान, गुण और शील की एकता से संपोषित श्री भँवरलालजी कोठारी का जीवन और कर्म अभ्युदय और लोक मंगल की [illegible] का अनुपम उदाहरण है। सेवा, स्नेह, समन्वय और सात्विकता से आपका व्यक्तित्व, व्यक्ति और समाज के लिये वरेण्य है।

[illegible] ! आप हिन्दी साहित्य में प्रभाकर, कला व विधि में स्नातक होने के साथ दर्शन, धर्म, शास्त्र और साहित्य के मर्मज्ञ हैं। [illegible] के संवर्द्धन एवं प्रसार में सतत संलग्न रहे हैं। शिक्षण संस्थाओं, पुस्तकालयों, छात्रवृत्ति आदि बहुविध अभिक्रमों के संस्थापन, [illegible] में आप किशोरावस्था से ही सक्रिय योगदान करते रहे हैं। बीकानेर प्रौढ़ शिक्षण समिति के मंत्री एवं अध्यक्ष के रूप में लोक [illegible] में महत्वपूर्ण भूमिका रही है।

[illegible] उन्नायक ! समाज के उन्नयन हेतु सामाजिक कुरीतियों के उन्मूलन के लिये साहसिक संघर्ष किया। समाजोत्थान की हर प्रकार [illegible] में आपका नेतृत्व, मार्गदर्शन और सक्रिय सहयोग सदैव रहा है। हिन्दी प्रचारिणी सभा, महावीर जैन मण्डल, बीकानेर [illegible] विकास परिषद, धार्मिक-सामाजिक सेवा व प्रशिक्षण शिविर आदि आपकी रचनात्मक सोच और क्षमता के प्रतीक हैं। अखिल [illegible] साधुमार्गी जैन संघ के मंत्री के रूप में आपकी धर्म साधना की प्रवृत्तियाँ सुज्ञात हैं।

[illegible] विकासक ! आप सफल, सम्मानित व्यवसायी होने के साथ ही बीकानेर में उद्योग और व्यापार के विकास हेतु प्रयासरत रहे [illegible] बीकानेर व्यापार और उद्योग मण्डल के आठ वर्ष तक अध्यक्ष के रूप में महत्वपूर्ण सेवाएँ दीं। ऊन के व्यापार और ऊनी खादी के [illegible] को संबल दिया। केन्द्रीय सहकारी बैंक के निदेशक के रूप में सहकारिता को पुष्ट किया।

[illegible] रक्षा के प्रहरी ! स्वाधीनता के पश्चात् हुये युद्धों के समय राष्ट्र के समक्ष उपस्थित कठिन परिस्थितियों में स्वयं सक्रिय सहयोग [illegible] के माध्यम से भारी मात्रा में अर्थ संकलन करके राष्ट्र प्रहरी का दायित्व निभाया।

[illegible] ! सेवा आपका सहज स्वभाव है। सन् १९७६ से ९१ की अवधि में राजस्थान गो सेवा संघ के महामंत्री व कार्याध्यक्ष [illegible] गो सेवा, गो सम्वर्द्धन, गो रक्षा एवं कृषि विकास का कार्य अति श्लाघनीय रहा है। राजस्थान में बार-बार पड़े भीषण अकालों [illegible] रेगिस्तानी क्षेत्रों में मानव व पशु रक्षा का कार्य आपकी कर्मठता, कार्य कुशलता एवं नेतृत्व क्षमता का प्रमाण रहा है।

[illegible] ! नगर व प्रदेश के सार्वजनिक जीवन को समुन्नत करने में सदैव अग्रणी भूमिका रही है। १९६६-६८ में नगर विकास न्यास [illegible], १९७०-७१ में नगर परिषद के सदस्य, १९७२ में भारतीय जनसंघ के जिला अध्यक्ष और प्रदेश कोषाध्यक्ष और १९९१-९२ [illegible] विकास न्यास के अध्यक्ष तथा अनेकानेक जन कल्याण व विकास की गतिविधियों के रूप में जन सेवा के माध्यम से [illegible] राजनीति एवं समाज कार्य के मूल्य स्थापित किये हैं। लोक स्वराज्य की स्थापना, सर्वोदय के विचार [illegible] में सहभागिता रही है।

[illegible] ! अहिंसा, संयम और अनेकान्त का दर्शन आपके चिन्तन और चर्या में प्राणवन्त है। अहिंसा की [illegible] प्रचेता, प्रवक्ता के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

आपके समस्त अध्यवसाय की गति, शक्ति और दिशा का स्रोत समत्व का दर्शन और चरित्र है। [illegible] और सात्विकता सार्वजनिक जीवन में शुद्धता, सौम्यता और प्रियता आपकी समत्व साधना के [illegible] हैं।

आपकी उत्तम चारित्रिक विशेषता, उत्कृष्ट समाज सेवा और अप्रतिम धर्मभावना अभिनन्दनीय [illegible]

आपके अभ्युदय और निःश्रेयस की साधना की सतत वृद्धि की मंगलकामना के साथ आपको 'समाज-रत्न' [illegible] परम प्रसन्नता और गौरव का अनुभव करते हैं।

[illegible] समारोह

[illegible]

१९९३ [illegible]

सम्पर्क सूत्र

१. कन्हैयालाल लोढ़ा
अधिष्ठाता, जैन सिद्धान्त शिक्षण संस्थान
ए-९, महावीर उद्यान पथ, बजाज नगर, जयपुर-१७

२. महोपाध्याय माणकचन्द रामपुरिया
४१-डी श्यामा प्रसाद मुखर्जी रोड, कलकत्ता-७०००२६

३. नथमल लूणिया
लालजी मार्केट, पटना-८००००४

४. डॉ. महेन्द्र सागर प्रचंडिया
निदेशक, जैन शोध अकादमी
'मंगल-कलश' ३९४ सर्वोदय नगर
आगरा-रोड, अलीगढ़, २०२००१

५. डॉ. धनराज चौधरी
२ छ ५ जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४

६. डॉ. सुभाष कोठारी
प्रभारी एवं शोध अधिकारी
आगम अहिंसा-समता एवं प्राकृत संस्थान
पद्मिनी मार्ग, सुन्दरवास, उदयपुर-३१३००१

७. चम्पालाल डागा
मंत्री, श्री अ.भा. साधुमार्गी जैन संघ
नई लाईन, गंगाशहर (बीकानेर)

८. राजीव प्रचंडिया
'मंगल-कलश' ३९४ सर्वोदय नगर
आगरा रोड, अलीगढ़-२०२००१

९. डॉ. शान्तिलाल बीकानेरिया
२४ कलश मार्ग, उदयपुर-३१३००१

१०. अमृतलाल मेहता 'साहित्यरत्न'
९९१, सेन्टर-४, हिरण मगरी उदयपुर-३१३००१

११. ओंकारश्री
बागीनाडा रोड, रानी बाजार, बीकानेर

२७. तोलाराम मिन्नी
४४, दिवान रामा रोड, मद्रास-६०००८४

२८. कुसुम जैन
सम्पादिका, णाणसायर
अरिहन्त इन्टरनेशनल
२३१, गली कुंजस, दरीबा, दिल्ली-११०००६

२९. डॉ. धर्मचन्द्र जैन
व्याख्याता, डूंगर महाविद्यालय, बीकानेर

सम्पादक मण्डल

३०. डॉ. किरणचन्द नाहटा
७ ग १५, पवनपुरी दक्षिण विस्तार, बीकानेर-३३४००२

३१. उदय नागोरी
सेठिया जैन ग्रन्थालय, मरोठी मोहल्ला, बीकानेर

३२. जानकी नारायण श्रीमाली
चूनगरों का मोहल्ला, बीकानेर

संयोजक

३३.	रिखबचन्द जैन	फोन नं. ७३६३१७
	M/s तिरुपति टैक्सनिट लिमिटेड	७३४६४१
	८७६ ईस्ट पार्क रोड,	७७७६०२७
	करोल बाग	७५१८२३७
	नई दिल्ली-११०००५	७५३४६७१
	निवास-बी २८ अशोक विहार,	फोन नं. ७१७२८५३
	फेज-१, नई दिल्ली	७१२०३२६

स्वागताध्यक्ष

३४.	भंवरलाल कोठारी	फोन नं. २३४२७
	ओसवाल कोठारी मोहल्ला, बीकानेर	२७६१७

अध्यक्ष

३५.	बालचन्द सेठिया	फोन नं. २४३०३
	सेठिया मोहल्ला, भीनासर	

मंत्री

३६.	सुमतिलाल बांठिया	फोन नं. २८१६०
	भीनासर (बीकानेर)	
	आफिस—मै. राजस्थान टिम्बर सप्लाई कम्पनी	फोन नं. २३५८६
	कोट गेट के अन्दर, बीकानेर (राज.)	

अर्थ सहयोगी

१,१०१/-	श्रीमती चम्पादेवी धर्मपत्नी श्रीमान् भीखणचन्दजी बच्छावत, बीकानेर
१,१०१/-	श्रीमती सन्तोष देवी जैन धर्मपत्नी श्रीमान् रामलालजी रांका, बीकानेर
१,१०१/-	श्रीमान् विजयसिंहजी सेठिया, गंगाशहर
७०१/-	श्रीमान् भीखमचन्दजी सांड, बीकानेर
५०१/-	श्रीमान् चन्दनमलजी चम्पालालजी रामपुरिया, बीकानेर
५०१/-	श्रीमान् पानमलजी सेठिया, लाभूजी कटला, बीकानेर
५०१/-	श्रीमान् किशनलालजी आसकरणजी सेठिया, लाभूजी कटला, बीकानेर
५००/-	श्रीमान् दीपचन्दजी विजयचन्दजी पारख, बीकानेर
४,५२,६३२/-	कुल

श्री जवाहर किरणावली के प्रकाशन में अर्थ सहयोग

श्री जवाहर किरणावली की एक किरण की ११०० प्रतियाँ प्रकाशन की दर वर्तमान में ११,०००/- रु. [illegible] प्रति किरणावली १०,०००/- अतिरिक्त है। संस्था की स्वर्ण जयन्ती के अवसर पर जवाहर [illegible] की संख्या ३५ से बढ़ाकर ५० कर दी गई है तथा वर्तमान में इनके दानदाता निम्न प्रकार हैं :

दानदाता	किरण नं.	किरणावली का नाम
[illegible]/- श्रीमान् हजारीमलजी सेठिया ट्रस्ट करीमगंज, भीनासर	१६	अंजना
	१७	पाण्डव चरित भाग-१
	२५	उदाहरण माला भाग-१
	२६	उदाहरण माला भाग-२
[illegible]/- श्रीमान् शेरमलजी फतेहचन्दजी डागा ट्रस्ट, गंगाशहर	२२	संवत्सरी
	२८	नारी जीवन
[illegible]/- श्री समता युवा संघ, मद्रास	१९	बीकानेर के व्याख्यान
	२०	शालीभद्र चरित्र
[illegible]/- श्रीमान् मोतीलालजी दूगड़, देशनोक	२९	अनाथ भगवान भाग-१
	३०	अनाथ भगवान भाग-२
[illegible]/- श्रीमान् छगनलालजी वैद, भीनासर	२१	मोरवी के व्याख्यान
	२३	जामनगर के व्याख्यान
[illegible]/- श्रीमती मंजुला बेन, वड़ोदरा	४८	श्री भगवती सूत्र भाग-[illegible]
	४९	श्री भगवती सूत्र भाग-[illegible]
[illegible]/- श्रीमान् सुगनचन्दजी धोका, मद्रास	६	रुक्मिणी विवाह
	४०	सुदर्शन चरित
[illegible]/- श्रीमान् अमरचन्दजी लूणिया, भीनासर	५	सुबाहु कुमार
	१३	धर्म और धर्मनायक
[illegible]/- श्रीमती सुगनी देवी दूगड़, देशनोक	१	दिव्य दान
[illegible]/- श्रीमान् [illegible]लालजी सेठिया, भीनासर	[illegible]	दिव्य संदेश

राशि	नाम	किरण नं.	किरणावली का नाम
☐ ११,०००/-	श्रीमान् छगनमलजी सोनावत, गंगाशहर	३	दिव्य सन्देश
☐ ११,०००/-	श्रीमान् धूड़मलजी डागा, गंगाशहर	४	जीवन धर्म
☐ ११,०००/-	श्रीमान् मानमलजी गन्ना, भीम	७	जवाहर स्मारक
☐ ११,०००/-	श्रीमान् चन्दनमलजी कटारिया, हुबली	८	सम्यक्त्व पराक्रम भाग-१
☐ ११,०००/-	श्रीमान् गौतमचन्दजी कटारिया, हुबली	९	सम्यक्त्व पराक्रम भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् घीसूलालजी कटारिया, हुबली	१०	सम्यक्त्व पराक्रम भाग-३
☐ ११,०००/-	श्रीमान् सम्पतलालजी कटारिया, हुबली	११	सम्यक्त्व पराक्रम भाग-४
☐ ११,०००/-	श्रीमान् मनसुखलालजी कटारिया, हुबली	१२	सम्यक्त्व पराक्रम भाग-५
☐ ११,०००/-	श्रीमान् दीपचन्दजी भूरा, देशनोक	१४	राम वन गमन भाग-१
☐ ११,०००/-	श्रीमान् डालचन्दजी भूरा, देशनोक	१५	राम वन गमन भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् नरेशकुमारजी खिंवसरा, दिल्ली	१८	पांडव चरित भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् ताराचन्दजी भण्डारी, बैंगलोर	२४	प्रार्थना प्रबोध
☐ ११,०००/-	श्रीमान् मोहनलालजी चोरड़िया, मद्रास	२७	उदाहरणमाला भाग-३
☐ ११,०००/-	श्रीमान् तोलारामजी मिन्नी, मद्रास	३१	गृहस्थ धर्म भाग-१
☐ ११,०००/-	श्रीमान् भंवरलालजी मूथा, जयपुर	३२	गृहस्थ धर्म भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् धीरजकुमारजी बांठिया, भीनासर	३३	गृहस्थ धर्म भाग-३
☐ ११,०००/-	श्री जय धर्मेश फाउण्डेशन, मद्रास	३६	हरिश्चन्द्र तारा
☐ ११,०००/-	श्रीमान् प्रेमचन्दजी बोथरा, मद्रास	३८	जवाहर ज्योति
☐ ११,०००/-	श्रीमान् रिखबचन्दजी बैद, दिल्ली	३९	जवाहर विचार सार
☐ ११,०००/-	श्री साधुमार्गी जैन महिला समिति, गंगाशहर-भीनासर	४१	सती वसुमति भाग-१
☐ ११,०००/-	श्रीमती घीसीबाई लालचन्दजी मेहता, अहमदाबाद	४२	सती वसुमति भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् रिद्धकरणजी सिपानी, बैंगलोर	४३	भगवती सूत्र भाग-१
☐ ११,०००/-	श्रीमान् सोहनलालजी सिपानी, बैंगलोर	४४	भगवती सूत्र भाग-२
☐ ११,०००/-	श्रीमान् गोकुलचन्दजी सिपानी, बैंगलोर	४५	भगवती सूत्र भाग-३
☐ ११,०००/-	श्रीमान् भंवरलालजी दस्साणी, कलकत्ता	४६	भगवती सूत्र भाग-४
☐ ११,०००/-	श्रीमान् शांतिलालजी साण्ड, बैंगलोर	४७	भगवती सूत्र भाग-५
☐ ११,०००/-	श्रीमान् प्रकाशचन्द्रजी बेताला, बैंगलोर	५०	भगवती सूत्र भाग-८
☐ ११,०००/-	श्रीमान् पूनमचन्दजी सुराणा, पीलीबंगा	३४	सती राजमति
५,१८,०००/-	कुल		

	किरण नं.	किरणावली का नाम
श्री जवाहर विद्यापीठ, भीनासर	३७	शकडाल पुत्र
श्रीमती राजकुंवर बाई मालू, बीकानेर	३५	सती मदनरेखा

...र्व में श्रीमती राजकुंवर बाई मालू धर्मपत्नी स्व. डालचन्दजी मालू बीकानेर द्वारा जवाहर साहित्य ... लिए एक साथ रु. ६०,०००/- प्रदान किये गये थे जिनसे पूर्व में लगभग सभी किरणावलियाँ उनकी ... प्रकाशित होती थी। सत्साहित्य प्रकाशन के लिए बहिनश्री की अनन्यनिष्ठा चिरस्मरणीय रहेगी। □
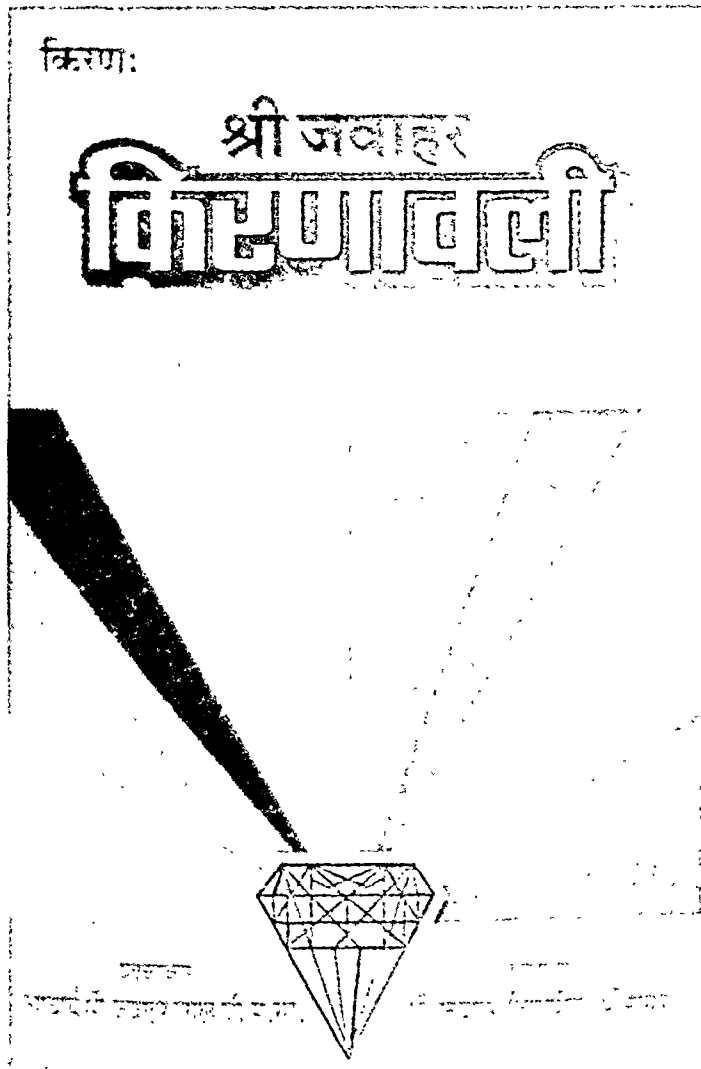
श्री जवाहर किरणावली के मुखपृष्ठ का प्रारूप

श्री स्वर्गीय जैनाचार्य १००८ पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. की स्मृति में संस्था कायम करने के लिए चन्दा हुआ (संवत् २०००)

बीकानेर से

११,१११/-	श्री अगरचन्दजी भैरूदान जी सेठिया
२,५०१/-	श्री सोभागमलजी जयचन्दलालजी रामपुरिया
१,५०१/-	श्री अजीतमलजी पीरदानजी पारख
१,५०१/-	श्री चान्दमलजी नथमलजी दस्साणी
१,२००/-	श्री सोभागमलजी शिवरतनजी गोलछा
१,१०१/-	श्री नेमचन्दजी नथमलजी भन्साली
१,१०१/-	श्री कस्तूरचन्दजी उत्तमचन्दजी छाजेड़
१,००१/-	श्री मगनमलजी गणेशमलजी कोठारी
१,००१/-	श्री छोगमलजी जुहारमलजी डागा
१,००१/-	श्री जेठमलजी फूसराजजी बच्छावत
१,००१/-	श्री मगनमल जी पारख
१,००१/-	श्रीमती आसीबाई धर्मपत्नी सोभागमलजी रांका
७०१/-	श्री कन्हैयालालजी भंवरलालजी कोठारी
७०१/-	श्री लिखमीचन्दजी चतरभुजजी शाह बोथरा
७०१/-	श्री अभैराजजी सुन्दरलालजी बच्छावत
७०१/-	श्री रावतमलजी बोथरा की धर्मपत्नी
५०१/-	श्री मेहता बुधसिंह जी बैद
५०१/-	श्री गोविन्दरामजी भन्साली
५०१/-	श्री भीखमचन्दजी भन्साली की माजी
५०१/-	श्री अभैराजजी मुन्नीलालजी खजान्ची
५०१/-	श्री पानमलजी इन्दरचन्दजी कोठारी

श्री दीपचन्दजी भीखमचन्दजी बच्छावत

श्री लाभचन्दजी चम्पालालजी नाहटा

श्री पूनमचन्दजी घासीलालजी सेठिया

श्री भैरूमलजी सुराणा

श्री अणंदमलजी सुन्दरलालजी पारख

श्रीमती रतनबाई धर्मपत्नी पूनमचन्दजी बच्छावत

श्री जेठमलजी हीरालालजी मुकीम

श्री पन्नालालजी हजारीमलजी सोनावत

श्री लालचन्दजी मोहनलालजी चोरड़िया

श्री नेमचन्दजी कुनणमलजी सेठिया

श्री छोटमलजी नेमचन्दजी सेठिया

श्री जेठमलजी भंवरलालजी पारख

श्री चन्दनमलजी आसकरणजी रामपुरिया

श्री रेखचन्दजी लूनकरणजी गेलड़ा

श्री केशरीचन्दजी भंवरलालजी मुकीम

श्रीमती छगनबाई धर्मपत्नी पानमलजी नाहटा

श्री हजारीमलजी पारख

श्री मांगीलालजी डागा

श्री छगनमलजी जेठमलजी खटोल

श्री कन्हैयालालजी मालू

श्री रामलालजी झावक

श्री पीरदानजी प्रेमचन्दजी चोपड़ा

श्री सतीदासजी तातेड़

श्री फूलचन्दजी डालचन्दजी पूगलिया

श्री मानमलजी दस्साणी

श्री जेठमलजी पटवा

श्री सुगनचन्दजी भैरूदानजी बोथरा

श्री [illegible] कोचर

श्री छिगनलालजी आसकरणजी सेठिया

श्री [illegible] पूनमचन्दजी

श्री स्वर्गीय जैनाचार्य १००८ पूज्य श्री जवाहरलाल जी म. सा. की स्मृति में संस्था कायम करने के लिए चन्दा हुआ (संवत् २०००)

बीकानेर से

११,१११/- श्री अगरचन्दजी भैरूदान जी सेठिया
२,५०१/- श्री सोभागमलजी जयचन्दलालजी रामपुरिया
१,५०१/- श्री अजीतमलजी पीरदानजी पारख
१,५०१/- श्री चान्दमलजी नथमलजी दस्साणी
१,२००/- श्री सोभागमलजी शिवरतनजी गोलछा
१,१०१/- श्री नेमचन्दजी नथमलजी भन्साली
१,१०१/- श्री कस्तूरचन्दजी उत्तमचन्दजी छाजेड़
१,००१/- श्री मगनमलजी गणेशमलजी कोठारी
१,००१/- श्री छोगमलजी जुहारमलजी डागा
१,००१/- श्री जेठमलजी फूसराजजी बच्छावत
१,००१/- श्री मगनमल जी पारख
१,००१/- श्रीमती आसीबाई धर्मपत्नी सोभागमलजी रांका
७०१/- श्री कन्हैयालालजी भंवरलालजी कोठारी
७०१/- श्री लिखमीचन्दजी चतरभुजजी शाह बोथरा
७०१/- श्री अभैराजजी सुन्दरलालजी बच्छावत
७०१/- श्री रावतमलजी बोथरा की धर्मपत्नी
५०१/- श्री मेहता बुधसिंह जी बैद
५०१/- श्री गोविन्दरामजी भन्साली
५०१/- श्री भीखमचन्दजी भन्साली की माजी
५०१/- श्री अभैराजजी मुन्नीलालजी खजान्ची
५०१/- श्री पानमलजी इन्दरचन्दजी कोठारी

१०१/-	श्री रामरतनजी कोचर की धर्मपत्नी
१०१/-	श्री माणकचन्दजी गोलछा
१०१/-	श्री पीरदानजी सुराणा
१०१/-	श्री बनेचन्दजी मुकीम
१०१/-	श्री सुभागमलजी कोठारी
१०१/-	श्री नथमलजी लोढ़ा
१०१/-	श्री कन्हैयालालजी कोठारी की बहन
१०१/-	श्री मूलचन्दजी डागा की माजी
१०१/-	श्री रतनलालजी दस्साणी की माजी
१०१/-	श्री सुन्दरलालजी तातेड़ की माजी
१०१/-	श्री छगनमलजी बांठिया की धर्मपत्नी
१०१/-	श्रीमती गोमती झाबकण
१०१/-	श्रीमती मगनबाई धर्मपत्नी जेठमलजी सेठिया
८३४/-	श्री खुदरा चंदे से आया
४०,००३/-	कुल

गंगाशहर से

५,००१/-	श्री अगरचन्दजी घेवरचन्दजी बोथरा
२,५०१/-	श्री चतरभुजजी हड़मानमलजी बोथरा
२,५०१/-	श्री आसकरणजी हंसराजजी बोथरा
२,५०१/-	श्री तनसुखदासजी रावतमलजी बोथरा
१,१०१/-	श्री चुन्नीलालजी भंवरलालजी बोथरा
५०१/-	श्री जोरावरमलजी रामचन्द्रजी सुराणा
५०१/-	श्री कुशलचन्दजी नेमचन्दजी पींचा
५०१/-	श्री चुन्नीलालजी दीपचन्दजी बोथरा
५०१/-	श्री हीरालालजी महेशदासजी पींचा
५०१/-	श्री चुन्नीलालजी हरखचन्दजी बोथरा
४०१/-	श्री बखतावरमलजी छगनमलजी सोनावत
३०१/-	श्री सेरगल जी चान्दमलजी डागा
३०१/-	श्री कस्तूरचंदजी मनसुखदासजी बोथरा

१५१/-	श्री लाभचन्दजी लूनकरणजी रामपुरिया
१०१/-	श्री बखतावरमलजी मुन्नीलालजी लूणावत
१०१/-	श्री जीवणमलजी अखेचंदजी पुगलिया
१०१/-	श्री जुहारमलजी भोमराजजी पुगलिया
१०१/-	श्री जेठमलजी दानमलजी रामपुरिया
१००/-	श्री खेमचन्दजी छगनमलजी सेठिया
१००/-	श्री तोलारामजी रामलालजी बांठिया
१००/-	श्री भींवराजजी सेठिया
५६८/-	श्री खुदरा चन्दे से आया
२४,२४६/-	
१५१/-	श्री रूपरामजी लक्ष्मणदासजी बांठिया, पीलीबंगा
११२/-	श्री विरधीचन्दजी पांचीलालजी, ब्यावर
१०१/-	श्री गुलाबचन्दजी आसकरणजी फूलफगर, अलाय
१०१/-	श्री कपूरचन्दजी संचेती, दिल्ली
२०८/-	श्री खुदरा अलाय से
२४७/-	श्री खुदरा ब्यावर से
८३/-	श्री खुदरा अन्य स्थानों से
१००३/-	

विज्ञापन

'परमात्मा से भेंट करने का सीधा मार्ग उसका भजन करना है'

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

भीखाराम चाँदमल

भुजियावाला

स्वादिष्ट और कुरमुरी भुजिया का खास स्वाद

Mfg. by—

Sun Shine Food Products

F 88-89, Bichhwal Ind. Area, BIKANER-334005

Factory : 61074

मेरे जीवन के कण-कण में जिनकी है जयकार।
जिनके नाम स्मरण से ही स्वप्न होते हैं साकार।।
ऐसे समता विभूति मेरे गुरु आचार्य श्री नानेश।
श्रद्धा सुरति, सुमन, अर्चन, गुरुवर करो स्वीकार।।
—धनराज बोथरा

With best Compliments from :

DHANRAJ PUKHRAJ BOTHRA
BOTHRA MOTOR FINANCE LTD.
BOTHRA FINANCE CORPORATION
BOTHRA HIRE PURCHASE CO.

Taslim Market, H. B. Road, GUWAHATI-781 001
Phone : (O) 542151, 548073, 34140 (R) 547262, 522114

BOTHRA ENTERPRISES
AMIT & CO.

6/641 Ajanta Shoping Centre, Ring Road, SURAT-2
Phone : 628841

(Financier of Motor Vehicles)

Phone : 35038 (S) 31039 (R)
INDUSTRIAL TRADERS
M. B. Market, A. T. Road,
GUWAHATI-781009

Phone : 21650 (S) 20957 (R)
INDUSTRIAL TEKNOKOM
H. O. KACHARIGAON
J. N. ROAD, TEZPUR-784001
B. O. 40B Princep Street
3rd Floor, CALCUTTA-1
Phone : 260050 (S) 217390 (R)

...ो है, वह अन्दर से पैदा होता ...
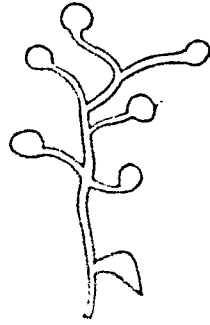
—श्रीमद् जवाहराचार्य

[illegible] सुरेन्द्रकुमार सेठिया

SETHIA SUPARI

सुखी वही है जिसने ममता पर विजय प्राप्त कर ली है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :
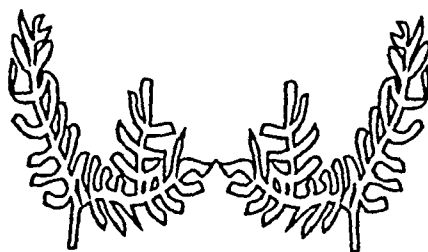
M/s BHIKHAMCHAND DWIPCHAND BHURA

SAGAR ESTATE

2, CLIVE GHAT STREET, CALCUTTA-700001
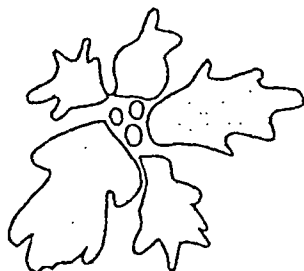
सभी धर्म महान् हैं किन्तु मानव-धर्म उन सबमें सर्वोपरि है।

-श्रीमद् जवाहराचार्य

महान् क्रान्तिकारी युगदृष्टा आचार्य श्री जवाहर की
पावन स्मृति में स्थापित श्री जवाहर विद्यापीठ के
स्वर्ण जयन्ती समारोह पर
सेठिया परिवार के सद्भाव सहित

श्री अगरचन्द भैरोंदान सेठिया जैन पारमार्थिक संस्था
बीकानेर
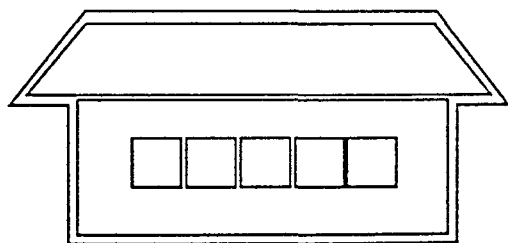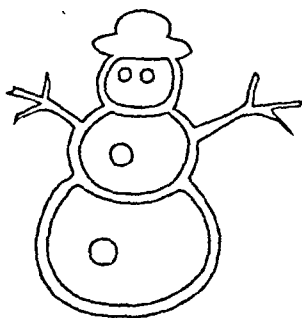
जिसकी आत्मा में तेज नहीं है उसके शरीर में दीप्ति होना कैसे सम्भव है?

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

Jeetmull Jaichandlall (Madras) Private Limited

Manufacturers, Exporters & Importers of All Kinds of Wire & Wire Products

32, Nyaniappa Naicken Street, 2nd Floor, MADRAS-600 003 Tamil Nadu, India

Phone : 564651, 564652, 564653 Grams : JAYJAYLAL

Fax No. 044 565415

Our Associates

Amar Industrial Corporation

Regd. Dealers of

Tata Iron Steel Company Limited
Steel Authority of India Limited
Rashtriya Ispat Nigam Limited

18, Sembudoss Street, 1st Floor, MADRAS 600 001

Phone : 5223799, 5227587, 5228928

Grams : CHOURARIA Fax : 044 565415

Branches at

2/13, B.V.K. Iyenger Road, **Bangalore 53** Phone : 2262484

510, Giriraj, Sant Tukaram Road, Carnac Bunder, **Bombay-9** Phone : 3446142

138, Rashtrapati Road, **Secunderabad-3** Phone : 830040

Head Office

33, Brabourne Road, 5th Floor, **Calcutta** 700 001

Phone : 2427629, 2424361 Grams : CHOURARIA

धर्म की नींव नीति है। नीति के बिना धर्म की प्रतिष्ठा नहीं हो सकती।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

कोचर परिवार की शुभकामनायें :
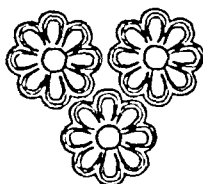
जितेन्द्र कोचर

एवं

अजित कोचर एंड कम्पनी

मेम्बर्स : कलकत्ता स्टाक

एक्सचेंज एसो. लिमिटेड

कोचर एंड कम्पनी

गुवाहाटी, जयपुर, भुवनेश्वर

दौलत सिक्यूरिटीज लि.

कलकत्ता, अमृतसर, जयपुर

❑ सोहनलाल कोचर

एडवोकेट

❑ अनिल कोचर

एडवोकेट

❑ नरेन्द्र कोचर

एफ. सी. ए. (चार्टर्ड अकाउन्टेंट)

जिस मनुष्य का आत्मविश्वास प्रगाढ़ हो जाता है, उसके लिए ऐसा कोई काम नहीं रहता जिसे वह कर न सकता हो।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

ACHALDAS MOHANLAL MUTHA

Achal Niwas

C-11, Raja Park, JAIPUR-302004 (Raj.)

आत्मवली के सामने अग्नि ठंडी हो जाती है, शस्त्र निकम्मा हो जाता है और विष अमृत बन जाता है। —श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

Homoeopathic Medicines

The success of a Homoeopathic Doctor is much depended on the Genuineness of the Medicines & Accuracy of their Potencies. Our whole energy is devoted to maintain the highest standard of quality with fairness of dealings. **We are the direct Importers** & Medicines of world-fame homoeopathic manufacturers of India & abroad are stocked by us in wide range. Trial for once is solicted for Wholesale & Retail of Homoeopathic, Biochemic Medicines, Books & Sundries etc.

RAJASTHAN HOMOEO STORES

Dhadda Market, Johari Bazar, JAIPUR-302 003 (Raj.)
Phone : 564010, 564684 (O), 372566 (R)

Prop. : Dr. Sampat Kumar Jain

Sister Concern :

STEADCURE HOMOEO PHARMACEUTICALS

Homoeopathic Medical College Campus
[illegible] Marg, Opp. Sindhi Camp Bus Stand, JAIPUR-302 006 (Raj.)

Prop. : Dr. Tarkeshwar Jain

ऋद्धि का बीज पुरुषार्थ है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

सज्जनसिंह सुरेन्द्रसिंह कर्नावट

कुन्दीघर भैरों का रास्ता

जौहरी बाजार, जयपुर-३०२००३

परिवर्तन में ही गति है, प्रगति है, विकास है, सिद्धि है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

शान्ता सेल्स कारपोरेशन

२ ख २३ जवाहर नगर, जयपुर-३०२००४

एक विकार ही दूसरे विकार का जनक होता है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :
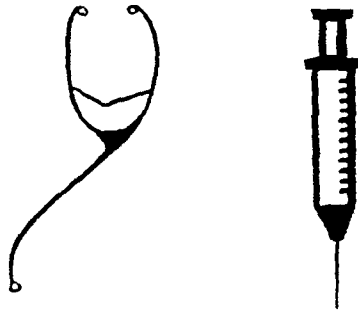
SAMPAT NURSING HOME

No 4-5 Nachiappa Street, (off Kutchery Road)

Mylapore, MADRAS-600 004

Phone : 846572, 846578, 846580, 847602, 843909

[illegible] Transplant, Medical, Surgical Maternity, Endoscopy, Colonscopy, Dialysis

Dr. H. C. DHARIWAL

S/o Shri Sampat Muni Ji Ma Sa

[illegible] Ma Sa

परिग्रह समस्त दुःखों का कारण है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

TOLARAM MINNY

44, Dewan Rama Road, MADRAS-600084

Phone : 6412552

क्रोध आत्मा के समस्त शुभ गुणों को भस्म कर देता है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

Gisulal Hamermal & Co.

Non-Ferrous Metal Merchants

Dealers in : Copper Wire, Rods, D.C.C. Strips &

Stockists of Super Enamelled Wires etc.

14, 1st Sutar Gally, Null Bazar, Bombay-400 004

Phone : 386 2344, 353138, 3882919
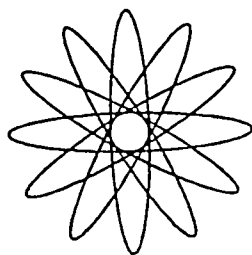
मन ही बन्ध और मोक्ष का प्रधान कारण है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

Chandaliya

AMOLAK CHAND MANAK CHAND JAIN

No. 11, Semiamman Koil Street, V. O. C. Nagar Tandiyarpet, MADRAS-600081

Phone : 555006

अवगुण देखने हैं तो अपने ही अवगुण देखो।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

CHHALANI PLASTIC INDUSTRIES

(Dealers in : Waste Plastic Scraps Grindings)

(Manufacturers of : Re-proceeds Granules)

43, Cochan Basin Road, Stanly Nagar, MADRAS-600 021

Phone : Off. 556593

जहां परिग्रह है वहां आलस्य है, अकर्मण्यता है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :
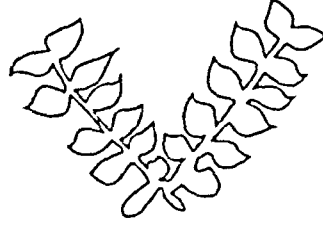
ज्ञान रहित दया और दया रहित ज्ञान सार्थक नहीं हैं।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

प्रेमचन्द उदयचन्द प्रकाशचन्द कोठारी

पीतलियों का चौक, जौहरी बाजार, जयपुर

जो जितना अधिक परिग्रही है वह धर्म से उतना ही दूर है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :
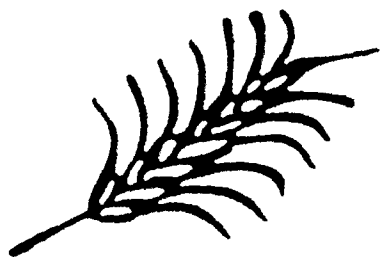
रतन चम्पा चैरिटी ट्रस्ट

[illegible] (राज.)

जहां जितना अधिक ममत्व है वहां उतना ही अधिक दुःख है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

SUMAN WOOLLEN MILLS

44, Industrial Area, BIKANER-334 001

Manufacturer of All Kinds of Woollen Carpet Yarns

Phone : Off. 71015, Resi. 24049

इन्द्रियानन्द स्वाभाविक सुख का विकार है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

Shree Woollen Industries

43-A, Industrial Area, BIKANER-334 001

Phone : Fact. 61481 Resi. 61081, 25192

Sister Concern :

Kothari Woollens Private Ltd.

117, Industrial Area, BIKANER

Phone : 71860

जो धर्म मानव के प्रति तिरस्कार उत्पन्न करता है, वह धर्म नहीं है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

BIKANER WOOLLEN MILLS (PVT.) LTD.

1-B, Industrial Area, BIKANER

Fax : 0151-61256

Phone : 71204, 25973, Resi. 24857

जहां तक समानता का आदर्श जीवन में नहीं उतरता, आत्मा की पहचान नहीं होती।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

DHARIWAL AND COMPANY

K. E. M. Road, BIKANER

Phone : Off. 28386, 27241 Resi. 61265, 23412

जव तक राग और द्वेष के वीज मौजूद हैं तब तक कर्म के अंकुर फूटते ही रहते है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

ओसवाल ट्रेडर्स

(झावकजी की दुकान)

कोट गेट, वीकानेर (राज.)

डीलर—नेरोलक, एशियन, जे. पी. गोल्ड पेन्ट्स

फोन : घर २५९४२

संकल्प शक्ति का विकास करना ही आध्यात्मिक विकास है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

[illegible]

डूंगरमल भंवरलाल प्रकाशचन्द प्रदीपकुमार दस्साणी

वीकानेर दिल्ली कलकत्ता

परिग्रह आत्मा पर लदा हुआ बोझ है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

होटल श्री शान्ति निवास

गंगाशहर रोड, बीकानेर

कामनाहीन वृत्ति वाले के लिए सिद्धि दूर नहीं रहती।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

बीकानेर शहर का आधुनिक साज-सज्जा से युक्त सिनेमा

प्रकाश चित्र

दाऊजी रोड, बीकानेर

राजस्थान का प्रथम फव्वारों से सुसज्जित स्क्रीन

फोन : २४८५० तार : तामरा
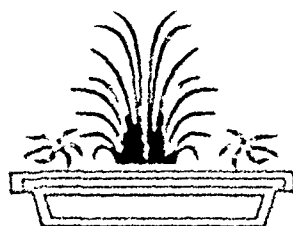
लौकिक धर्म से शरीर की और विचार की शुद्धि होती है और लोकोत्तर धर्म से अन्तःकरण एवं आत्मा की।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

श्री जवाहर विद्यापीठ की स्वर्ण जयन्ती पर हार्दिक शुभकामनाएँ :

धीरजलाल सुमतिलाल बाँठिया

ईमारती लकड़ी मुख्यतः सागवान, शीशम, बन्सम, चीड़, सफेदा आदि के व्यापारी
एवं लकड़ी चिराई हेतु आरा मशीनों की सुविधा उपलब्ध है।

मै. राजस्थान टिम्बर सप्लाई कं.

कोटगेट के अन्दर

बीकानेर-३३४००५

फोन : ऑफिस २३५८९ घर २८१६०

SASWANI WOOLLEN MILLS

MANUFACTURERS ▫ IMPORTERS ▫ EXPORTERS

72, Industrial Area, BIKANER-334 001 (INDIA)

Cable : 'SASWOOL' Phone : Mill 27163, Resi. 61063

Telex No. 3505-219-SASWANI IN

With best Compliments from :

ALLIED Fibres & Textiles Corporation (Unit No. 1)

Mfrs. & Spinners of Carpet Woollen Yarn

Mills : 20, Industrial Area, BIKANER-334 001

Phone : 23154, 26354

With best compliments from :

P. H. INDUSTRIES

Manufacturers Suppliers of : Carpet Woollen Yarn

[illegible] Area, BIKANER-334 001 (Raj.)

[illegible] Off [illegible], 27430 [illegible] 24257, [illegible]

SOVERIGN UDYOG

[illegible]

With best Compliments from :

Allied Fibres & Textiles Corporation
(Unit No. 2)
67-68, Industrial Area, BIKANER-334001
Phone : 24753

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

विजयचंद विनोदकुमार
महात्मा गॉधी मार्ग, बीकानेर
विपुल कलर एंड केमिकल्स
एफ १८१, बीछवाल इण्डस्ट्रीयल एरिया, बीकानेर
Phone : Off. 26189 Resi. 25989 Fac. 28456

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

RUGHLAL NEMCHAND
Cloth Merchants
Sarafa Bazar, BIKANER-334 001 Phone : 27785

सम्बन्धित फर्म :

शिखरचन्द जैन
१६, मेमन मार्केट, बीकानेर फोन : २६११४

अशोक सिल्क मिल्स
४०७२ महावीर टेक्सटाईल्स मार्केट, सूरत फोन : ६३२८३५

With best Compliments from :

A WELL WISHER

With best Compliments from :

BIKANER SUPPLY CENTRE

Mahatma Gandhi Road, BIKANER Phone : 24220

Authorised Sales & Service Centre : Bajaj Electricals Ltd.

Govt. Suppliers - Dealer in Cloth, Paints, Electrical Appliances Accessories, Pipe & Sanitary Fittings

Authorised Dealers : Asian Paints (I) Ltd., Bajaj Electricals Ltd., Den Sons Engineers, Garware Paints, Shri Ram Refrigeration Industries Ltd., Rotomould (India), MCE Products, STP Ltd., Weston Electronics Ltd.

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

आधुनिक फैन्सी साड़ियों के विक्रेता

मै. मनपसन्द

जैन मार्केट, बीकानेर फोन : २४४२७

साड़ी मेचिंग सामग्री का सम्पूर्ण संग्रह

मै. रंगोली

जैन मार्केट, बीकानेर

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

सेठिया एण्ड सन्स

महात्मा गांधी रोड, बीकानेर (राज.)

With best Compliments from :

Jenson & Nicholson (India) Ltd.

The Most Trusted Name in Paints

Authorised Stockist : **Mool Chand Parakh & Co.**

BIKANER

Our Best Wishes for Golden Jubilee Celebration of Shri Jawahar Vidyapeeth

VIJENDRA ENTERPRISES

Behind Jain Market, K. E. M. Road, BIKANER-334001
Phone : 71433

Authorised Dealers :

Asian Paints ❑ Nerolac Paints ❑ Jaypee Gold Paints

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

बाँठिया पेन्ट्स एण्ड हार्डवेयर्स

११, गिरीराज कटरा, के. ई. एम. रोड, बीकानेर (राज.)

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

धन्नानी एण्टरप्राइजेज

रानी वाजार, वीकानेर-३३४००१

हार्दिक शुभकामनाओं सहित :

श्री राम सॉ मिल्स

रानी वाजार, पट्टी पेड़ा, वीकानेर

फोन : ६१०४९

With best Compliments from :

Textile Merchant

DINESH & CO.

Janiganj Bazar, SILCHAR-788001
Dist. CACHAR (Assam)

With best Compliments from :

SHREE LAXMI TEXTILES

Dealing in Hosiery, Readymade Garments etc.
Dewanji Bazar, SILCHAR-788001
Dist. CACHAR (Assam)
Phone : 22406

With best Compliments from :

Motor Financier

SOHANLAL SURANA & SONS

Fatak Bazar, SILCHAR-788001
Dist. CACHAR (Assam)
Phone : 21564

With best Compliments from :

Cloth Merchants

M/s SURAJMAL JIVARAJ

Nazirpatty, SILCHAR-788001
CACHHAR
Phone : 20682

मानव धर्म वह है जिस पर साम्प्रदायिकता का रंग नहीं चढ़ा है।

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

P G FOILS LIMITED

OFFERS YOU

A PERFECT COMBINATION OF
TECHNOLOGY AND ART FOR ALL YOUR
FOIL PACKAGING NEEDS

P G Foils Limited, is flagship company of Prem Group is equipped with the most modern Aluminium Foil producing machinery, latest knowhow and are experts of the trade in India with a turnover of approx. 50 crores. PREM GROUP is engaged in manufacturing of AAC & ACSR Conductors, Properzi Rod, Machines, Co-Extruded Polyethiylene Films with a total group turnover of Approx. 100 Crores.

P G Foils is supplying its products to almost all Multinational Companies meeting their needs of flexible packaging applications, be it powders, tablets, capsules, injectables, sutures, cigrettes, tea, soaps, biscuits, toffee, foods, oils, chemicals, beverages, etc.

For Expansion-cum-modernisation, P G Foils Ltd. is coming with a PUBLIC ISSUE in near future.

HO & Works

Pipalia-Kalan,
PIN 306307
RAJASTHAN
Phone : (02937)2405/7244
Fax : (02937)7255

Regd. & Sales Office

6, Neptune Tower,
Ashram Road,
AHMEDABAD-380009
Phone : 407606/409803

Sales Offices

BOMBAY Ph. 2017497
DELHI Ph. 7533490
CALCUTTA Ph. 268495
MADRAS Ph. 422022
JAIPUR Ph. 68623

Chitra Chitra Chitra, Bathra

जिसकी आत्मा में तेज नहीं है उसके शरीर में दीप्ति होना कैसे सम्भव है ?

—श्रीमद् जवाहराचार्य

With best Compliments from :

P G FOILS LIMITED

Regd. Office : 6, Neptune tower Ashram Road, Ahmedabad-380 007
Head Office : P.O. Piplia Kalan, Distt-Pali 306307
Phone : (02937) 2405, 7242 Fax. 02937-7255

MANUFACTURERS OF

All type of Aluminium Foil & Foil Laminates

Plain & Printed Foils ❑ Blister Pack Foil ❑ Heavy & Light Gauge Foils ❑ Tagger Foil ❑ Plain & Printed Tagger Foil ❑ Convertor Foils ❑ Caserole Tray for use in Travelling ❑ House Foil for kitchen use ❑ Cigarette Foil ❑ Board & Paper Foil ❑ Decorative Foil ❑ Butter, Cheese & Toffee wrap Foils ❑ Glassine Poly ❑ Tripple Laminate Foil with Polyster & Poly

Exporting Aluminium Foils & Laminates to various countries

Shortly come in Public with a Premium Issue to finance the Expansation-Cum-Modernisation Scheme.

Chitra

SALES OFFICES

Chitra

BOMBAY

Neelam Building, 80, Marine Drive, Bombay-400002
Phone : 2033448

DELHI

5965/87 South Basti, Harphool Singh, Sadar Thana Road, Delhi-110006
Phone : 722544, 736487

MADRAS

37, Arcot Road, Madras-600026
Phone : 422022, 429161

CALCUTTA

Mr. V. D. Agarwal, 12-A, Maharaja Nand Kumar Road, Calcutta-700 029
Phone : 667699

गौतमचन्द लालचन्द